शिक्षा मंजरी

राम का रामत्व–विशेषांक |2023

भारतीय शिक्षण मंडल, ब्रज प्रान्त

कार्यालय : 173, वीर सावरकर नगर, माधव भवन, जयपुर हाउस, आगरा (उत्तर प्रदेश)

भ्रमण ध्वनि (मोबाइल): 759924405

ईमल : *bsmbraj@gmail.com* **जाल स्थल :** *www.bsmbharat.org*

भारतीय शिक्षण मंडल – एक परिचय

भारतीय शिक्षण मंडल शिक्षा में पुन: भारतीयता प्रतिष्ठित करने में कार्यरत एक अखिल भारतीय संगठन है। राष्ट्रीय पुनरुत्थान के लिये प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक संपूर्ण शिक्षा को भारतीय मूल्यों पर आधारित, भारतीय संस्कृति की जड़ों से पोषित तथा भारत केंद्रित बनाने हेतु नीति, पाठ्यक्रम तथा पद्धति में भारतीयता को लाने के लिये आवश्यक अनुसंधान, प्रबोधन, प्रशिक्षण, प्रकाशन और संगठन करना भारतीय शिक्षण मंडल का ध्येय है।

1. **अनुसंधान**– भारत की अति प्राचीन परंपरा में निहित ज्ञान को वर्ममान समय में प्रयोग करने हेतु गहन शोधकार्य आवश्यक है। भारतीय ज्ञानपरंपरा पर आधारित अनुसंधान का कार्य शिक्षा की सभी शाखाओं में देश के विभिन्न भागों में चल रहा है। भारतीय शिक्षण मंडल द्वारा देश के विविध विश्वविद्यालयों तथा शोध संस्थानों में शोध छात्र मार्गदर्शकों के लिए Research for Resurgence (पुनरुत्थान के लिए अनुसंधान) विषय पर कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है।

2. **प्रबोधन**– शिक्षा क्षेत्र में नीति–निर्धारक व्यक्ति, संस्थायें, शिक्षाविदों, अध्यापकों तथा जन साधारण के जागरण का कार्य प्रबोधन के अंतर्गत आता है।

3. **प्रशिक्षण**– स्वावलंबी, प्रभावी तथा आत्मगौरव से ओतप्रोत शिक्षकों का निर्माण करने में ही अपेक्षित सुधार संभव है। इस प्रकार के शिक्षक और समाज का मन तैयार करने के लिए संस्थाचालक परामर्श, शिक्षक स्वाध्याय, विद्यार्थी विासन तथा अभिभावक उद्‌बोधन की कार्यशालायें आयोजित की जाती है।

4. **प्रकाशन**– हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, कन्नड़, तेलगू, असमिया व पंजाबी भाषा में मासिक, द्वैमासिक, त्रैमासिक पत्रिकायें, धर्मपाल साहित्य तथा सामाजिक विषयों पर पुस्तिकायें प्रकाशित करना भारतीय शिक्षण मंडल के कार्य का एक महत्वपूर्ण भाग है। वैचारिक वार्षिकी 'दर्शन', 'शिक्षा मंजरी' का प्रकाशन ज्ञान आयोग, मूल्य शिक्षा, धारणक्षम विकास हेतु शिक्षा, धर्माधिष्ठत समाज व्यवथा के लिए शिक्षा इन विषयों पर हुआ है। सभी स्तरों के लिये पूरक पाठ्यक्रमों का प्रकाशन भी किया जाता है। मंडल के सभी प्रकाशनों का ISBN तथा मराठी मासिक को ISSN मानक प्राप्त है।

5. **संगठन**– देश के 24 राज्यों में भारतीय शिक्षण मंडल की इकाईयाँ हैं। शिक्षा में रुचि रखने वाले सभी लोगों के लिए साप्ताहिक 'मंडल' तथा विषय के विशेषज्ञों के लिए 'अध्ययन समूह' का गठन किया गया है। स्थायी सदस्यता 5000/– रु., विद्यार्थी वार्षिक सदस्यता 200/–रु., व्यवसायी वार्षिक सदस्यता 500/–रु. तथा संस्थागत सदस्यता 10,000/–रु . है।

6. **युवा आयाम**– युवाओं में राष्ट्रभक्ति के साथ ही राष्ट्रगौरव का भाव जागृत करने तथा युवाओं की प्रतिभा और उत्साह को राष्ट्र सम्पर्ण हेतु बौद्धिक योद्धा तैयार करने के उद्‌देश्य से भारतीय शिक्षण मंडल ने युवा आयाम प्रारम्भ किया है।

7. **गुरुकुल प्रकल्प**– भारतीय शिक्षण मंडल की मान्यता है कि गुरुकुल व्यवस्था शिक्षा की सनातन और स्थापित व्यवस्था है। वर्तमान में यह पद्धति युगानुकूल होकर भविष्यानमुखी पद्धति का रूप धारण कर रही है तथा शिक्षा जगत की सम्पूर्ण समस्याओं और चुनौतियों का सामना करने में सक्षम सिद्ध हो रही है। इसलिए भारतीय शिक्षण मंडल आदर्श गुरुकुल तथा समाजपोषित शिक्षा व्यवस्था स्थापित करने की दिशा में प्रयासरत है।

शिक्षा मंजरी

राम का रामत्व – विशेषांक 2023

वर्ष : 2023 | अंक : 8 | संवत् : 2080

संरक्षक मंडल

आचार्य मनमोहन वैद्य

डॉ. सच्चिदानंद जोशी

श्री बी.आर. शंकरानंद

परामर्शदाता

डॉ. भरत शरण सिंह

इं. अमित रावत

डॉ. बैजराम कुकरेती

प्रधान संपादक

डॉ. अंशु मंगल

संपादन मंडल

डॉ. अनुज पाराशर

डॉ. विजेन्द्र प्रताप सिंह

डॉ. केशव कुमार शर्मा

प्रसार विभाग

कृष्ण पाल सिंह फौजदार (आगरा)

यश सक्सैना (एटा)

डॉ. मुकेश कुमार शर्मा (अलीगढ़)

डॉ. दीपक कुमार सिंह (शाहजहांपुर)

डॉ. धर्मेन्द्र सिंह तोमर (मथुरा)

डॉ. आशुतोष प्रिय (बरेली)

डॉ. संजीव राठौर (बदायूँ)

डॉ. सुधीर शर्मा (पीलीभीत)

अनुक्रमाणिका

क्रम सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	संदेश	—	
2.	संपादकीय	—	
3.	सामाजिक समरसता के नायक 'राम'	प्रो. प्रदीप श्रीधर	08
4.	शरणागतवत्सल प्रभु श्रीराम	डॉ. सुधीर शर्मा	11
5.	रामायण एवं रामचरितमानस का तुल्नात्मक अध्ययन	डॉ. ममता रानी	12
6.	श्रीरामकालीन अर्थव्यवस्था एक विश्लेषण	डॉ. रूचि द्विवेदी	16
7.	श्रीराम का जीवन और रामत्व	डॉ. नेहा गोस्वामी	19
8.	श्रीराम की दृष्टि में माता कैकयी	कामिनी शर्मा	21
9.	रामचरितमानस और हिन्दी साहित्य का वैश्विक महत्व	डॉ. विजेन्द्र सिंह	23
10.	मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का जीवन दर्शन	प्रो. दिग्विजय शर्मा	27
11.	राम कथा के कुछ अनूठे लोक काव्य	डॉ. प्रशांत अग्निहोत्री	30
12.	तुलसी काव्य में पर्यावरण बोध	डॉ. दुर्गेश शर्मा	33
13.	श्रीराम मन्दिर स्थापत्य	डॉ. सुधीर कुमार शर्मा	37
14.	विद्या एवं गुरु	इं. अमित रावत	38
15.	महिला सशक्तिकरण एक अनछुआ पक्ष	प्रो. कामिनी शर्मा	40
16.	उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उभरती नूतन प्रवृत्तियाँ	मनीष पटेल	42
17.	भारतीय संस्कृति और जीवन	श्रीमती नीलेश	44
18.	शिक्षा में भारतीयता के तत्व	श्रीमती अमिता शर्मा	49
19.	भारतीय मूल्य एवं संस्कृति एक विश्लेषणात्मक रूपरेखा	डॉ. प्रिया	50
20.	भारत में मूल्य शिक्षा प्रणाली	डॉ. विजेन्द्र प्रताप सिंह	54
21.	श्रीराम मन्दिर आन्दोलन संक्षिप्त परिचय	कौशल जसवानी	59
22.	श्रीराम का जीवन दर्शन तथा रामत्व	सार्थक अग्रवाल	62
23.	वर्तमान समय में श्रीराम जी की शिक्षाओं के सामाजिक निहितार्थ	प्रो. उषा यादव	64
24.	भारतीय कला, साहित्य और विज्ञान समृद्धि का संगम	डॉ. कविता गुप्ता	68
25.	साहित्य–सूची	—	72

भारतीय शिक्षण मंडल

कार्यालय : ए-71, अमृत नगर, सी-1 के पास साउथ एक्स पार्ट-1, नई दिल्ली-110049 दूरभाष : 011-41033663
अणुडाक : delhiprant@gmail.com जाल स्थल : www.bsmbharat.org.
मुख्य कार्यालय : शेषाद्री सदन, तुलसीबाग रोड, महल, नागपुर, महाराष्ट्र - 880032

शुभकामना संदेश

बड़े हर्ष की बात है कि भारतीय शिक्षण मंडल के ब्रज प्रान्त द्वारा पत्रिका **"शिक्षा मंजरी"** का प्रकाशन किया जा रहा है। भारतीय शिक्षण मंडल के कार्यों का एक महत्वपूर्ण आयाम शिक्षा संबंधी वैचारिक विमर्श आयोजन करना तथा उनका प्रसारण करना है। पत्रिका प्रकाशन इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस पत्रिका के माध्यम से इस वैचारिक विमर्श को गरिमा और स्थायित्व प्राप्त होगा।

मैं आशा करता हूँ कि **"शिक्षा मंजरी"** इसी तरह ज्ञान के पथ को भविष्य में भी आलोकित करती रहे। आप सभी को इस प्रकाशन के लिए बहुत बधाई।

डॉ. सच्चिदानंद जोशी
अखिल भारतीय अध्यक्ष
भारतीय शिक्षण मंडल

भारतीय शिक्षण मंडल

कार्यालय : ए-71, अमृत नगर, सी-1 के पास साउथ एक्स पार्ट-1, नई दिल्ली-110049 दूरभाष : 011-41033663
अणुडाक : delhiprant@gmail.com जाल स्थल : www.bsmbharat.org.
मुख्य कार्यालय : शेषाद्री सदन, तुलसीबाग रोड, महल, नागपुर, महाराष्ट्र - 880032

शुभकामना संदेश

मुझे जय जानकर प्रसन्नता हुई कि भारतीय शिक्षण मंडल द्वारा **"शिक्षा मंजरी"** पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है। भारत की ज्ञान परंपरा **'सा विद्या या विमुक्ते'** ऋषियों की परिणाम मूलक अवधारणा को प्रकाशित करती है। शिक्षा का अर्थ जहाँ भौतिक उन्नति है वहीं पर चारों पुरूषार्थों के आधार पर पारलौकिक जीवन को श्रेष्ठ बनाने की कल्पना भी है। भारतीय अनवेषण की परंपरा जिसमें विश्वकल्याण की कामना छिपी है, को गति प्रदान करने की दृष्टि से पुस्तक का प्रकाशन कराया जाना हर्ष का विषय है। पुस्तक का प्रकाशन समाज एवं लोकहित में एक सराहनीय प्रयास है।

आपके द्वारा किये गये इस सराहनीय प्रयास के लिये आपको बहुत-बहुत बधाई एवं भाविष्य में भी आपके द्वारा यह प्रसाय जारी रहे इसके लिए मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

डॉ. भरत शरण सिंह
अखिल भारतीय महामंत्री
भारतीय शिक्षण मंडल

आओ अब अपने हृदय में श्रीराम को विराजें

डॉ. अंशु मंगल

22 जनवरी, 2024 अर्थात् द्वादश तिथि, शुक्ल पक्ष, पौष माह, विक्रम संवत् 2080 के अभिजीत मर्हूत में हमारे भगवान श्रीराम पुन: अपने धाम में राष्ट्रोंल्लास के साथ विराजमान हुए। यह वह युगान्तकारी क्षण था जब विश्व के सभी सनातन प्रेमी हिन्दुओं की आंखों में अश्रुधारा थी, इस क्षण वह पाँच सदियों के संघर्ष तथा लाखों हिन्दुओं द्वारा अपने प्राणों की आहूति के माध्यम से इस महायज्ञ की पूर्णता का सुफल प्राप्त कर रहे थे।

नि:संदेह हम सनातनियों का यह सदियों पुराना संघर्ष तथा अभिलाषा तो पूर्ण हो चुकी है, किन्तु अब हमें अधिक सावधान तथा सजग होकर स्वयं के उत्थान तथा राष्ट्र के उत्थान के लिए संकल्प लेना होगा। अत: जब प्रभु श्रीराम जब अपने मन्दिर में विराजमान हो चुके हैं, तो हमें चाहिए कि हम सभी हिन्दु भाई-बहन तथा सभी राम प्रेमी अपने हृदय में प्रभु श्रीराम जी को विराजमान करें, ऐसा होने पर ही न केवल लाखों बलिदानों का महत्व बढ़ जायेगा, अपितु हमारे प्रभु श्री राम का राम राज्य भी हमारे राष्ट्र में स्थापित हो सकेगा। यह एक ऐसा रामराज्य होगा जहाँ लिंग, जाति, वर्ग, अर्थ तथा क्षेत्र के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होगा। निश्चय ही यह स्वंभू प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में भगवान श्रीराम की स्थापना से ही होगा।

यह हमारा कोई दिवा स्वप्न नहीं है अपितु हमारी भारत भूमि सदा से महापुरुषों की जननी रही है। इन महापुरुषों के माध्यम से हम अनेक झंझावतों का सामना करते हुए अपना अस्तित्व बनाये रख पाये हैं। अत: इस काल में भी इन महापुरुषों, शिक्षकों तथा धर्मगुरुओं को सामने आकर प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में राम तथा उनके आदर्शों की स्थापना करनी होगी।

आज हमारे राष्ट्र की अनेक समस्याओं का एक मुख्य केन्द्र बिन्दु है, वह है नैतिक मूल्यों का पतन। इसका एक मुख्य कारण है कि कोई भी युवा या नागरिक आज अपना आदर्श राम, कृष्ण, सीता, नानक, महावीर या बुद्ध को नहीं मानता, अपितु आज के युवाओं के आदर्श कोई फिल्म अभिनेता या अभिनेत्री कोई मिलेनियर या कोई अत्यधिक धनी खिलाड़ी हो सकता है। अत: अपने आदर्श जैसा बनने की चाह में व्यक्ति वह सभी कार्य भी करता है जो उसे नहीं करना चाहिए। वस्तुत: दोष आज की पीढ़ी का भी नहीं है क्योंकि आज उन्हें जो पढ़ाया या दिखाया जाता है उससे ही वे प्रेरणा प्राप्त करते हैं। इसका एक मुख्य उदाहरण है कुछ माह पूर्व आयी फिल्म आदिपुरुष है। इस फिल्म में रामायण के कथानक तथा पात्रों का सम्पादन अत्यंत निम्न स्तर से किया गया था। ऐसी स्थिति में आज की युवा पीढ़ी को क्या दिखाया जा रहा है, हम आसानी से समझ सकते हैं।

हमारे प्रभु मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम से बड़ा कोई आदर्श पुरुष इस धरती पर न तो हुआ है और न ही आगे हो पायेगा। माता-पिता के प्रति, मित्र के प्रति, भाईयों के प्रति, पत्नी के प्रति, प्रजा के प्रति, पशु-पक्षियों के प्रति, राष्ट्र के प्रति, यहां तक कि शत्रु के प्रति श्रीराम ने जैसा आदर्श अपने जीवन को जी कर प्रस्तुत किया है, वैसा उदाहरण हमें सम्पूर्ण विश्व में देखने को नहीं मिलेगा। नि:संदेह यदि कोई नागरिक इसमें से कोई एक भी आदर्श को अपने हृदय में उतार ले तो वह निश्चय ही अपने हृदय रूपी मंदिर में प्रभु श्री राम को ही विराजमान कर लेगा। किन्तु इस कार्य के लिए आज के माता-पिता, तथा गुरुजन को भी सामने आना होगा। उन्हें स्वयं अपने बच्चों तथा विद्यार्थी को श्रीराम के आदर्शों से अवगत तो कराना ही होगा साथ ही बच्चे कैसे श्रीराम के आदर्शों को अपने जीवन में उतारें यह भी सिखाना होगा।

अत: यदि हमें स्वयं का, अपने परिवार तथा राष्ट्र का उत्थान चाहिए तो हमें अब अपने हृदय में भी मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम की स्थापना करनी होगी। हमें यह ध्यान रखना होगा कि यदि हम ऐसा नहीं कर पाते हैं तो प्रभु श्रीराम का यह मंदिर सिर्फ ईट पत्थरों से ही बना ही माना जा सकेगा।

इस पत्रिका के अंदर के पृष्ठों में श्रीराम के आदर्शों से सम्बंधित अनेक दृष्टान्तों का वर्णन किया गया है, एक लेख के माध्यम से तो श्रीराम माता कैकेयी के प्रति क्या उच्च भाव रखते थे (यह जानते हुए कि उन्होंने ही उन्हें वनवास भेजा था) को वर्णित किया गया है, वहीं एक अन्य आलेख में प्रभु श्रीराम की शरणागत वत्सलता जैसे आदर्श तत्व को दिखाया गया है। यह पत्रिका श्रीराम के रामत्व तथा आदर्शों को समझने में निश्चय ही महत्वपूर्ण होगी।

सामाजिक समरसता के नायक – 'राम'

■ प्रो. प्रदीप श्रीधर
अध्यक्ष हिन्दी विभाग एवं निदेशक

भगवान विष्णु के चौबीस अवतार माने जाते हैं जिनमें से दस अवतार मुख्य हैं। परंतु, इन सभी अवतारों में राम और कृष्ण ही मानव सभ्यता के सात्विक पुरुष हैं मानव संस्कृति युगों–युगों से राम और कृष्ण के पावन चरित्रों का गुणगान करती आयी है। राम, भारतीय संस्कृति के सनातन पुरुष माने जाते हैं। भारतीय संस्कृति ने एक आदर्श मानव के समान राम का चरित्र सन्दर्भित किया है, राम उदात्त चरित्र के नायक हैं। राम एक पूर्ण और आदर्श मानव हैं; शील, शक्ति और सौन्दर्य का सहज संयोजन राम के चरित्र में मिलता है। भगवान राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया है क्योंकि उनमें मानवीय गुण; अपने चरम उत्कर्ष पर दिखाई देते हैं; राम ने मानव धर्म, समाज धर्म, राष्ट्र धर्म का आजीवन अनुकरण किया। राम इन तीनों धर्मों के प्रतिनिधि पुरुष के रूप में हमारे समक्ष आते हैं, जहाँ रावण की दृष्टि में केवल अपनी लंका और अपना परिवार है, वहीं राम की दृष्टि में सम्पूर्ण सृष्टि ही उनकी अपनी है और लोक–कल्याण की यही भावधारा राम के चरित्र में देखी जा सकती है। ''राम शील की प्रतिमूर्ति हैं: धृति, क्षमा, दया, शान्ति आदि को शील कहा जाता है। जब यह शील पूर्णतया अभ्यस्त होकर जीवन शैली में उतर आता है, तब उसे स्वभाव कहते हैं।'' 'स्व' का भाव 'स्वभाव' है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम का शील उनका स्वभाव बन गया था। राम के चरित्र में कहीं भी कोई ऐसी बात या घटना नहीं दिखाई देती जहाँ उन्होंने किसी कारणवश शील का उल्लंघन किया हो। राम का यही शीलवान चरित्र हमें उनके व्यक्तित्व के मनन चिंतन की ओर भी ले जाता है।

> *"धर्म, समाज धर्म, राष्ट्र धर्म का आजीवन अनुकरण किया। राम इन तीनों धर्मों के प्रतिनिधि पुरुष के रूप में हमारे समक्ष आते हैं। जहाँ रावण की दृष्टि में केवल अपनी लंका और अपना परिवार है, वहीं राम की दृष्टि में सम्पूर्ण सृष्टि ही उनकी अपनी है और लोकल्याण की यही भावधारा राम के चरित्र में देखी जा सकती है।"*

गोस्वामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में रामकथा को आधार बनाया है और रामकथा के माध्यम से व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा अन्य अनेक विषयों को लिया है। 'रामचरितमानस' के राम लोकनायक राम के रूप में हमारे समक्ष आते हैं। राम ज्ञान के प्रतीक हैं, राम भक्ति के प्रतीक हैं, राम कर्म के प्रतीक हैं। इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में इन तीनों का समन्वय दिखाया है। रामचरितमानस ने तत्कालीन समाज को एक नई दिशा दिखायी जिस पर चलकर सामाजिकता और समरसता के भाव और प्रखर हुए। राम की कथा को आधार बनाकर तुलसीदास ने रामचरितमानस में तत्कालीन परिस्थितियों में लोकनायक राम के सर्वसमावेशक चरित्र को वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, कूटनीतिक, धार्मिक सन्दर्भों में अभिव्यक्ति प्रदान की है।

जब माता कैकेई ने महाराजा दशरथ से अपने दो वरदान मांग लिए तो पूरी अयोध्या विचलित सी हो गई थी, प्रत्येक व्यक्ति आक्रोशित था, क्रोधित था, दुखी था हर एक के मन में भविष्य के बारे में चिंतन व्याप्त था, परंतु, ऐसे समय में भी यदि कोई शांत था, तो वह थे राम। उनके व्यक्तित्व में ऐसे समय में भी कितनी सहजता और सरलता दिखाई देती है, प्रत्येक स्थिति को बिना कोई प्रश्न किए, निर्लिप्त भाव से, धैर्यपूर्वक स्वीकार कर लेना राम जैसे व्यक्तित्व में ही संभव है। राम के पास कौशल, क्षमता, प्रतिभा सब कुछ है परंतु, फिर भी वह अपनी मर्यादा, अपने शील एवं अपने अनुशासन का कदापि त्याग नहीं करते। राम चाहते तो अपनी शक्ति और बल के प्रयोग से भी राज सिंहासन पर अधिकार जमा सकते थे; परंतु उनका चरित्र सदैव दूसरों को मान–सम्मान देता है, इसी कारण उन्होंने माता के प्रत्येक वचन को शिरोधार्य किया।

तुलसीदास द्वारा रचित केवट प्रसंग की प्रत्येक पंक्ति मानवीय मूल्यों से अनुभावित और अनुप्राणित है। तुलसीदास ने भारतीय संस्कृति को बहुत गहराई से पहचाना था। अपने समय के तानाशाही शासकों के अत्याचार के समक्ष उन्होंने राम को मर्यादा के पालक के रूप में दर्शाया है। राम गंगा नदी के समीप पहुंचते हैं और रथ से उतरकर नंगे पाव गंगा किनारे पर आते हैं गंगा नदी पार कराने के लिए वे केवट को पुकारते हैं और शीघ्र नाव द्वारा नदी पार कराने को कहते हैं किन्तु केवट राम के लिए नाव लाने से मना कर देता है। तुलसीदास लिखते है–

मांगी नाव न केवट आना। कहई तुम्हार मरमु मैं जाना॥

यह स्थिति केवल रामराज्य में ही संभव है कि साधारण सा एक केवट भी अपने राजा के समक्ष अपनी बात निडरता से कह सकता है। तुलसीदास स्पष्ट करते हैं कि–वही राजा श्रेष्ठ है जो प्रजा के लिए पिता तुल्य हो और मित्रवत हो। एक भक्त केवट का अपने प्रभु राम से हठ भी है कि जब तक भगवान भक्त की इच्छा पूरी नहीं करेंगे, भक्त भी उनकी बात नहीं मानेगा। इस बात को सुनकर राम मुस्कराते हुए अपने केवट को आज्ञा प्रदान करते हुए कहते हैं।–

कृपासिंधु बोले मुसुकाई। सोई करू जेहि तब नाव न जाई॥

केवट की भक्ति भावना और राम की वत्सलता यहाँ द्रष्टव्य है। इसी के साथ माता सीता का समर्पण भी यहाँ उल्लेखनीय है। सीता अपनी मणिरत्न जड़ित अंगूठी उतारकर अपने पति श्रीराम को देकर सफल

दाम्पत्य का उदाहरण हमारे समक्ष प्रस्तुत करती हैं-

पिय हिय की सिय जाननिहारी। मनि मुंदरी मन मुदित उतारी॥

जब रावण द्वारा सीता जी का अपहरण किया जाता है, उस समय राम को इस बात की कोई जानकारी नहीं होती। विचार कर देखा जाए तो अपने अकेले ही दम पर केवल धनुष-बाण हाथ में लेकर राम ने वन-प्रांत में रहने वाले भालू-वानर आदि को एकत्रित किया, उनको संगठित किया और एक कुशल सेना का निर्माण भी किया। जंगल की कठोर परिस्थितियों में भी ऐसा कुशल संयोजन कहीं और देखने को नहीं मिलता। लंका तक जाने के लिए सेना का निर्माण भी किया और वह भी बिना किन्हीं विशिष्ट संसाधनों के। नल-नील की सहायता से उन्होंने एक विशाल पुल का समुद्र पर निर्माण कर दिखाया। यहाँ राम की नेतृत्व क्षमता विवेक और अनुशासन दर्शनीय है। उन्होंने जिस लक्ष्य को अपने सामने रखा, अपनी निष्ठा से उस लक्ष्य को प्राप्त भी कर लिया। वन-प्रांत में निवास करने वाली जातियों को जोड़कर सामाजिक समरसता का एक सार्थक संदेश राम ने दिया है। राम का उत्कृष्ट संयोजन, प्रबंधन, कूटनीतिक दूरदर्शिता और सामाजिक अभियांत्रिकी यहाँ दर्शनीय है-

राम भालु कपि कटकु बटोरा।
सेतु हेतु श्रमु कीन्ह न थोरा।

राम की सहृदयता और मित्रता का भाव भी देखा जा सकता है। उन्होंने सुग्रीव, हनुमान, अंगद आदि से मित्रता की और उनके हर छोटे से छोटे सुख-दुख का ध्यान भी रखा। यह दर्शाता है कि राम मित्र वत्सल हैं। जो भालू वानर आदि उनके जाति के नहीं हैं, उन्हें भी अपना परिचित और मित्र बनाने का गुण राम में है।

विभीषण जब रावण के पास युद्ध के तमाम अलौकिक संसाधनों की तुलना राम से करते हैं और सहज ही प्रश्न करते हैं तो राम उससे कहते हैं कि रावण के पास दिव्य आयुध और रथ हैं तो मेरे पास भी एक ऐसा रथ है जिसके दो पहिए धैर्य और शौर्य के हैं। सत्य और शील उसकी ध्वजा का काम करते हैं। चार घोड़ों के रूप में बल, विवेक, दम और परोपकार जुड़े हुए हैं। जिनकी डोरियों के रूप में क्षमा, दया, और समता जुड़ी हुई हैं। सकारात्मक सोच चतुर सारथी का काम कर रहा है। राम के पास सद्‌गुणों की शक्ति है। राम के पास किसी प्रकार का भौतिक संसाधनों से युक्त रथ नहीं है परन्तु आत्मबल से युक्त शक्तियाँ हैं। तुलसीदास के शब्दों में-

सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होई सो स्यंदन आना।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल विवेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरती चर्म संतोष कृपाना।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥

परिवार एक ऐसा स्थान है जिसमें व्यक्ति स्नेह और सौहार्द का, गुरुजनों के प्रति आदर और भक्तिभाव का तथा सामूहिक कल्याण के लिए वैयक्तिक प्रवृत्तियों और महत्वाकांक्षाओं को दबाने का पाठ सीखता है। अपने जीवन में राम जिन अनेक अलौकिक गुणों को दर्शाते हैं, उन सबकी जड़ें उनके अपने पारिवारिक जीवन में निहित थीं। सत्य, त्याग, मित्रता, दान, तप, पवित्रता, सरलता, विद्या और गुरुसेवा जैसे सद्‌गुणों को सेवा से और शत्रुओं को धनुष से जीतना सीखा।

राम ने मित्र और शत्रु दोनों के प्रति सरल और शिष्ट व्यवहार किया। जीवन के विषम क्षणों में उच्च नैतिकता का आग्रह, विचारों की दृढ़ता उन्होंने सदैव रखी। समस्त मानवों के प्रति सेवा-भाव, प्राणिमात्र के प्रति प्रेम और भ्रातृत्व आदि गुणों का त्याग उन्होंने कभी नहीं किया। पारिवारिक सहयोग, पारिवारिक अनुशासन एवं पारिवारिक वातावरण के भाव उनके हृदय में सदैव बने रहे। राम का समग्र जीवन परिवार के मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक सत्प्रभाव का उज्ज्वल दृष्टान्त हैं।

रामचरितमानस में रामराज्य की अवधारणा बड़े ही सार्थक रूप में दर्शायी गई है। रामराज्य का संविधान सभी दृष्टियों से पूर्ण एवं चिन्मय था। इस दिव्य संविधान में समाष्टि के अधिकारों की रक्षा का पूर्ण प्रावधान था। इस संविधान का पूर्ण उद्देश्य था सबको समान रूप से पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति कराना। व्यक्ति की कर्त्तव्य परायणता का विशेष बल रामराज्य के संविधान में दिया गया था। राजा का संवैधानिक दायित्व प्रजा के अधिकारों की रक्षा करना था। प्रजा की रक्षा के लिए राजा दण्ड धारण करता था। इस तरह रामराज्य का संवैधानिक स्वरूप लोककल्याणमय था। राम जननायक के रूप में हमारे समक्ष आते हैं। नायक ही नेतृत्व करता है। राम के नायकत्व का मापदण्ड स्वयं का, स्वयं के लिए नेतृत्व ही है। व्यक्ति को सर्वप्रथम स्वयं का नेतृत्व करना आना चाहिए। जब तक व्यक्ति अपने धर्म एवं अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठावान नहीं हो जाता, तब तक वह जनसमुदाय का वास्तविक नायक नहीं बन सकता। अत: व्यक्ति तब ही महानायक बन सकता है जब वह अपने भीतर के षड्‌विकारों पर शासन करे। लोकनायक राम इसका उदाहरण बनकर हमारे समक्ष आते हैं।

"रामचरितमानस में रामराज्य की अवधारणा बड़े ही सार्थक रूप में दर्शायी गई हो। रामराज्य का संविधान सभी दृष्टियों से पूर्ण एवं चिन्मय था। इस दिव्य संविधान में समाष्टि के अधिकारों की रक्षा का पूर्ण प्रावधान था।"

गांधी जी का विचार था कि वही शासक सर्वोत्तम होता है जो न्यूनतम शासन करता है। उनके रामराज्य की यही परिकल्पना थी। इसी तथ्य को दर्शाते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' के उत्तरकाण्ड में लिखा था-

दण्ड जतिन्ह कर भेद तहँ, नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहीं सुनिअ अस, रामचन्द्र के राज॥

तुलसी ने रामचरितमानस के संदर्भ में 'रामराज्य' का उल्लेख किया है। आधुनिक युग में भी यदि नेतृत्व इसी तरह का मर्यादापूर्ण व्यवहार करता है तो दण्डात्मक व्यवस्था अपने आप ही विलय हो जाती है।

लोकनायक राम के लोक कल्याणकारी रामराज्य की शासन व्यवस्था विशिष्ट है। रामराज्य में दण्ड तो केवल सन्यासियों के हाथों में ही है। भेद नाचने-गाने वालों के नृत्य समाज में है और 'जीतो' शब्द केवल मन के जीतने के लिए ही सुनायी पड़ता है अर्थात् राजनीति में साम, दाम, दण्ड और भेद-ये चार उपाय किये जाते हैं। रामराज्य में कोई शत्रु है ही नहीं, इसलिए जीतो शब्द केवल मन के जीतने के लिए ही कहा जाता है। कोई अपराध करता ही नहीं, इसलिए दण्ड किसी को नहीं होता। 'दण्ड' शब्द केवल सन्यासियों के हाथ में रहने वाले दण्ड के लिए ही रह गया है। सब कुछ अनुकूल होने के कारण भेदनीति की आवश्यकता ही नहीं रह गयी थी। 'भेद' शब्द केवल सुर-ताल में भेद करने के ही काम आता है। रामराज्य के संविधान में व्यक्ति की कर्तव्यनिष्ठा पर बल दिया गया था। पठन-पाठन एवं वेदाध्ययन विद्वानों का धर्म था। इनके द्वारा समाज का मार्गदर्शन किया जाता था। यह समाज का अग्रणी वर्ग था एवं इन्हें रामराज्य में अत्यन्त प्रतिष्ठा प्राप्त थी। इनका संवैधानिक कर्तव्य समाज को ज्ञानवान बनाना अर्थात् शिक्षण देना था। गुरुजनों के सामने राजा अर्थात् शासक नतमस्तक होते थे। ये सम्पूर्ण नागरिकों से पूज्य थे। यह रामराज्य की संवैधानिक मर्यादा थी। ये ब्राह्मण वर्ग से सम्बन्धित थे। ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ माने जाते थे। क्षत्रिय शासन किया करते थे। प्रजापालन, देश की रक्षा के लिए शासन करना एवं युद्ध करना इनका संवैधनिक कर्तव्य था। वैश्य का काम व्यापार एवं कृषि था। इनको वैश्य कहा जाता था। इनका कार्य अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करना और राष्ट्र को समृद्ध बनाना था। शूद्र राज्य के सेवक थे और अपने श्रम के द्वारा राष्ट्र को सम्पन्न बनाया करते थे।

"रामराज्य में दण्ड तो केवल सन्यासियों के हाथों में ही है। भेद नाचने-गाने वालों के नृत्य समाज में है और 'जीतो' शब्द केवल मन के जीतने के लिए ही सुनायी पड़ता है अर्थात् राजनीति में साम, दाम, दण्ड और भेद-ये चार उपाय किये जाते हैं। रामराज्य में कोई शत्रु है ही नहीं, इसलिए जीतो शब्द केवल मन के जीतने के लिए ही कहा जाता है। कोई अपराध करता ही नहीं, इसलिए दण्ड किसी को नहीं होता। 'दण्ड' शब्द केवल सन्यासियों के हाथ में रहने वाले दण्ड के लिए ही रह गया है। सब कुछ अनुकूल होने के कारण भेदनीति की आवश्यकता ही नहीं रह गयी थी।"

लोक कल्याणकारी राज्य वही है जिसमें सामाजिक समरसता हो, असमानता न हो। लोक कल्याणकारी राज्य वही है जिसमें प्रत्येक नागरिक की प्राथमिक आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा, मकान, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि की पूर्ति होती है। तुलसीदास के शब्दों में -

बयर न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई॥
चारिउ सरन धर्म जग माहीं। पूरी रहा सपनेहुँ अघनाही॥

तुलसीदास आगे भी लिखते हैं-

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहीं काहुहि व्यापा॥

विद्वानों ने तुलसीदास को बुद्ध के पश्चात् भारत का सबसे बड़ा लोकनायक माना है। वे एक ऐसे सन्त थे जिन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों को पहचानकर रामकथा के माध्यम से सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, नैतिक क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया। तुलसी ने सामाजिक क्षेत्र में समन्वय के सार्थक प्रयास किए। तुलसी की दृष्टि में वर्णाश्रम केवल गुणों-कौशलों पर आधारित था। राम-निषाद का प्रेम, राम-भीलनी का प्रेम, राम और वानर, भालू, रीछ का प्रेम इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। इसी प्रकार तुलसी राम के पारिवारिक क्षेत्र में भी समन्वय की भावना दर्शाते हैं। पारिवारिक भाव को उन्होंने पिता-पुत्र में, पति-पत्नी में, सास-बहु में, भाई-भाई में, सेवक-स्वामी में बहुत ही गहराई के साथ दर्शाया है। पारिवारिक जीवन में समन्वय स्थापित कर एक आदर्श परिवार की प्रतिष्ठा तुलसीदास ने की है। रामराज्य की कल्पना में राम अधिनायक होने पर भी लोकनायक के गुणों से परिपूर्ण हैं। इस रामराज्य में ही समूची मानव सृष्टि को एकता के सूत्र में पिरोया गया जिसे तुलसी ने रामचरितमानस के माध्यम से प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि राम की व्यापकता और तुलसी की सर्वसमावेशक दृष्टि राम और रामचरितमानस को सर्वोपरि स्थान देती है। राम के मर्यादा पुरुषोत्तम होने की कथा अकेले तुलसी ने नहीं कही अपितु हजारों वर्षों से यह ऋषि मुनियों की श्रुति-स्मृतियों में रची बसी है।

सारांशतः पं. विद्यानिवास मिश्र जी के शब्दों में, बारहों महीने राम की वनयात्रा के कष्ट की सुधि में बीत जाते हैं। बड़ी भयंकर लू झेली है हमारी संस्कृति ने, बड़ी वर्षा की मार सही है, पर वह शरत् ऋतु की तरह अन्ततः प्रसन्न ही दिखती है भीतर और बाहर कहीं। इसलिए यह मात्र संयोग नहीं कि राम का जन्म वसन्त के उजाले पखवारे में होता है उनका विजयोत्सव शरद के उजाले पखवारे में होता हैं और ये ही दोनों उजले और निखरे पखवारे हैं शक्ति की आराधना के भी पखवारे हैं। हमारी शक्ति जीवन की ऊर्जा का प्रसाद बांटने में चरितार्थ होती रही है, अन्धकार चीरने वाली ज्योति बनने में सार्थक रही है। पार्थिव सुगन्धि और पार्थिव हरा-भरापन ही उस शक्ति की परितृप्ति है। हम राम में अपनी आभ्यन्तर शक्ति का, अपने संस्कार का आकार पाते हैं, इसलिए हम संहारकर्ता से अधिक रक्षक को, शासक से अधिक पालक को, पिता से अधिक बड़े भाई को, स्वर्णपुरी से अधिक केवट की राजधानी शृंगवेरपुर को और वीरता से अधिक तितिक्षा को और अभिमान से अधिक विनय को बडा मूल्य मानते हैं। एक ओर राम बड़े कोमल हैं, दूसरी ओर अपने संकल्प में कठोर हैं, अपनी निजता के मूल्य पर कठोर हैं। हमारी संस्कृति भी कुछ वैसी ही है, मृदु मंजु कठोर है। इसी से बहुतों की पहचान में नहीं आती, राम ही कहाँ आते हैं, आते तो यह सब कुछ नहीं होता जो आज हो रहा है।

शरणागतवत्सल प्रभु श्रीराम

■ डॉ. सुधीर शर्मा

प्रभु राम के गुणों का वर्णन करना ऐसे ही है, जैसे उन्हीं के द्वारा रचित इस सृष्टि का आदि-अन्त ज्ञात करना। अगर फिर भी मैं प्रभु के गुणों के दर्शन करना प्रारम्भ करू तो उनके असंख्य गुणों में मुझे प्रभु की शरणागत वत्सलता अत्यन्त प्रिय है। प्रभु अपने भक्तों की गलतियों का ध्यान नहीं रखते वरन् उनके गुणों को हमेशा ध्यान रखते हैं।

''रहति न प्रभु चित चूक किए की। करत सुरति सय बार हिए की॥ ''

जब समस्त देवगण भी पृथ्वी के साथ शरणागत हो उन्हें खोजते हैं और उन्हें प्राप्त नहीं कर पाते तो भूतभावन भगवान शंकर रास्ता दिखाते हैं कि यदि प्रेम से शरणागत होकर पुकारा जाए तो प्रभु कहीं भी प्राप्त हो सकते हैं –

''हरि व्यापक सर्वत्र समाना, प्रेम ते प्रकट होहिं मैं जाना॥

गौतम ऋष के आश्रम को सूना देखकर और सिला रूप में ऋषि पत्नी अहिल्या को शरणागत पाकर प्रभु प्रसन्न होते हैं और अहिल्या का तत्क्षण ही उद्धार करते हैं।

इन्द्र पुत्र जयन्त जब धृष्टता के करके माता सीता के पैर में चौंच मारकर भागना चाहता है तब वह प्रभु राम के अमोघ बाण से तीनों लोकों में भागकर अपने प्राण नहीं बचा पाता। स्वयं पिता इन्द्र भी उसकी रक्षा नहीं कर पाते और सन्त हृदय नारद के कहने पर जयन्त अन्त में प्रभु राम के शरण में आता है। तब शरणागत वत्सल प्रभु उसका कुछ नहीं करते अपितु उसे थोड़ा दण्ड देकर छोड़ देते हैं। ऐसे कृपालु प्रभु के समान कौन है?

कीन्ह मोहि बरू बोह द्रोह, जयदि तेहि कर वध उचित ।
प्रभु छाड़सि करि छोह, को कृपाल रघुवीर स॥

जब प्रभु ने बालि का बध किया और बालि ने प्रभु से शिकायत की कि उसे धोखे से मारा गया है। तव प्रभु ने कहा –

अनुज बधू भगिनी सुत नारी, सुन सह कन्या सम ए चारी ।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकह जोई, ताहि बधे कछु पाप न होई ॥

यह सुनकर बालि शरणागत हो गया और प्रभु ने कृपा करके उसे जीवित रखने का प्रस्ताव दिया है।

''अचल करो तनु राखहु प्राना, बालि कहा सनु कृपानिधाना''

लेकिन चतुर बालि ने जीवन को ठुकरा दिया और शरणागत वत्सल प्रभु ने उसे अपना धाम प्रदान किया।

''जनम जनम मुनि जतन करहीं, अंत राम काई आवत नाहीं ॥ ''

जब विभीषण लंका त्यागकर प्रभु, के शरण में आता है और शत्रु के भाई के संबंध में प्रभु सभी से सलाह माँगते हैं तब सुग्रीव आदि सलाहकारों

के द्वारा यह सलाह दी जाती है कि ये राक्षस मायावी होते हैं, अत: विभीषण अवश्य हो हमारा भेद लेने आया है इसे बन्दी बना लिया जाय। तभी प्रभु का उत्तर आना उनकी प्रतिज्ञा के रूप मे उपस्थित होता है–

''सखा नीति तुम्ह नीकि विचारी। भम पन सरनागत भयहारी ' ''

प्रभु की प्रतिज्ञा है कि वे शरणागत को अपनाकर उसको अभय कर देते हैं। यह सुनकर श्री हनुमान जी हर्षित हो जाते हैं क्योंकि वे प्रभु का स्वभाव जानते हैं।

सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत बच्छल भगवाना "

प्रभु ने तो यह घोषणा भी की है कि –

''सरनागत कहुँ जे तजहि निज अनहित अनुमानि
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि ॥ ''

जब युद्ध भूमि में रावण प्रभु से युद्ध कर रहा था और विभीषण को प्रभु के साथ देखकर वह कुपित होकर विभीषण पर प्रचंड शक्ति का प्रहार करता है तब शरणागत वत्सल प्रभु राम तुरन्त विभीषण को पीछे करके वह शक्ति स्वयं अपने ऊपर लेते हैं–

''आवत देखि शक्ति अति धोरा, प्रनतारति भंजन पन मोरा।
तुरत विभीषन पछि मेला, सन्मुख राम सहेउ सोइ सेला ॥ ''

ऐसे कृपालु, शरणागत वत्सल प्रभु को छोड़ कर कोई आश्रय नहीं है। हम सब अनाथों को प्रीति करके सनाथ करने वाले प्रभु राम के सिवाय और कौन है?

''सुन्दर सुजान कृपा निधान, अनाथ पर कर प्रीति जो।
लो एक राम अकाम हित निर्वानप्रद तक आन को॥
''जाकी पा लवलेश ते, मतिमन्द तुलसीदास हूं
पायो परम विश्राम राम, समान प्रभु नाहीं कहूँ॥ ''

रामायण एवं रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन

■ **डॉ. ममता रानी**

महर्षि वाल्मीकि ने युगों पहले संस्कृत में मूल रामायण की रचना की थी। जिसमें भगवान विष्णु के 7वें अवतार श्रीराम की लीलाओं का वर्णन है। तुलसीदास जी ने अवधी भाषा में रामचरितमानस की रचना की उस समय मुगल हिन्दू धर्म को मिटाने का पूरा प्रयास कर रहे थे। ***वाल्मीकि रामायण एवं रामचरितमानस के घटनाक्रमों में अंतर।*** रामायण का अर्थ है राम की कथा अथवा मंदिर, वहीं रामचरितमानस का अर्थ है राम चरित्र का सरोवर। मंदिर में जाने के कुछ नियम होते हैं, इसी कारण वाल्मीकि रामायण को पढ़ने के भी कुछ नियम हैं, इसे कभी भी कैसे भी नहीं पढ़ा जा सकता। इसके उलट रामचरितमानस को लेकर कोई विशेष नियम नहीं है। इसमें एक सरोवर की भांति स्वयं को पवित्र किया जा सकता है। वाल्मीकि रामायण के राम मानवीय हैं, जबकि रामचरितमानस के राम अवतारी। चूँकि वाल्मीकि श्रीराम के समकालीन थे, उन्होंने श्रीराम का चरित्र सहज ही रखा है। वाल्मीकि के लिए राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं अर्थात पुरुषों में श्रेष्ठ। इसके उलट तुलसीदास के लिए श्रीराम न केवल अवतारी हैं बल्कि उससे भी ऊपर परब्रह्म हैं। इसका वर्णन मानस में इस प्रकार किया गया है कि जब मनु एवं शतरूपा ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश से वरदान लेने से मना कर देते हैं तो परब्रह्म श्रीराम उन्हें दर्शन देते हैं।

तुलसीदास के लिए श्रीराम उन नारायण, जिनके वे अवतार थे, उनसे भी ऊपर हैं। महर्षि वाल्मीकि श्रीराम के प्रशंसक थे। किन्तु उनके आराध्य भगवान शंकर थे। जिनकी सहायता से उन्होंने रामायण की रचना की। तुलसीदास श्रीराम के अनन्य भक्त थे और ऐसी मान्यता है कि उन्होंने रामचरितमानस की रचना स्वप्न में भगवान शिव की आज्ञा के बाद की जिसमें रामभक्त हनुमान ने उनकी सहायता की। रामायण में वनवास के समय महर्षि वशिष्ठ अत्यंत क्रोधित होकर कैकेयी से कहते हैं कि यदि राम वन जाएं तो सीता को ही सिंहासन पर बिठाया जाये। स्त्री सशक्तिकरण का ये जीवंत उदाहरण है। रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं है। वाल्मीकि रामायण में ऋषि गौतम की पत्नी अहिल्या को अदृश्य हो उसी आश्रम में रहने का श्राप मिला था। जबकि रामचरितमानस में वे पत्थर की शिला बन जाती हैं। वाल्मीकि रामायण में श्रीराम अहिल्या का उद्धार उनके पैरों को छूकर करते हैं, जबकि रामचरितमानस में श्रीराम अपने पैर को अहिल्या की शिला पर रखकर अपनी चरण धूलि से उसका उद्धार करते हैं। वाल्मीकि रामायण में भगवान शंकर के "पिनाक"धनुष का वर्णन है, जिसे श्रीराम ने तोड़ा। किन्तु रामचरितमानस में उसे केवल "शिव धनुष" कहा गया है। रामचरितमानस के अनुसार धनुष टूटने पर परशुराम स्वयंवर स्थल में आये और उन्होंने श्रीराम से अपने धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने को कही।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार जब श्रीराम विवाह के बाद अयोध्या लौट रहे थे, तब मार्ग में उन्हें परशुराम मिले और श्रीराम ने उनका क्रोध शांत करने के लिए उनके वैष्णव धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाई। रामचरितमानस में खर-दूषण के संहार के समय ही रावण समझ जाता है कि श्रीराम नारायण के अवतार हैं। किन्तु वाल्मीकि रामायण में युद्धकांड में कुम्भकर्ण एवं मेघनाद की मृत्यु के बाद रावण को समझ आता है कि श्रीराम भगवान विष्णु के अवतार हैं। वाल्मीकि रामायण के अनुसार श्रीराम जब रामेश्वरम ज्योतिर्लिंग की स्थापना करते हैं तो हनुमान जी उनसे रामेश्वरम की व्याख्या करने को कहते हैं। तब श्रीराम केवल इतना कहते हैं कि 'जो राम का ईश्वर है वही रामेश्वर है।"रामचरितमानस में भी श्रीराम यही कहते हैं पर उसमें तुलसीदास ने एक प्रसंग और जोड़ा है कि भगवान शंकर भी माता पार्वती से रामेश्वरम की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि "राम जिनके ईश्वर हैं वो रामेश्वरम हैं।"

वाल्मीकि रामायण में हनुमान जी को मनुष्य बताया गया है जो वानर समुदाय के थे और वन में रहते थे। वानर=वन (जंगल) + नर (मनुष्य) जबकि रामचरितमानस में हनुमान को वानर (बन्दर) प्रजाति का बताया गया है। रामचरितमानस के अनुसार रामसेतु का निर्माण नल एवं नील दोनों ने किया था क्योंकि उन्हें श्राप मिला था कि उनके हाथ से छुई वस्तु पानी में नहीं डूबेगी। किन्तु वाल्मीकि रामायण में रामसेतु का निर्माण केवल नल ने किया था क्योंकि वे असाधारण शिल्पी थे और विश्वकर्मा का अंश थे। इसी कारण रामसेतु को 'नलसेतु' भी कहा जाता है। रामायण या रामचरितमानस में कहीं भी हनुमान को 'रुद्रावतार' नहीं कहा गया है। रामायण और रामचरितमानस के बीच के अंतर को विस्तार से बताया गया है। रामायण ऋषि वाल्मिकी द्वारा लिखी गई थी। यहां दिए गए रामायण बनाम रामचरितमानस के बीच का अंतर बुनियादी बातों को बेहतर ढंग से समझने और उनकी तुलनाओं को अच्छी तरह से जानने में मदद कर सकता है।

रामायण और रामचरितमानस

- ***रामायण:*** रामायण ऋषि वाल्मिकी द्वारा लिखी गई थी, जो भगवान राम के समकालीन थे। रामायण संस्कृत भाषा में लिखी गई थी। रामायण त्रेता युग में लिखी गई थी। रामायण सात अध्यायों से बनी है - बालकांड, अयोध्याकांड, अरण्यकांड, किष्किंदाकांड, सुंदरकांड, युद्धकांड और उत्तरकांड। रामायण लिखने के लिए श्लोक प्रारूप का उपयोग किया गया था रामायण के अनुसार, राजा दशरथ की 350 पत्नियाँ थीं, जिनमें से 3 मुख्य पत्नियाँ कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी थीं। रामायण के अनुसार, भगवान हनुमान एक मानव थे जो वानर जनजाति के थे। रामायण के अनुसार, राजा जनक ने सीता के लिए किसी स्वयंवर का आयोजन नहीं किया था। जब राम ऋषि विश्वामित्र के साथ जनक से मिलने गए, तो राम को शिव का धनुष दिखाया गया, जिसे भगवान राम ने आसानी से उठा लिया। इसलिए देवी सीता का विवाह भगवान राम से हुआ। वाल्मिकी रामायण के अनुसार असली सीता का अपहरण रावण ने किया था। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, सीता को अग्नि परीक्षा द्वारा दुनिया के सामने अपनी पवित्रता साबित करने के लिए कहा गया था। वाल्मिकी रामायण के अनुसार, रावण ने युद्ध के मैदान में दो बार राम का सामना किया था। पहले युद्ध में रावण युद्ध के मैदान में बुरी तरह पराजित हुआ, लेकिन राम ने उसे पीछे हटने की अनुमति दे दी। दूसरे युद्ध में राम ने एक बार फिर रावण को हराया और युद्ध के मैदान में उसका वध कर दिया। वाल्मिकी की रामायण में राम को असाधारण आचरण और गुणों वाले इंसान के रूप में दर्शाया गया है। इसलिए राम को मर्यादा पुरूषोत्तम कहा गया। वाल्मीकि की रामायण में, राम ने अपनी पत्नी देवी सीता की मृत्यु के बाद अपने नश्वर शरीर को सरयू नदी में बहा दिया था, जो धरती माता में लुप्त हो गई थीं, और उनके भाई लक्ष्मण के सरयू नदी में डूबने के बाद।

- ***रामचरितमानस :*** रामचरितमानस तुलसीदास द्वारा लिखा गया था। रामचरितमानस अवधी भाषा में लिखा गया था। कलियुग में लिखा गया रामचरितमानस सात अध्यायों से बना है, केवल एक अंतर है कि तुलसीदास ने युद्धकांड को लंकाकांड में बदल दिया। रामचरितमानस को लिखने के लिए चौपाई प्रारूप का उपयोग किया गया था। रामचरितमानस के अनुसार, राजा दशरथ की केवल 3 पत्नियाँ थीं। रामचरितमानस के अनुसार, भगवान हनुमान को बंदर के रूप में दर्शाया गया है रामचरितमानस के अनुसार राजा जनक ने सीता के विवाह के लिए स्वयंवर का आयोजन किया था। सीता का हाथ जीतने के लिए राम को भगवान शिव का धनुष तोड़ना पड़ा। कोई भी राजा इस धनुष को उठाने में भी सक्षम नहीं था, भगवान राम ने बिना किसी प्रयास के भगवान शिव के धनुष को न केवल उठा लिया बल्कि प्रत्यंचा खींचकर तोड़ भी दिया। इस प्रकार भगवान राम का विवाह देवी सीता से हुआ। तुलसीदास रामायण के अनुसार, रावण ने असली सीता का अपहरण नहीं किया था, बल्कि रावण ने जिसका अपहरण किया था, वह असली सीता का प्रतिबिम्ब था। अपहरण की घटना होने से पहले भगवान राम ने असली सीता को भगवान अग्नि को सौंप दिया था। तुलसीदास रामचरितमानस के अनुसार, अग्निपरीक्षा वास्तविक सीता को सीता के प्रतिबिम्ब से बदलने का एक कार्य मात्र था। रामचरितमानस में तुलसीदास के अनुसार रावण ने युद्ध के मैदान में राम के साथ केवल एक बार युद्ध किया था, वह युद्ध के अंत में था। उन दोनों के बीच हुए एकमात्र युद्ध में राम के हाथों रावण मारा गया। रामचरितमानस में राम को भगवान विष्णु के अवतार या अंशावतार के रूप में दर्शाया गया है। राम के कार्यो को दुनिया में बुराई को दूर कर धर्म की स्थापना करने का सही मार्ग बताया गया। रामचरितमानस में तुलसीदास ने लक्ष्मण की मृत्यु या सीता के लुप्त होने का कोई उल्लेख नहीं किया है। रामायण भगवान राम और देवी सीता के जुड़वाँ पुत्रों लव और कुश के जन्म के साथ समाप्त होती है।

" रामायण का अर्थ है राम की कथा अथवा मंदिर, वहीं रामचरितमानस का अर्थ है राम चरित्र का सरोवर। मंदिर में जाने के कुछ नियम होते हैं, इसी कारण वाल्मीकि रामायण को पढ़ने के भी कुछ नियम हैं, इसे कभी भी कैसे भी नहीं पढ़ा जा सकता। इसके उलट रामचरितमानस को लेकर कोई विशेष नियम नहीं है। "

1. ***वाल्मीकि कृत रामायण का उत्तरकाण्ड:*** उत्तरकाण्ड में राम के

राज्याभिषेक के अनन्तर कौशिकादि महर्षियों का आगमन, महर्षियों के द्वारा राम का तथा रावण का जन्मादि वृत्तान्त सुनाना, सुमाली तथा माल्यवान के वृत्तान्त, रावण कुम्भकर्ण, विभीषण आदि का जन्म-वर्णन रावणादि सभी भाइयों का ब्रह्मा से वरदान- प्राप्ति, रावण-पराक्रम-वर्णन के प्रसंग में कुबेर आदि देवताओं का घर्षण रावण सम्बन्धित अनेक कथाएँ हैं। साथ ही सीता के पूर्वजन्म रूप वेदवती का वृत्तान्त, वेदवती का रावण को शाप, सहस्त्रबाह अर्जुन के द्वारा नर्मदा अवरोध तथा रावण का बन्धन, रावण का बालि से युद्ध और बालि की काख में रावण का बन्धन, सीता-परित्याग, सीता का वाल्मीकि आश्रम में निवास, निमि नहषययाति के चरित, शत्रुघ्न द्वारा लवणासुर वध, शंबूक वध तथा ब्राह्मण पुत्र को जीवन प्राप्ति, भागव चरित, वृत्रासुर वध प्रसंग, राम का अश्वमेध यज्ञ, वाल्मीकि के साथ राम के पुत्र लव कुश का रामायण गाते हुए अश्वमेध यज्ञ में प्रवेश, राम की आज्ञा से वाल्मीकि के साथ आयी सीता का राम से मिलन, सीता का रसातल में प्रवेश, भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न के पुत्रों का पराक्रम वर्णन, दूर्वासा-राम संवाद, राम का सशरीर स्वर्गगमन, राम के भ्राताओं का स्वर्गगमन तथा देवताओं का राम का पूजन विशेष आदि वर्णित है।

2. तुलसीदास गोस्वामी कृत्त रामचरितमानस का उत्तरकांड : इसमें मंगलाचरण, भरत विरह तथा भरत-हनुमान मिलन, अयोध्या में आनंद, श्री रामजी का स्वागत, भरत मिलाप, सबका मिलनानन्द, राम राज्याभिषेक, वेदस्तुति, शिवस्तुति, वानरों की और निषाद की विदाई रामराज्य का वर्णन, पुत्रोत्पति, अयोध्याजी की रमणीयता, सनकादिका आगमन और संवाद, हनुमानजी के द्वारा भरतजी का प्रश्न और श्री रामजी का उपदेश, श्री रामजी का प्रजा को उपदेश (श्री रामगीता), पुरवासियों की कृतज्ञता, श्री राम-वशिष्ठ संवाद, श्री रामजी का भाइयों सहित अमराई में जाना, नारदजी का आना और स्तुति करके ब्रह्मलोक को लौट जाना, शिव-पार्वती संवाद, गरुड़ मोह, गरुड्जी का काकभुशुण्डि से रामकथा और राम महिमा सुनना, काकभुशुण्डि का अपनी पूर्व जन्म कथा और कलि महिमा कहना, गुरुजी का अपमान एवं शिवजी के शाप की बातसुनना रुद्राष्टक, गुरुजी का शिवजी से अपराध क्षमापन, शापान्ग्रह और काकभुशुण्डि की आगे की कथा, काकभुशुण्डि जी का लोमशजी के पास जाना और शाप तथा अनुग्रह पाना, ज्ञान-भक्ति निरुपण, ज्ञान दीपक और भक्ति की महान महिमा, गरुड़जी के सात प्रश्न तथा काकभुशुण्डि के उत्तर, भजन महिमा रामायण माहात्म्य, तुलसी विनय और फलस्तुति और रामायणजी की आरती का वर्णन मिलता है।

"तुलसीदास श्रीराम के अनन्य भक्त थे और ऐसी मान्यता है कि उन्होंने रामचरितमानस की रचना स्वप्न में भगवान शिव की आज्ञा के बाद की जिसमें रामभक्त हनुमान ने उनकी सहायता की।"

वाल्मीकि कृत उत्तरकांड में राम के रावण वध की आगे की गाथा का वर्णन है, जिसमें राम का राज्याभिषेक सीता परित्याग वाल्मीकि आश्रम में लव और कुश का जन्म, बचपन और सीता का जीवन। शत्रुघ्न द्वारा लवणासुर का वध और इसके अलावा पूर्व के ऋषि-मुनियों और राजाओं की गाथा का वर्णन मिलेगा।

दूसरी ओर गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस में शिव और पार्वती का रामकथा के संबंध में संवाद, काकभुशुण्डि और गरुड़ संवाद सहित ज्ञान और उपदेश की बातें ही ज्यादा हैं। इसमें सीता परित्याग और लव एवं कुश के बारे में उल्लेख नहीं मिलता है। विद्वान लोग मानते हैं कि ऋषि वाल्मीकि राम के समकालीन थे और गोस्वामी तुलसीदास राम के भक्त थे। यदि प्रमाण की बात सामने आए तो वाल्मीकि रामायण को ही प्रमाण मानना चाहिए, क्योंकि वही सही रामायण है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस को लिखने के पूर्व वाल्मीकि कृत रामायण सहित दक्षिण भारत की रामायण को भी पढ़ा था। अत: उन्होंने सभी को पढ़कर लिखा जबकि वाल्मीकि ने राम के जीवन को देखकर रामायण को लिखा था।

वाल्मीकि कृत रामायण और तुलसीदास कृत रामायण में कई बड़े अंत हैं।

काल का अंतर: महर्षि वाल्मीकि जी ने रामायण की रचना प्रभु श्रीराम के जीवन काल में ही की थी। राम का काल 5114 ईसा पूर्व का माना जाता है, जबकि गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस को मध्यकाल अर्थात विक्रम संवत संवत 1631 अंग्रेजी सन् 1573 में रामचरितमानस का लेखन प्रारंभ किया और विक्रम संवत 1633 अर्थात 1575 में पूर्ण किया था। एक शोध के अनुसार रामायण का लिखित रूप 600 ईसा पूर्व का माना जाता है।

भाषा में अंत: महर्षि वाल्मीकि जी ने रामायण को संस्कृत भाषा में लिखा था जबकि तुलसीदासजी ने रामचरितमानस को अवधी में लिखा था। हालांकि रामचरितमानस की भाषा के बारे में विद्वान एकमत नहीं हैं। कोई इसे अवधि मानता है तो कोई भोजपुरी। कुछ लोक मानस की भाषा अवधी और भोजपुरी की मिलीजुली भाषा मानतें हैं। मानस की भाषा बुंदेली मानने वालों की संख्या भी कम नहीं है।

कथा के आधार में अंतर: महर्षि वाल्मीकि जी ने श्रीराम के जीवन को अपनी आखों से देखा था। उनकी कथा का आधार खुद राम का जीवन ही था जबकि तुलसीदासजी ने रामायण सहित अन्य कई रामायणों को आधार बनाकर रामचरितमानस को लिखा था। यह भी कहते हैं कि उनकी सहायता हनुमानजी ने की थी।

श्लोक और चौपाई: रामायण को संस्कृत काव्य की भाषा में लिखा गया जिसमें सर्ग और श्लोक होते हैं, जबकि रामचरितमानस के दोहों और चौपाइयों की संख्या अधिक है। रामायण में 24000 हजार श्लोक और 500 सर्ग तथा 7 कांड हैं। रामचरितमानस में श्लोक संख्या 27 है, चौपाई संख्या 4608 है, दोहा 1074 है, सोरठा संख्या 207 है और 86 छन्द हैं।

रामायण से ज्यादा प्रचलित है रामचरितमानस: वर्तमान में वाल्मीकि कृत रामायण को पढ़ना और समझना कठिन है क्योंकि उसकी भाषा संस्कृत है जबकि रामचरितमानस को वर्तमान की आम बोलचाल की भाषा में लिखा गया है। जनमानस की इस भाषा के कारण ही रामचरित मानस का पाठ हर जगह प्रचलित है।

राम के चरित्र का अंतर: वाल्मीकि कृत रामायण में राम को एक साधारण लेकिन उत्तम पुरुष के रूप में चित्रित किया है, जबकि रामचरित मानस में पात्रों और घटनाओं का अलंकारिक चित्रण किया गया है। इस चरित्र चित्रण में तुलसीदास ने हिन्दी भाषा के अनुप्रास अलंकार, श्रृंगार, शांत और वीररस का प्रयोग मिलेगा। इसमें तुलसीदासजी ने भगवान राम के हर रूप का चित्रण किया गया है। रामचरित मानस में राम ही नहीं रामायण के हर पात्र को महत्व दिया गया है। सभी के चरित्र का खुलासा हुआ है। तुलसीदासजी ने राम के चरित को एक महानायक और महाशक्ति के रूप में चित्रित किया।

घटनाओं में अंतर: वाल्मीकि कृत रामायण और गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस में घटनाओं में कुछ अंतर मिलेगा। जैसे श्रीराम और सीता जनकपुरी में बाग में एक दूसरे को देखते हैं तब सीताजी शिवजी से प्रार्थना करती हैं कि श्रीराम से ही उनका विवाह हो यह प्रसंग तुलसीदास जी कृत रामचरितमानस में है वाल्मीकि रामायण में नहीं।

रामायण और रामचरितमानस का अर्थ: रामायण का अर्थ है राम का मंदिर, राम का घर, राम का आलय या राम का मार्ग, जबकि रामचरित मानस का अर्थ राम के रचित्र का सरोवर। राम के मन का सरोवर। रामचरितमानस को राम दर्शन भी कहते हैं। मंदिर में जाने के जो नियम है।

ऋषि और भक्त की लिखी रामायण: महर्षि वाल्मीकि प्रभु श्रीराम के प्रशंसक जरूर थे लेकिन वे भक्त तो भगवान शिव के थे। उन्होंने शिव की मदद से ही इस रामायण को लिखा था, जबकि तुलसीदासजी प्रभु श्रीराम के अनन्य भक्त थे और उन्होंमे स्वप्न में भगवान शिव के आदेश से रामभक्त हनुमान की मदद से रामचरितमानस को लिखा था।

कांड रामचरितमानस में आखिरी से पहले काण्ड को लंकाकाण्ड कहा गया जबकि रामायण में आखिरी से पहले काण्ड को युद्धकाण्ड कहा गया। कहते हैं कि उत्तरकाण्डको बाद में जोड़ा गया था।

निष्कर्ष: श्रीरामचरितमान गोस्वामी तुलसीदास द्वारा १६वीं सदी में रचित प्रसिद्ध महाकाव्य है। इसके नायक मर्यादा पुरुषोत्तम राम है और इसकी भाषा अवधी है। वाल्मीकि रामायण के राम मानवीय हैं, जबकि रामचरितमानस के राम अवतारी। चूंकि वाल्मीकि श्रीराम के समकालीन थे, उन्होंने श्रीराम का चरित्र सहज ही रखा है। वाल्मीकि के लिए राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं अर्थात पुरुषों में श्रेष्ठ। इसके उलट तुलसीदास के लिए श्रीराम न केवल अवतारी हैं बल्कि उससे भी ऊपर परब्रह्म हैं। इस ग्रन्थ को अवधी साहित्य (हिंदी साहित्य) की एक महान कृति माना जाता है। इसे सामान्यत: 'तुलसी रामायण' या 'तुलसीकृत रामायण' भी कहा जाता है। श्रीरामचरितमानस भारतीय संस्कृति में एक विशेष स्थान रखता है। श्रीरामचरितमानस की लोकप्रियता अद्वितीय है। उत्तर भारत में रामायण के रूप में बहुत से लोगों द्वारा प्रतिदिन पढ़ा जाता है। शरद नवरात्रि में इसके सुन्दरकाण्ड का पाठ पूरे नौ दिन किया जाता है। रामायण मण्डलों द्वारा मंगलवार और शनिवार को इसके सुन्दरकाण्ड का पाठ किया जाता है। श्रीरामचरितमानस के नायक श्रीराम हैं जिनको एक मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में दर्शाया गया है जोकि मान्यताओं के अनुसार अखिल ब्रह्माण्ड के स्वामी हरि नारायण भगवान के अवतार हैं जबकि महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण में श्रीराम को एक आदर्श चरित्र मानव के रूप में दिखाया गया है। जो सम्पूर्ण मानव समाज को ये सिखाता है जीवन को किस प्रकार जिया जाए भले ही उसमे कितने भी विघ्न हों। प्रभु श्री श्रीराम सर्वशक्तिमान होते हुए भी मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। गोस्वामी जी ने रामचरितमानस का अनुपम शैली में दोहों, चौपाइयों, सोरठों तथा छंद का आश्रय लेकर वर्णन किया है।

रामचरितमानस में खर-दूषण के संहार के समय ही रावण समझ जाता है कि श्रीराम नारायण के अवतार हैं। किन्तु वाल्मीकि रामायण में युद्धकांड में कुम्भकर्ण एवं मेघनाद की मृत्यु के बाद रावण को समझ आता है कि श्रीराम भगवान विष्णु के अवतार हैं।

श्रीरामकालीन अर्थव्यवस्था
एक विश्लेषण

■डॉ. रूचि द्विवेदी ■ प्रो. आशुतोष प्रिय

रामराज्य की अवधारणा एक वृहद्ध एवं वैश्विक विचार है । जिसे उद्देश्य की भांति प्राप्त करने हेतु विश्व की समस्त अर्थव्यवस्थाएं कार्य कर रही हैं । समय के अनुसार इसका नाम परिवर्तित हुआ है। सशक्तीकरण, सतत् विकास जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाने लगा है। किंतु जब हम कवि वाल्मीकि की "रामायण" अथवा गोस्वामी तुलसीदासकृत "श्री रामचरितमानस" का अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि भारतीय सनातन संस्कृति में आज भी इतने वर्ष पूर्व भगवान श्रीराम की राजकाज व्यवस्था में यह सब समावेशित था इसका जिक्र दोनों महान ग्रंथों में उल्लिखित है। जिसमें राजा के कर्तव्य, बाजार, स्त्री दशा, अपार सामाजिक सेवाएं आदि समस्त तत्कालीन व्यवस्थाओं का विस्तृत वर्णन देखने को मिलता है। यह तत्कालीन रामराज्य की उत्कृष्टता तथा एक विकसित अर्थव्यवस्था वाले समाज को प्रतिबिम्बत करता है।

राम एक राजा के रूप में आदर्श स्थापित कर चुके हैं। जो राजा के कर्तव्य, आर्थिक ज्ञान, सामरिक दूर दृष्टि आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वनवास के समय जब भरत जी उनसे मिलने गए तो उन्होंने अपने भ्राता को आर्थिक, राजनीतिक और कूटनीतिक चिंतन की शिक्षा देकर अपने भाई को एक आदर्श राजा के कर्तव्यों के पालन के लिए तत्पर किया। श्री राम ने सुग्रीव को उनके भाई बाली से उनका अधिकार वापस दिलवाकर प्रजा को सुखी एवं समृद्ध किया। लंका विजय के पश्चात विभीषण को लंका का राज्य देकर वहां की प्रजा को सुखी किया तथा यही नहीं यह आदर्श भी स्थापित किया कि ज्ञान कहीं से भी अर्जित करना चाहिए। इसीलिए मृत्यु शैय्या पर पड़े रावण से राजनीति, आर्थिक कूटनीति का ज्ञान लेने के लिए अपने भाई लक्ष्मण तथा स्वयं भी उनके पास गए।

एक राजा ने राजनीतिक और आर्थिक कर्तव्यों के निर्वहन के आदर्श श्रीराम ने स्थापित किए जिनका ज्ञान दो महान रचियताओं के महाकाव्यों से मिलता है। आदर्श राज्य की स्थापना ही वर्तमान वैश्विक आर्थिक परिदृश्य में विकसित राष्ट्र की कल्पना है। तथा समस्त अर्थव्यवस्थाएं उसी ओर अग्रसर हैं। सनातन भूमि भारत इस विश्व का अग्रणी रह चुका है। जिसने रामराज्य के रूप में इस युग को जिया है। रामराज्य एक ऐसे सुखद युग का प्रतीक है जहां धन का समान वितरण, लोगों के बीच प्रेम भावना, धार्मिकता प्रचुरता में थी। प्रस्तुत लेख प्राचीन भारत में भगवान राम के शासनकाल को संदर्भित करता है, राम के राज्य में निम्नलिखित बिंदुओ को दृष्टिगत करते हैं –

राम एक राजा के रूप में आदर्श स्थापित कर चुके हैं। जो राजा के कर्तव्य, आर्थिक ज्ञान, सामरिक दूर-दृष्टि आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वनवास के समय जब भरत जी उनसे मिलने गए तो उन्होंने अपने भाता को आर्थिक, राजनीतिक और कूटनीतिक चिंतन की शिक्षा देकर अपने भाई को एक आदर्श राजा के कर्तव्यों के पालन के लिए तत्पर किया।

1. धर्म का आधार– भगवान राम के शासन को अक्सर धर्म के स्वरूप के रूप में देखा जाता है, धार्मिक जीवन का सत्यरूप आर्थिक शब्दों में, यह नैतिक व्यापार प्रथाओं, उचित व्यापार और संसाधन न्यायसंगत वितरण को प्रस्तुत करता है। धर्म पर विचार करने से सुनिश्चित होता है कि आर्थिक गतिविधियों का ईमानदारी से परिचालन हो, जो सामरिक और समृद्धि से भरपूर राज्य को बढ़ावा देता है। ऐसा राज्य जिसका आधार धर्म हो, जिसकी व्यवस्था का आधार धर्म हो

राम के राज्य में किसी प्रकार का कोई भय व्याप्त नहीं था। आग, पानी, हवा, बीमारी, भूख और चोरी का भी कोई डर नहीं था। व्यक्ति भूख से व्याकुल नहीं था, चोरी करने की आवश्यकता नहीं थी। किसी भी प्रकार का रोग शरीर को कष्ट नहीं पहुँचता था।

2. नेतृत्व और जवाबदेही: भगवान राम का नेतृत्व जबाबदेही का उदाहरण स्वरूप है। एक आदर्श के रूप में, उनका अपने प्रजा के प्रति जवाबदेही होना महत्वपूर्ण था। आर्थिक दृष्टि से, यह नेताओं के लिए आर्थिक नीतियों के लिए जवाबदेही होने के महत्व को बताता है, जिससे पूरी जनसंख्या को लाभ हो सके। भगवान राम का नेतृत्व जवाबदेही का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण स्वरुप है। एक आदर्श शासक के रूप में भी सदैव अपनी प्रजा के प्रति जवाबदेह रहते थे । आर्थिक दृष्टि से यह किसी भी नेतृत्व के लिए आर्थिक नीतियों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है । जिससे संपूर्ण प्रजा, संपूर्ण राज्य, संपूर्ण राष्ट्र को लाभ हो सके । उत्तरकाण्ड मे वर्णित दोहे के अनुसार–

दंड जतिन कर भेद जहां नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस रामचंद्र के राज ॥

रामराज में दंड केवल सन्यासियों के हाथों में है और " जीतो" शब्द केवल मन के जीतने के लिए ही सुनाई पड़ता था। (अर्थात् राजनीति में शत्रुओं को जीतने तथा चोर-डाकुओं आदि को दमन करने के लिए साम, दाम, दंड और भेद - ये चार उपाय किए जाते हैं। राम राज्य में कोई शत्रु नहीं है इसलिए 'जीतो' शब्द केवल मन के जीतने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। कोई अपराध करता ही नहीं है इसलिए दंड की किसी को आवश्यकता नहीं होती दंड शब्द केवल सन्यासियों के हाथ में रहने वाले दंड के लिए ही प्रयुक्त होता है तथा सभी अनुकूल होने के कारण भेदनीति की आवश्यकता भी नहीं है। भेद, शब्द केवल सुरताल के भेद के लिए ही प्रयोग किया जाता है।)

भगवान राम अपने अनुकरणीय गुणों और नेतृत्व कौशल के लिए पूजनीय हैं। रामकालीन अर्थव्यवस्था के संदर्भ में भगवान राम के नेतृत्व को सुशासन और आर्थिक प्रबंधन के प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है। यहां भगवान राम के नेतृत्त्व के कुछ पहलू दिए गए हैं जिन्होंने एक समृद्ध अर्थव्यवस्था में योगदान दिया है :

राम के राज्य में किसी प्रकार का कोई भय व्याप्त नहीं था आग, पानी, हवा, बीमारी, भूख और चोरी का भी कोई डर नहीं था। व्यक्ति भूख से व्याकुल नहीं था, चोरी करने की आवश्यकता नहीं थी। किसी भी प्रकार का रोग शरीर को कष्ट नहीं पहुंचता था।

न्यायपूर्ण शासन : भगवान राम न्याय और धार्मिकता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के लिए जाने जाते थे। धर्म (कर्तव्य/धार्मिकता) के प्रति उनके पालन ने निष्पक्ष शासन और आर्थिक गतिविधियों के फलने - फूलने के लिए अनुकूल वातावरण सुनिश्चित किया।

नागरिकों का कल्याण : भगवान राम ने अपनी प्रजा के कल्याण पर बहुत जोर दिया। उन्होंने सुनिश्चित किया कि लोगों की बुनियादी जरूरतें पूरी हों, जिससे सामाजिक स्थिरता को बढ़ावा मिला और आर्थिक उत्पादकता को बढ़ावा मिला।

बुनियादी ढांचे का विकास : भगवान राम के शासन काल में कृषि नि:संदेह उत्तम कोटी की रही होगी। रहने के लिए आवास कृषि के लिए आवश्यक स्रोत की व्यवस्था पर निवेश किया जाता होगा। श्रीराम ने अपने वनवास के काल में वन वन भ्रमण कर राष्ट्र को एकजुट करने का कार्य किया वही धनुष की शिक्षा देकर लोगों को व्यापार के लिए भी प्रोत्साहित किया जिससे आर्थिक विकास होगा।

व्यापार और कूटनीति : भगवान राम के प्रशासन ने संभवत: कूटनीति के माध्यम से पड़ोसी राज्यों के साथ व्यापार संबंधों को बढ़ावा दिया। इससे आर्थिक आदान-प्रदान और वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाह को बढ़ावा मिला, जिससे समृद्धि हुई। उद्यम को प्रोत्साहन उद्यमिता और नवाचार के लिए भगवान राम के समर्थन ने व्यक्तियों को विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया, जिसने उद्योगों और व्यवसायों का विकास हुआ।

पर्यावरणीय स्थिरता : प्रकृति और पर्यावरण के प्रति भगवान राम की श्रद्धा के कारण संभवत: प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग को बढ़ावा देने वाली नीतियां बनी होंगी, जिससे दीर्घकालिक आर्थिक व्यवहार्यता सुनिश्चित हुई।

नैतिक आचरण : भगवान राम की व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा और नैतिक आचरण ने उनकी प्रजा के लिए एक नैतिक मानक स्थापित किया। इनसे आर्थिक लेन - देन में विश्वास और अखंडता को बढ़ावा मिला, लेन - देन की लागत कम हुई और आर्थिक दक्षता को बढ़ावा मिला।

3. सतत विकास : रामकालीन अर्थव्यवस्था में महिला सशक्तिकरण समावेशी विकास को बढ़ावा देने और सतत विकास प्राप्त करने के लिए अभिन्न अंग है। भगवान राम के शासन ने सतत विकास को प्राथमिकता दी, आर्थिक विकास को पर्यावरणीय प्रबंधन के साथ संतुलित करते हुए। यह दृष्टिकोण हमें यह सिखाता है कि आर्थिक गतिविधियों के दीर्घकालिक परिणामों को मध्यस्थ रखना, समृद्धि और पारिस्थितिकीय कल्याण के बीच एक समर्थ अस्तित्व के लिए प्रयासशील रहने की आवश्यकता रामराज्य में देखने को मिलती है।

4. समृद्धिशील विकास : भगवान राम की कल्पना की गई रामराज्य ने समृद्धिशीलता और समान अवसरों को प्रोत्साहित किया। यह सामाजिक-आर्थिक मॉडल समृद्धिशील विकास की महत्वपूर्णता को बताता है, जहां हर नागरिक को जाति, धर्म, या सम्प्रदाय से ऊपर उठकर के आर्थिक अवसरों का लाभ मिलता है।

5. महिलाओं को सशक्तिकरण : रामकालीन शासनकाल में, महिलाओं के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, देखभाल , रोजगार के अवसरों और नेतृत्व भूमिकाओं तक समान पहुँच सुनिश्चित करना शामिल है । महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने से न केवल उनकी खुशहाली बढ़ती है बल्कि समग्र आर्थिक विकास में भी अपना योगदान प्रस्तुत करती हैं महिलाओं की भागीदारी में आने वाली बाधाओं को दूर करना, रामकालीन अर्थव्यवस्था की पूरी क्षमता को साकार करने में महत्वपूर्ण हैं। रामकालीन अर्थव्यवस्था में महिलाओं की स्थिति सामाजिक प्रगति और आर्थिक विकास को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

6. शिक्षा का महत्व: शिक्षा भगवान राम के शासन का एक आधार है। भगवान राम की आर्थिक दृष्टि ने नागरिकों को ज्ञान और कौशल से सशक्त करने के लिए शिक्षा में निवेश करने को महत्वपूर्ण माना है, जिससे नवाचार और पूंजी को आर्थिक समृद्धि के मौलिक घटक के रूप में प्रेरित किया जा सकता है।

रामकालीन अर्थव्यवस्था में शिक्षा प्रणाली की विशेषता सभी नागरिकों को सुलभ और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की प्रतिबद्धता है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति के माध्यम से विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास किया जाता था।

प्रातः काल सरउ करि मज्जन। बैठइ सभा संग दिज सज्जन।
वेद पुराण वशिष्ठ बखानहि।
सुनहि राम जदयपि सब जानइ॥

श्री राम की दिनचर्या का प्रारंभ प्रातः काल से गुरु के सानिध्य से प्रारंभ होता था। गुरु वशिष्ठ वेद पुराण की चर्चा करते हैं और श्री राम सभा के साथ बैठकर सब जानते हुए भी उसे ज्ञान को, गुरु वाणी को श्रवण करते हैं। राम राज्य में ऐसी शिक्षा व्यवस्था थी जहां गुरु के सानिध्य में बैठकर विद्यार्थी वेद पुराणों पर चर्चा किया करते थे।

7. बाजार व्यवस्था का वर्णन : रामराज्य मे बाजार व्यवस्था का विषद वर्णन करते हुए गोस्वामी जी ने उत्तरकाण्ड मे लिखा है-

बाजार सुचिरन बनइ बरनत वस्तु बिलु गथ पाईये।
जहां भूप रमानिवास तह की संपदा किमि गाइये॥
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सबसुखी सब सच्चरित सुंदर नारी नर सितु जरठजे॥

अर्थात सुंदरबाजार है जिसका वर्णन करते नही बनता वहां वस्तुएं बिना ही मूल्य मिलती हैं। जहाँ स्वयं लक्ष्मी पति राजा हो, वहाँ की संपत्ति का वर्णन कैसे किया जाए, बजाज (कपड़े का व्यापार करने वाले) सर्राफ (रुपये का लेन - देन करने वाले) आदि (व्यापारी हुए ऐसे जान पड़ते हैं मानों अनेक कुबेर ही, स्त्री, पुरुष, बच्चे और बूढ़े जी भी हैं, सभी सुखी, सदाचारी और सुंदर हैं। यह रामराज्यकालीन बाजार एवं व्यापार की सुखद एवं सुदृढ़ चित्रण को प्रस्तुत करता है।

रामकालीन अर्थव्यवस्था में एक अनूठी बाजार संरचना है, जो विकेंद्रीकृत निर्णय लेने और आर्थिक नीतियो की एक विविध श्रेणी की विशेषता है। यह छोटे पैमाने के उद्यमों, स्थानीय सहकारी समितियों और कारीगर उत्पादकों द्वारा विशिष्ट है, जो प्रतिस्पर्धा और सहयोग के एक जीवंत पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देता है। इसके अतिरिक्त, अनौपचारिक बाजार एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जो वस्तुओं और सेवाओं के लिए लचीलापन और पहुंच प्रदान करते हैं। इसकी विकेंद्रीकृत प्रकृति के बावजूद, निष्पक्षता सुनिश्चित करने और शोषण को रोकने के लिए नियामक ढांचे मौजूद हैं, जो बाजार की स्वतंत्रता और सामाजिक जिम्मेदारी के बीच संतुलन को बढ़ावा देते हैं। कुल मिलाकर, रामकालीन बाजार संरचना लचीलापन, विविधता और सामुदायिक जुड़ाव का प्रतीक है।

भगवान राम के प्रशासन ने संभवतः कूटनीति के माध्यम से पड़ोसी राज्यों के साथ व्यापार संबंधों को बढ़ावा दिया। इससे आर्थिक आदान-प्रदान और वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाह को बढ़ावा मिला, जिससे समृद्धि हुई।

निष्कर्ष : भगवान श्री राम विश्व के 'रामराज' में बाजार व्यवस्था, सुदृढ़ आर्थिक नीतियां, व्यापार में उन्नति, महिलाओं का पूर्ण सशक्तीकरण, सुदृढ़ सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण, समाज के प्रत्येक वर्ग की राजा तक पहुँच, कर आदि के संचय में सूझबूझ, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण के प्रति जनचेतना से प्राकृतिक प्रकोपों का कम प्रभाव, बाहरी राज्यों के साथ व्यापार, पड़ौसी राज्यों से मित्रतापूर्ण व्यवहार, सुदृढ़ राजनीतिक दूर दृष्टि आदि अन्य आर्थिक एवं गैर-आर्थिक दोनों ही तत्वों का समावेश था। वर्तमान समय में भी अर्थव्यवस्था के विकास में आर्थिक के साथ-साथ गैर आर्थिक तत्वों को भी महत्वपूर्ण माना जाता है। यह आधुनिक अर्थशास्त्रियों की मान्यता है ताकि अर्थव्यवस्था विकास की ओर अग्रसर होकर विकसित अर्थव्यवस्था बन सके। इस समस्त आर्थिक वातावरण को समृद्धि के स्तर पर भारत में 'रामराज्य' के समय तत्कालीन भारतीय जनमानस ने जिया है जिसका विषद वर्णन सनातन धर्म के दो महान व्यक्तित्वों आदिकवि भगवान वाल्मीकि एवं गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने द्वारा रचित पवित्र ग्रंथों में किया है।

रामकालीन अर्थव्यवस्था में शिक्षा प्रणाली की विशेषता सभी नागरिकों को सुलभ और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की प्रतिबद्धता है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति के माध्यम से विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास किया जाता था।

श्रीराम का जीवन और रामत्व

■ डॉ. नेहा गोस्वामी
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा

श्रीराम का जीवन और रामत्व एक अद्वितीय और प्रेरणादायक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। राम वो शक्ति हैं, जो जीवन पर्यंत हमारे साथ रहती है। राम का जीवन हमें आदर्शों, नैतिकता और मानवीयता के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। धर्म अर्थात् कर्तव्यनिष्ठ विवेकपूर्ण जीवन की शिक्षा हमें राममय होने पर मिलती है, जिसमें पितृ-धर्म, पुत्र-धर्म, पति-धर्म, गुरु-धर्म, शिष्य-धर्म, राज-धर्म जैसे कर्तव्यों का उत्कर्ष मिलता है। उनके रामत्व में निम्नलिखित महत्वपूर्ण गुण समाहित हैं:

धर्मनिष्ठा: श्रीराम ने हमें धर्मनिष्ठा के महत्व को समझाया। उन्होंने अपने जीवन में सदा धर्म का पालन किया और न्याय के मार्ग पर चलने का आदर्श प्रस्तुत किया। इसलिए वो सदैव मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाते हैं।

सेवाभाव: श्रीराम ने अपने जीवन में समाज के अंतिम व्यक्ति को भी सम्मान दिया। उनके कार्य समाज के सभी वर्गों की सेवा के लिए समर्पित थे। राक्षसों से जन सामान्य की रक्षा एवं गुरुजनों की सेवा के द्वारा उन्होंने सेवाभाव का महत्व समझाया। उन्होंने समाज की सेवा में अपना समय और ऊर्जा का निवेश किया और समृद्धि के लिए नहीं, बल्कि समाज के हित के लिए काम किया।

न्यायप्रियता: श्रीराम ने अपने न्यायपूर्ण और धर्मनिष्ठ कार्यों के माध्यम से समाज को न्याय प्रदान किया और न्यायप्रियता के आचरण से सभी के समक्ष न्याय के महत्व को रखा। उन्होंने सुग्रीव के पक्ष में रहकर उसे बाली के अन्याय से बचाया और सुग्रीव को उसका राज्य व स्त्री दोनों वापस दिलाए। साथ ही विभीषण को लंका का राजा बनाकर वहाँ भी न्याय और धर्म की स्थापना की।

सम्मान और समानता: श्रीराम ने हमें सम्मान और समानता के महत्व को समझाया। उन्होंने हमेशा अपने प्रियजनों, सहयोगियों और देशवासियों के प्रति सम्मान का भाव दिखाया। उन्होंने समाज के सभी वर्गों में समानता का भाव उत्पन्न किया। उनके लिए कोई छोटा या बड़ा नहीं, सभी समान सम्मान के अधिकारी थे।

साहस और समर्थता: राम ने हमें साहस और समर्थता का महत्व सिखाया। उन्होंने जीवन के हर परिस्थिति में समर्थ होकर धर्म का पालन किया और साहस से संघर्ष किया।

सहानुभूति और करुणा: राम ने हमें सहानुभूति और करुणा के भाव को समझाया। उन्होंने दु:खी, गरीब, और असहाय लोगों की मदद की और उनके साथी बने।

इस प्रकार मर्यादा पुरुषोत्तम राम का सम्पूर्ण जीवन मानवता और उच्च नैतिक मूल्यों के प्रति समर्पित रहा है। अपने पिता के वचनों के प्रति सम्मान नैतिकता का उत्कष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह आत्म त्याग व पारिवारिक कर्तव्य श्रीराम के सत्य और धर्म पालन के प्रति सम्मान को व्यक्त करता है। श्रीराम के रामत्व में ये गुण हमें एक समृद्ध, समर्थ और सद्भावपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित करते हैं। उनके आदर्शों का पालन

करने से हम समाज में उत्तम संबंध, समृद्धि और समानता का माहौल बना सकते हैं।

श्रीराम भारत जैसे विशाल देश के बहुसंख्यक समाज के लिए आदर्श आचरण का मापदंड प्रस्तुत करते हैं। राम धर्मज्ञ हैं, धर्म के रक्षक हैं, वे आदर्श राजा हैं, आदर्श पुत्र हैं, आदर्श भाई हैं, आदर्श पति हैं, आदर्श शिष्य हैं। वो ऐसा आदर्श चरित्र हैं, जो युगों-युगों तक जनमानस का प्रेरणास्त्रोत बना रहेगा। वो विविधताओं में भी समानता का सूत्र प्रदान करते हैं। राम भारत की एकता का प्रतीक हैं। प्रभु श्रीराम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। उनके राज्य में व्यक्ति-व्यक्ति में भेद नहीं रहा। जाति, पद के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया गया। राजकुमार होते हुए भी उन्होंने सामान्य पुरूष के समान ही आचरण किया, एक मानव को अपने जीवन में जो कष्ट और चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है, उन्होंने उसी के अनुसार अपना जीवन जिया, कहीं भी उसमें अवतार होने का दर्शन नहीं था। किसी भी स्तर पर उन्होंने लोक मर्यादाओं को भंग नहीं होने दिया। हर तरह की परिस्थितियों में भगवान राम ने उच्च आदर्शों को बनाए रखा। भीलराज निषाद की बात हो, या केवट और शबरी माँ की, वानरों की बात हो या गिद्ध राज जटायु की यहां तक की शत्रु भाई विभीषण को भी भगवान राम अपने जीवन में सबको साथ लेकर चलते हैं। वे एकता की बात करते हैं। भगवान राम देश के कण-कण में विद्यमान हैं। गुरु ग्रंथ साहिब में राम के बारे में लिखा है, एक राम दशरथ का बेटा, एक राम घट-घट में लेटा, एक राम का सकल पसारा, एक राम इन सबसे न्यारा।'' यह वर्णन हमारे देश में बसी राम की छवि को दर्शाता है। राम सबके हैं। उनका चरित्र अपार क्षमताओं से पूर्ण हैं। वे वन गमन का आदेश मिलने पर भी माता कैकई के प्रति कोई दुराभाव नहीं रखते, जब वापस आते हैं, तो माता कैकई से ही सबसे पहले मिलते हैं। वन जाते समय जिस केवट की सहायता लेते हैं, लौटते समय उसे सम्मान देना नहीं भूलते। वे शबरी को भी अपनी माता के समान सम्मान देते हैं और अहिल्या को भी उचित सम्मान दिलाते हैं वो सबको साथ लेकर चलते हैं।

उन्होंने रावण के भाई विभीषण को अपनी सेना में स्थान दिया। अपनी जीवन संगनी सीता की मुक्ति के बाद श्रीराम को उनकी पवित्रता के बारे में प्रजा के प्रश्नों का सामना करना पड़ा। कुछ लोग इसे सामाजिक मानदंडों और एक राजा के रूप में सार्वजनिक नैतिकता को बनाए रखने के कर्तव्य के रूप में देखते हैं, जबकि अन्य इसे एक ऐसे क्षण के रूप में मानते हैं, जहां राम ने व्यक्तिगत संबंधों के ऊपर अपने राजा के कर्तव्यों को प्राथमिकता दी। यह घटना शासन में व्यक्तिगत मूल्यों और सार्वजनिक जिम्मेदारियों के बीच जटिल अंतसंबंधों को व्यक्त करती है। राम का संपूर्ण जीवन सामाजिक न्याय, समरसता और समानता से परिपूर्ण है। राम राज्य का आदर्श सामाजिक अवस्था का प्रतीक हैं, जहां सभी नागरिकों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा की जाती है। रामायण में वर्णित ये घटनाएँ राम की दया, न्याय और समतावादी गुणों को उदघाटित करती हैं, जिससे वे गरीबों और अंतिम पंक्ति पर रहने वाले लोगों के संरक्षक के रूप में दिखाई देते हैं। उनके लिए कोई पराया नहीं है, पशु पक्षी नर-नारी, वनवासी-गिरिवासी, वंचित-शापित कोई भी ऐसा वर्ग नहीं है, जो राम का नहीं और राम उनके नहीं। सभी को प्रेम देना, सम्मान देना, हमें राम सिखलाते हैं।

राम के लिए सब बराबर हैं, वो यही शिक्षा देते हैं कि यदि बड़े स्थान पर विराजमान हो जाएं, तो अपने से छोटे को भूलना नहीं चाहिए।

अखिल विस्व यह मोर उपाया।
सब पर मोहि बराबरि दाया॥

केवट, निषाद, अहिल्या, शबरी, जटायु, गिलहरी, नल-नील, सुग्रीव, हनुमंत, विभीषण, सभी वर्ग उनके साथ हैं। भगवान राम ने अपने वन गमन के समय में समाज के सबसे अंतिम छोर के व्यक्ति को भी अपने ह्रदय से लगाया है। उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन से सामाजिक समरसता का जो उदाहरण प्रस्तुत किया है, वह अनुकरणीय है।

समाज के सबसे अंतिम पंक्ति में बैठे व्यक्ति की अपनी सामर्थ्य के अनुसार सेवा करना ही राम की सेवा है। यही मानव का धर्म है।

श्रीराम का चरित्र लोकमानस का आदर्श चरित्र है। सभी में अपनत्व की भावना, भव्य दिव्य भारत का आधार बन सकती है।

हमें अपनी संस्कृति को बचाने के लिए जाति, प्रान्त, धर्म, भाषा के मतभेद भूलकर राम द्वारा निर्दिष्ट मानव धर्म अपनाने के लिए आगे आना होगा। इसी से सभी का कल्याण होगा। आशा करते हैं कि युवा पीढ़ी श्री राम और उनके आदर्शों को मार्गदर्शन के लिए अवश्य ही अपनायेगी।

राम धर्मज्ञ हैं, धर्म के रक्षक हैं, वे आदर्श राजा हैं, आदर्श पुत्र हैं, आदर्श भाई हैं, आदर्श पति हैं, आदर्श शिष्य हैं। वो ऐसा आदर्श चरित्र हैं, जो युगों-युगों तक जनमानस का प्रेरणास्त्रोत बना रहेगा। वो विविधताओं में भी समानता का सूत्र प्रदान करते हैं।

श्रीराम की दृष्टि में माता कैकयी

■ कामिनी शर्मा

रामायण एक शाश्वत कहानी है ऐसे पात्रों की जो प्रतीक है आस्था का, प्रमाणित है तब से जब से हम जीवन की कल्पना करते हैं। हिन्दू धर्म में समय के भिन्न स्वरूप व काल बताये गये हैं, त्रेता युग में इक्ष्वाकु वंश में राजा भागीरथ जैसे पितृों के पौत्र रुप में विष्णु के अवतार राम का जन्म राजा दशरथ के घर हुआ।

भगवान ने मनुष्य रूप में धरती पर अवतरण द्वारा बताया कि मनुष्य में मनुष्यत्व के गुणों का भण्डार है और उनको निखारने में ही जीवन का आनन्द है। यह तब सम्भव है जब कष्टों को सहर्ष स्वीकार किया जाये।

भगवान के राम रूप में दशरथ के यहाँ जन्म लेने पर समस्त कुल अति हर्षित हुआ। भगवान की बाल क्रीड़ाओं का आनन्द सभी तीन माताओं ने लिया किन्तु भगवान तो भगवान ठहरे और इन्हें इस भू लोक पर मानव में देवता का चरित्र स्थापित करना था वह परम ज्ञानी भी हैं इसलिए जब श्री राम के राज्याभिषेक की घोषणा एवं तैयारी हो रही होती है और अगली सुबह जब राज तिलक होना है तब ही पूर्व संध्या पर माँ कैकेयी राजा दशरथ से ऐसे वचन माँग लेती हैं जिससे श्री राम को सपत्नी वनवास दिया जाता है राजा दशरथ दुखी द्रवित होकर भी कुछ नहीं कर पाते

मोहि कहु मातु तात दुख कारन। करिअ जतन जोहिं होई निवारन।
सुनहु राम सबु कारन एहू। राजाहि तुम्ह पर बहुत सनेहू॥

थोड़ा सा विचार करे, चिन्तन करें तो एक दृश्य है जब माँ कैकेयी वरदान माँग रही है कि राम को वनवास हो, क्या माँ कैकेयी इस तथ्य से अनभिज्ञ रही होगी कि राम विष्णु के अवतार हैं ?और धरती पर मनुष्यता या मनुष्य में देवत्व की स्थापना के लिये आये हैं? जिन्हे वे बचपन से खिलाती रहीं और राम का स्नेह माँ कैकेयी के प्रति ऐसा है कि राम नींद में भी कैकेयी माँ को ढूंढते हुए उनके शयनकक्ष में आधी रात को ही जाने की जिद्द किया करते थे। कितना असीम प्रेम माँ का पुत्र के प्रति रहा होगा। पल-पल भावनाओं की बगिया को सींचना और फिर उसी को काटने (उजाड़ने) में माँ को कितना कष्ट होता है और माँ कैकेयी तो अपने हाथ से नाजों से पाले हुए बालक/पुत्र के लिए अपने बेटे की आड़ में वनवास माँग रही हैं। क्या माँ कैकेयी इस तथ्य (विष्णु अवतार) स्वयं भावनाओं से परिचित नहीं है लेकिन एक माँ प्रथम गुरू है, जीवन को गढ़ती है, भविष्य के सुनहरे सपने देखती है और फिर उसी भविष्य को गढ़ने में प्रेम से पाले बालक को शेर दृष्टि से इसलिए नहीं देखती कि वह उसे खा जायेगी वरन् इसलिए देखती है कि उसके सुनहरे भविष्य को गढ़ती है गढ़ने के लिए हथौड़ा छैनी चलाकर कठोरता बरत कर संसार में अपनी कृति को सुंदर रचना का आकार देना चाहती है।

थोड़ा सा विचार करे, चिन्तन करें तो एक दृश्य है जब माँ कैकेयी वरदान मांग रही है कि राम को वनवास हो, क्या मॉ कैकेयी इस तथ्य से अनभिज्ञ रही होगी कि राम विष्णु के अवतार है और धरती पर मनुष्यता या मनुष्य में देवत्व की स्थापना के लिये आये हैं, जिन्हे वे बचपन से खिलाती रही और राम का स्नेह माँ कैकेयी के प्रति ऐसा है कि राम नींद में भी कैकेयी माँ को ढूंढते हुए उनके शयनकक्ष में आधी रात को ही जाने की जिद्द किया करते थे।

यहाँ तो सम्पूर्ण मानवता का सवाल था यहाँ तो यह कहानी सदियों मनुष्य के हृदय में बसने जा रही थी सामान्य जन-जीवन का आधार बनने वाली थी अनपढ़ का सहारा होने वाली थी, मनुष्यता का मानक बनने जा रही थी।

क्या इस दायित्व का बोध माँ कैकेयी को न रहा होगा, जब पृथ्वी पर बात बालक की होती है तब-तब सर्वप्रथम माँ का नाम आता है चाहे बालक में संस्कार देने या कुसंस्कार देने में, दोनों में माँ जानी जाती है।

माँ सिर्फ जननी नहीं है वह जीवन को गढ़ने वाली भी है तब ऐसी कैकेयी के माँ तत्व को अनदेखा किया ही नहीं जा सकता और भविष्य दृष्टा के रूप में कैकेयी के मॉ रूप ने स्वयं के लिए बुराई का वरण कर श्री राम को भगवान मर्यादा पुरूषोत्तम राम के रूप में हम सभी के ह्वदय में विराजमान किया। सभ्यता और संस्कृति को ऐसी दिशा दी कि जो कभी संसार के नियम की धार को नहीं तोड़ेगी।

नियम की धार को तो तोड़ेगी तब-तब मनुष्य की स्वयं में चेतना जाग्रत होगी कि मनुष्य स्वयं मनुष्यत्व से गिर गया है। माँ कैकेयी ने श्री राम को मानव के रूप में स्थापित करने में कठोरता की पराकाष्ठा को हुआ। यदि वे एक ही वर मांगती, राम का वनवास तो कहानी के पात्र अधूरे रह जाते और भरत को गद्दी मांगकर हर संभव दृष्टि रखी कि पुत्र राम भगवान राम बने और सांसारिक गुणों की स्थापना में अन्य पुत्र (भरत)भाई भरत स्वरूप स्थापित हो यदि सिर्फ राम को वनवास मांगती तो शायद भरत भी साथ चले जाते, तब अकिंचन भाव प्रस्तुत न होता किन्तु भरत को गद्दी मांगकर एक बाधा स्वरूप बना दिया कि वे भाई के रूप में इस मानव जाति के लिए अपने गुण चरित्र का विकास कर पुत्र होने व भाई

का कर्तव्य इस प्रकार निभायें कि भाई-भाई के साथ, सदियों तक, परिवार की कल्पना को मूर्त रूप दे ईश्वर की इस भू लोक का आनन्द उठाये।

क्या माँ कैकेयी ने जिन चार पुत्रों को जन्म से लेकर युवावस्था तक अपने हाथों से पाला, लीलाऐं देखी वे उन बालकों के गुण से अनभिज्ञ रही होंगीं? कदापि नहीं। तभी वे श्री राम के लिए वनवास माँग पातीं है। कितना बड़ा पाप सदियों के लिए, जो शाश्वत होने जा रहा हो, अपने सिर पर लेने का साहस उठाती हैं।

दूसरी तरफ श्री राम हैं भगवान के अवतार हैं मनुष्य योनि में इस संसार के कल्याण हेतु अवतरित हुए हैं इस धरा (भू लोक) को देव लोक रुप में प्रमाणित करने आये हैं क्या वे माँ कैकेयी को नहीं जानते, क्या वे माँ कैकेयी की भावनाओं से अछूते हैं, नहीं। बिल्कुल नहीं और इसीलिए जब माँ कैकेयी पूर्व संध्या पर श्रीराम के लिए अगली सुबह राज्याभिषेक के स्थान पर वनवास मांगती हैं वहां से श्री राम के मनुष्य गुणों के निखरने की घड़ी प्रारम्भ होती है वे माँ की भावनाओं का हर हाल में आदर करते हैं (कि वनवास सहर्ष स्वीकारते हैं) और पिता दशरथ की आज्ञा का पालन करते हैं सो पुत्र धर्म निभाते हैं और उच्च अदर्श स्थापित करते हैं माँ कैकेयी के प्रति यह आदर भाव रखते हुए उस वचन में छुपी भविष्य दृष्टि को पढ़ते हैं, माँ कैकेयी की पीड़ा को भी समझ रहे हैं क्योंकि वह स्वयं भविष्य को जानते हैं और माँ के कोमल ह्रदय को भी महसूस कर रहे हैं।

जिस पल श्री राम पत्नी सीता के आग्रह पर साथ ले जाते हैं स्वयं परिवार की स्थापना, पालक के रूप में स्थापित होते हैं, उन्हें अन्य भाई के साथ चलने की प्रार्थना पर, आने का आग्रह स्वीकारते हैं कि साथ में भाई को किस तरह रहना चाहिए यह चरित्र स्थापित होना है, पत्नी का किस तरह सुख-दुख में अपने पति के साथ रहकर, परिवार स्थापित होता है, का चरित्र सार्थक होने को है। और जो अनुज भरत पीछे रह जायेगा वह अलग रहकर भी अलग नहीं है दूर नहीं है किस तरह बड़े भाई की अनुपस्थिति में भी परिवार का ध्यान रखेगा, राज-काज चलायेगा और सब कुछ होने के बावजूद भी अंकिचन भाव से छोटे भाई के रूप में चरित्र स्थापित करेगा।

क्या यह भगवान राम अपनी लीला से समझ नही पा रहे होंगे क्या वे मनुष्य में किन गुणों की स्थापना होनी है या उन्हें करनी है इसका भाव नहीं होगा क्योंकि वे स्वयं विष्णु अवतार हैं भविष्य दृष्टा हैं। स्त्री मात्र मधुर और कोमल ही नहीं वरन कठोरता होने की वह पराकाष्ठा भी हो सकती हैं। वह श्री राम को भगवान मयार्दा पुरुषोत्तम भगवान रूप में स्थापित कर सकती हैं।

तो फिर माँ कैकेयी को ही क्यों चुनते है कि वे इस शाश्वत कहानी की कर्णधार बने क्योंकि माँ कैकेयी उन्हें सर्वाधिक प्रिय हैं उन्हें वे इस कार्य हेतु सक्षम इसलिए मानते हैं कि भविष्य में जब मनुष्य के मूल्य गिरेंगे तो एक पत्नी प्रथा रहे अन्यथा दूसरी पत्नी /माँ बच्चों के साथ बदसलूकी कर संसार की पीढ़ियाॅ और व्यवस्था न बिगड़े, अपने पराये के फर्क को परिवार में इसलिए स्थापित किया जिससे परिवार अधिक सुदृढ़ रहे क्योंकि भगवान की लीला और संसार के सबसे बड़े वंश (जिसमें सभी ने धरती को तारने के ही काम किये) में यदि यह सब सम्भव है तो आम मनुष्य कैसे परिवार व्यवस्था को सम्भालेगा कैसे संसार चलेगा। कर प्रस्तुती भी हो रही है।

माँ स्वरूप को बुराई पक्ष में लाकर भी धरती लोक पर देवत्व की स्थापना का प्रयास कर रहे हैं माँ कैकेयी उनकी नजर में माँ के रूप में सुदृढ़ दिखती हैं कि वे उन्हें उनकी आज्ञा को मानकर वनवास इसलिए जाते हैं कि माँ कैकेयी संसार की भलाई, आने वाली पीढ़ियों की शिक्षा तथा सृष्टा की इस सृष्टि को चलाने के लिए यह कलंक भी अपने सिर लेने को तैयार है कि एक माँ (सौतेली) ने पुत्र के लिए वनवास मांगा और श्री राम है कि हर परिस्थिति में पुत्र होने का, पति होने का, भाई होने का कर्तव्य निभाने का चरित्र प्रस्तुत करते हैं। माँ कैकेयी उन्हें बचपन से सर्वाधिक प्रिय है किन्तु संसार की भलाई के लिए जो माँ अपने सिर कलंक भी लेने को तैयार हो वह माँ कैकेयी श्री राम को सर्वाधिक प्रिय है भय से मुक्त करते हैं क्योंकि वे माँ कैकेयी के इस स्वरूप को भली-भाँति जानते हैं समझ रहे हैं कि जिसकी वजह से श्री राम भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहलाने वाले हैं। वे माँ कैकेयी के दिये हुए गुणों को अपनी वनवास यात्रा में चरितार्थ करते हैं। माँ कैकेयी को बचपन से सर्वाधिक प्रिय है कि उनके बिना राम सोते नहीं तब ऐसी माँ ने श्री राम में जो गुण डाले होंगे वही माँ उन्हें घर से बाहर भेजा है जिसे श्री राम बखूबी समझ रहे हैं माँ कैकेयी की आज्ञा, भविष्य दृष्टि, स्वीकार्य कलंक, के साथ स्वयं गुणों की खान को चरितार्थ करने चल देते है और ऐसी माँ की कठोरता को भी मधुरता से स्वीकारते हुए विभिन्न कष्टों में रहते हुए स्वाभिमान, पराक्रम, भूल, गलती आदि को मानव जाति के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

भगवान राम की दृष्टि में माँ कैकेयी इसलिए अधिक बड़ी हो जाती हैं क्योंकि वे यह कलंक अपने सिर लेती हैं और भगवान राम का मनुष्य यात्रा के प्रारंभ का कारण बनना स्वीकार करती हैं। बड़े वंश में पैदा होकर पूज्य होना आम बात है किन्तु बड़े वंश में पैदा होकर सामान्य जीवन जीते हुए पूज्य हो जाना महान बात है और इस महानता के पीछे जो कारण है वे माँ कैकेयी हैं और इसीलिए भगवान राम माँ कैकेयी में कोई दोष नहीं वरन समस्त इच्छाओं के पीछे छुपी उनकी मंशा को भाप रहे हैं यूँ भी कह सकते है जैसे उन्होंने स्वयं ऐसा आग्रह माँ कैकेयी से किया हो ताकि भगवान के अवतार लेने का महत्व सार्थक हो।

श्री राम की माँ कैकेयी श्री राम की नजरों में उनकी मात्र पालनहार ही नहीं है वरन् उनके भगवान अवतार से मनुष्य होने और फिर मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम बनने की कारण रही है उनकी आज्ञा पूज्य है क्योंकि वे पुत्र के लिए स्वयं कलंकित हो रही है और स्वयं के माँ स्वरूप के विभिन्न आयाम स्थापित कर रही है और भगवान राम को विभिन्न रूपों में स्थापित होने का अवसर दे रही है ऐसी माँ कैकेयी को भगवान राम आदर देकर युगों तक स्थापित होने का वरदान देते हैं।

■ डॉ. विजेन्द्र सिंह
सह-आचार्य (हिंदी)
राजकीय महाविद्यालय गोंडा, अलीगढ़

रामचरितमानस और हिन्दी साहित्य का वैश्विक महत्व

विश्व के बहुत से देशों में रामकथा प्राचीन काल से वर्तमान समय तक प्रचलन में है, जो कि अपने आप में वहां के जन-जीवन, धर्म, संस्कृति आदि की छाप स्पष्ट रूप से दिखती है। चीन, तिब्बत, जापान, इंडोनेशिया, थाईलैंड, लाओस, मलेशिया, कम्बोडिया, श्रीलंका, फिलीपिन्स, म्यांमार तथा रूस आदि देशों में रामकथा का प्रचलन इसे वैश्विक मान्यता प्रदान करता है। यह भारतीय संस्कृति की अनुपम धरोहर है जो कि भारतीय जनजीवन को गम्भीरता से प्रभावित करती है। बालक, युवा, प्रौढ़, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी के जीवन पर रामकथा का प्रभाव परिलक्षित होता है।

भारत में रामकथा मात्र कथा का नाम नहीं वरन् इसे जन-जन द्वारा जीवन जीने की सार्वभौमिक शैली माना जाता है। जनमानस के जीवन में प्रतिदिन प्रात: निद्रा खुलने के साथ से रात्रि में शैय्या गमन तक राम ही राम व्याप्त रहते हैं। इसलिए रामकथा की वैश्विक प्रतिष्ठा तथा लोकप्रियता उसकी मूल्यवत्ता की सिद्धि का स्वयं में सबसे बड़ा प्रमाण है। भारतीय इतिहास एवं साहित्य में राम जैसा सार्वभौमिक पात्र कोई अन्य नहीं हो पाया जो प्राचीन काल से वर्तमान तक के जीने का आधार सा बना हुआ है। रामकथा में मानवीय पारिवारिक सम्बन्धों से लेकर जड़ एवं चेतन के पारस्परिक संबंधों की भी समुचित व्याख्या ही इसके बहुप्रचलित होने का प्रमाण है। रामकथा भारतीय संस्कारों के आदर्श का परिपूरक आधार है क्योंकि प्रागैतिहासिक काल से ही रामकथा की उपस्थिति समाज में रही है और वर्तमान तक राम अद्यतन साहित्य एवं समाज में आदर्श नायक के रूप में विद्यमान हैं। प्राचीन धार्मिक साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक में अनवरत रूप से नायकत्व के रूप में विद्यमान राम को भारतीय संस्कृति का आधार समस्त जाति समूहों में पर्याप्त आदर-सत्कार प्राप्त है। वैदिक साहित्य में दशरथ, इक्ष्वाकु, सीता, जनक तथा राम के नाम का उल्लेख इसके भारतीय जनजीवन से जुड़ा होना सिद्ध करता है।

भारतीय इतिहास एवं साहित्य में राम जैसा सार्वभौमिक पात्र कोई अन्य नहीं हो पाया जो प्राचीन काल से वर्तमान तक के जीने का आधार सा बना हुआ है। रामकथा में मानवीय पारिवारिक संबंधों से लेकर जड़ एवं चेतन के पारस्परिक संबंधों की भी समुचित व्याख्या ही इसके बहुप्रचलित होने का प्रमाण है।

19वीं शताब्दी के पुर्वार्द्ध में भारत से अधिकांश मजदूरों को मजदूरी करने के लिए मॉरिशस लाया गया, जो कि अधिकांशत: निर्धन, गरीब एवं दलित थे। ध्यातव्य है कि अनुबंध के आधार पर जाने वाले अनपढ़ एवं अशिक्षित लोग स्वयं को गिरमिटिया संज्ञा से संबोधित करने लगे। इन अनुबंधित गरीब मजदूरों के मध्य उनकी लोक-संस्कृति रची-बसी थी, जिसका स्पष्ट स्वरूप को इस प्रकार जाना जा सकता है। जब वे धान काटते, रोपाई करते, दाना निकाल कर दौनी करते हुए इत्यादि। अर्थात् उन गरीब भारतीय मजदूरों की लोक भाषा भोजपुरी हुआ करती, जबकि पढ़े-लिखे लोग बोलचाल की भाषा के रूप में खड़ीबोली हिंदी का उपयोग करते। गिरमिटिया शब्द की उत्पत्ति 'गिरमिट' शब्द से मानी जाती है। यह शब्द अंग्रेजी के एग्रीमेंट शब्द का भोजपुरीकरण रूप है। एग्रीमेंट ग्रीमेंट (गिरमेंट) शब्द बना(दृश्य ब्रज विलाश लाल, आशुतोष कुमार, योगेन्द्र यादे (2012)) गिरमिटिया भारत के वे शर्तबंद मजदूर कहलाए जो जीविकोपार्जन हेतु सन् 1834 से लेकर 1911 के मध्य अंग्रेजी, डच तथा अन्य यूरोपिय देशों में मजदूरी हेतु एग्रीमेंट के आधार पर ले जाए गए। ये मजदूर अपने प्रारंभिक काल से वर्तमान तक हिंदी एवं हिंदी साहित्य का अलख अनेक देशो में जलाए हुए हैं, जिसे निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है-

विदेशों में हिंदी:- वर्तमान में 150 से भी अधिक विदेशी विश्व विद्यालयों में हिंदी का अध्ययन एवं अध्यापन किया जा रहा है। अमेरिका में लगभग 24 ऐसे विश्वविद्यालय हैं जिनमें हिंदी का पठन-पाठन हो रहा है। अमेरिकन यूनिवर्सिटी, वाशिंगटन डीसी, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलोफोर्निया, लॉस एंजेल्स, स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क, बफेलो, कर्नेल यूनिवर्सिटी इबात, यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनोयस शिकागो, यूनिवर्सिटी ऑफ वर्जिनिया, यूनिवर्सिटी ऑफ मिशीगन, यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास एंड ऑस्टिन आदि कुछ प्रमुख विश्वविद्यालय हैं। इसके अतिरिक्त मॉट्रियल, ओटाना (कनाडा), मॉस्को (रूस), लंदन (ब्रिटेन), बर्लिन

(बॉन), हैम्बर्ग (जर्मनी), ज्यूरिख (स्विटजरलैंड), ओस्लो (नॉर्वे), नेपल्स, वेनिस (इटली), वारस (पोलेंड), कोपनहेगन (डेनमार्क), तोक्यो (जापान), बुडापेस्ट (हंगरी), पेइचिंग (चीन), बैंकॉक (थाइलैंड) आदि में हिंदी के पी.एच.डी. स्तर अध्ययन की सुविधा है । विश्व में बिखरे हुए हिंदी जानने वालों को दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता है। एक वे देश जहाँ भारतीय लोग श्रमिक के रूप में गए हैं और आज जिनकी गणना प्रमुख नागरिकों के रूप होती है, जैसे फीजी, मॉरीशस, गुयाना, डेनमॉर्क, जर्मनी, नार्वे आदि। इसमें केन्या, दक्षिण अफ्रीकी तथा दक्षिण पूर्व एशिया में म्यांमार (बर्मा), थाईलैंड, सिंगापुर, मलेशिया, इंडोनेशिया में बसे भारतीयों को शामिल किया जा सकता है।

विदेशों में रामचरितमानस और हिंदी :– तुलसीदास रामचरितमानस वैश्विक साहित्य की महत्वपूर्ण निधि है। इसमें वेद, शास्त्र, पुराण, धर्म, संस्कृति, जीवन मूल्यों आदि का सार प्राप्त होता है। यद्यपि तुलसी ने उनकी काव्य रचना का उद्देश्य मानस में स्पष्ट किया कि वे स्वांत: सुख हेतु रघुनाथ गाथा लिख रहे हैं। लेकिन उनका सम्पूर्ण साहित्य लोकहित की दृष्टि से रचा गया है। तुलसी मानस के उत्तरकाण्ड में कलिकाल की विस्तृत चर्चा करते हैं और रामकथा का आदर्श प्रस्तुत करते हुए समाज परिवर्तन की प्रेरणा देते हैं–

''जब जब होइ धर्म की हानी ।
बाढ़हि असुर महा अभिमानी।
तब तब धरि प्रभु मनुज सरीरा।
हरहिं सकल सज्जन भव पीरा।''

इनसाइक्लोपीडिया ब्रेटानिका के अनुसार वर्तमान नेपाल, अमेरिका, मलेशिया, म्यांमार, सउदी अरब, इंग्लैंड, संयुक्त अरब अमीरात, दक्षिण अफ्रीका, कनाडा, मॉरिशस, कुवैत, त्रिनिदाद एवं टोबेगो, ओमान, आस्ट्रेलिया, सिंगापुर, फिजी, फ्रांस, गुयाना, बहरीन, सूरीनाम, इटली, कतर, नीदरलैंड, न्यूजीलैंड, कैन्या, थाइलैंड, तंजानिया, यूगांडा, जमाइका, पुर्तगाल, इजराइल आदि देशों में भारतीय विभिन्न प्रयोजनों के फलस्वरूप निवास करते हैं, जिसमें प्रमुख कारण रोजगार है। राम कथा की वैश्विक स्तर पर पहचान और इसका प्रचार प्रसार अंग्रेजी शासनकाल से तो विदेशो में माना ही जा सकता है, क्योंकि जब भारत से गिरमिटिया मजदूरों को भारत से विश्व के विभिन्न देशों में ले जाया गया तो वे अपने साथ अन्य स्थानीय लोकथाओं के साथ रामकथा एवं रामायण को अपने अपने साथ लेकर गए। भारत के विभिन्न क्षेत्रों से विदेशों में ले जाए गए अधिकांश शर्तबंध मजदूर अशिक्षित थे, उनके पास सांस्कृतिक निधि ही मुख्य थी।

रामायण, गीता और महाभारत–

भारत में प्राचीन काल से ही मौखिक परंपरा सदा से ही संस्कृति के संवहन का प्रमुख साधन रही है, जो अशिक्षितों के लिए सुलभ ज्ञानार्जन का माध्यम रही। विशेषत: रामचरितमानस की चौपाईयां उन्हें ह्रदयगंम थी। जिन देशों में भी आज तक गिरमिटिया मजदूर से लेकर आज तक भारतवंशी बसे हुए हैं, उन सभी देशों में रामचरितमानस की धार्मिक-सांस्कृतिक शक्ति ही गिरिमिटिया मजदूरों के जीवन का संबल रही और इसी से विदेशों में हिंदी भाषा एवं साहित्य को गरिमा प्राप्त हुई। जिन देशों में लोग उस काल से बसे हुए हैं रामचरितमानस को पढ़ने के लिए हिंदी सीखते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस में निहित लोकमंगल एवं सर्वकल्याण की भावना उसकी प्रसिद्धि का प्रमुख आधार है। उन्होने धर्म और मुक्ति की प्राप्ति के साधन रूप श्री राम की भक्ति की जो निर्मल अजस्र धारा प्रवाहित की वह नितांत रूप से लोकमंगलकारी सिद्ध हुई। गोस्वामी तुलसीदास की धारणा थी कि–

''सर्वे भवन्तु सुखिनरू सर्वे संतु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कश्चित दुरूख भागभवेत॥''

मॉरिशस और हिंदी :–''भारतीय गिरमिटिया मजदूर भारी संख्या में सन् 1934 में 'एटलस' नामक जहाज से मॉरिशस लाए गए थे।'' (सत्यदेव टेंगर: 2010, पृ.सं. 69) विदित है जब मजदूरों की स्थिति वर्तमान समय में भी दयनीय है तो उस समय भी खराब ही रही होगी। गिरमिटिया मजदूरों के इतिहास के माध्यम से यह स्पष्ट रूप से जाना जा सकता है कि वहाँ निवास कर रहे भारतवंशी को विभिन्न प्रकार के मौलिक अधिकारों से वंचित रखा गया। यहाँ तक कि भोजपुरिया समाज खुल कर अपनी भाषा में वार्तालाप भी नहीं कर सकते थे। इस संदर्भ में मॉरिशस के सर्वश्रेष्ठ एवं लोकप्रिय रचनाकार अभिमन्यु अनत ने अपनी सर्वश्रेष्ठ प्रसिद्ध रचना 'लाल पसीना– में लिखा है– ''जिस दिन गोरे सरदारों की ड्यूटी की बदली की जाती उस दिन सारे भारतीय मजदूर खुलकर बातें कर पाते । (अभिमन्यु अनत 'लाल-पसीना' पृष्ठ संख्या– 125) मॉरिशस के अभावग्रस्त जीवन में भी भारतीय मजदूर उनके बच्चों के शिक्षण के लिए चिंतत रहते थे और दिवस भर कड़ी मेहनत के बाद वे अपने बच्चों को यथा समय उपलब्धता रामचरितमानस एवं हनुमान चालीसा का पाठ तथा अन्य भजन कीर्तन कराते रहते, जिसे 'बैठका– कहा जाता था। यही बैठका परवर्ती काल में वहां भारतीय संस्कृति के केंद्र बने। बैठका में जो भी बाते होती हिंदी में तथा भोजपुरी में ही हुआ करती। 'बैठका प्रथा' की चर्चाएँ अभिमन्यु अनतकृत 'चौथा-प्राणी' में प्राप्त होती हैं। 'बैठका में धर्म की चर्चाएँ, रामायण-पाठ एवं हिंदी-शिक्षण जैसे महत्वपूर्ण कार्य भी होते रहें हैं। अत: गाँव में शिक्षा का माध्यम 'बैठका' ही था। जिसके माध्यम से अनपढ़ लोग भोजपुरी में बात करते जबकि पढ़े-लिखे लोग खड़ी बोली हिंदी में वार्तालाप करते। हिंदी का गोरों के शासन-काल में मजदूर बालकों की शिक्षा 'बैठका' में ही संभव हो गयी थी। (श्रीचित्रा वी. एस. उपन्यासकार अभिमन्यु अनंत, पृष्ठ संख्या– 143) इस प्रकार कहीं – न कहीं हिंदी का प्रचार उस गिरमिटिया समय की ही देन है। वर्तमान में यहां प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चस्तर पर हिंदी के अध्ययन एवं अध्यापन की व्यवस्था बनी हुई है। शिक्षण संस्थानों के अतिरिक्त सनातन धर्म मंदिर परिषद, गीता मंडल (स्थापना1920), हिंदू महासभा (स्थापना 1925),

तिलक विद्यालय (स्थापना 1926), हिंदी प्रचारिणी सभा (स्थापना 1935), आर्यविवेद प्रचारिणी सभा (स्थापना 1934), गहलोत राजपूत महासभा (स्थापना 1964), हिंदी संगठन-हिंदी स्पीकिंग यूनियन (स्थापना 1994) तथा मानव सेवा निधि आदि संस्थाएं के माध्यम से हिंदी भाषा एवं साहित्य शिक्षण कार्य कर रही हैं। श्री जितेन्द्र कुमार मित्तल की पुस्तक 'मॉरिशस देश और निवासी'' के अनुसार-''भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व मॉरिशस में स्थिति यह थी कि भारतीय मूल के सभी मॉरिशस वासियों की साहित्य की भाषा खड़ीबोली हिंदी थी, किन्तु भारत के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वहाँ से आने वालों में प्रांतीयता की भावना और भाषा का उन्माद स्वरूप उत्पन्न हुआ है। फलस्वरूप अब हिंदी के बल हिंदी भाषी राज्यों से आये हुए लोगों तक सिमटती जा रही है दृश्य श्री जितेन्द्र कुमार मित्तल, 'मॉरिशस देश और निवासी', पृष्ठ संख्या- 67)

दक्षिण अफ्रीका:- दक्षिण अफ्रीका में 1860 में भारतीय मजदूरों को ले जाया गया। 20वीं सदी के प्रारंभ में दक्षिण अफ्रीका में भारतवंशियों ने स्वैच्छिक धार्मिक सांस्कृतिक संस्थानों की स्थापना की। डर्बन विश्वविद्यालय (1961), हिंदी शिक्षा संघ (1948) तथा स्कूली स्तर पर हिंदी शिक्षणा प्रगतिन्मुख है। ''हिंदी शिक्षा संघ की स्थापना से पूर्व, दक्षिण अफ्रीका में हिंदी के प्रचार प्रसार का कार्य मुख्य रूप से सामुदायिक संस्थाओं की थी। 1860 में गिरमिटिया मजदूरों के आगमन के समय से धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम इस प्रयोजन के लिए उपयोगी और अनौपचारिक मंच प्रदान करते थे।''

मेडागास्कर:-19वीं सदी में रोजगारादि के अवसरों की तलाश में पहुँच अधिकांश भारतीय गुजराती, मुस्लिम एवं कुछ सिंधी लोग थे। चूंकि इनका प्रवास व्यापारिक दृष्टि से था इन लोगों ने फ्रेंच या अंग्रेजी, मालागासी आदि भाषाओं को अध्ययन किया और सीखने के पश्चात जीवन यापन करने लगे। परंतु जैसा कि विदित है कोई व्यक्ति कितना भी अन्य भाषा में पारंगत क्यों न हो जाए मातृभाषा की झलक कहीं न कहीं परिलक्षित हो ही जाती है अत: इनकी अपनी भाषा गुजराती एवं मुस्लिम वर्ग में हिंदी उर्दू मिश्रित भाषा प्रयुक्त होती है।

फीजी और हिंदी:-फीजी में प्रथम प्रवासी भारतीयों का आगमन सन 1879 में हुआ। भारत से दूर सुदूर पूर्व में प्रशांत महासागर के दक्षिण प्रांगण में 400 से भी अधिक छोटे-छोटे द्वीपों का समूह फीजी भी ग्रेट ब्रिटेन का एक उपनिवेश था। गिरमिट काल में साहित्य रचना नगण्य ही रही है। चालीस वर्षो के इस अंतराल में रामायण, महाभारत, आल्हखंड जैसे महाकाव्यों से संबंधित कथाएँ कहा-सुनी जाती रहीं, साथ ही अन्य प्रेरक एवं मनोरंजक किस्सा-कहानी भी समय काटने का माध्यम रहीं। पूरे गिरमिट काल में अव्यवस्थित ढंग से हिंदी साँस लेती रही, हिंदी जीवित रही। इन दिनों पारंपरिक एवं तत्कालीन परिस्थितियों पर आधारित लोकगीतों का ही बोल-बाला था जो विशेषत: लोक रीतियों को पुष्ट करता रहा, उनका संरक्षण और संवर्धन करता रहा।

सूरीनाम:- दक्षिण अमेरिका के छोटे से देश सूरीनाम में भी लगभग चार लाख लोग रहते हैं जिनमें से आधे भारतीय मूल के हैं। सूरीनाम में 1860 से हिंदी की पढ़ाई प्रारंभ हुई। प्रो. स्कोकर, दाम्सतेक, शीतल प्रसाद, रहमान खां, गुरूदत्त, कलासिंह, सूर्य प्रसाद बीरे हिंदी के प्रमुख लेखक हैं। यहाँ की राष्ट्रभाषा 'डच' है। इसलिए यहाँ की हिंदी जिसे 'सरनामी' के रूप में जाना जाता है पर भोजपुर एवं डच दोनों का प्रभाव परिलक्षित होता है।

हॉलेंड:-हॉलेंड में भारतीयों का आगमन दो रूपों में हुआ। प्रथम सीधे भारत से आकर बसे हुए तथा द्वितीय सूरीनाम से लाए गए। स्पष्ट है कि यहाँ की हिंदी सूरनामी हिंदी जैसे ही प्रतीत होती है और डच भाषा के शब्दों का बाहुल्य है। कटेलर, डेविड मिल, डॉ. देमिस्तोख्त, युत्रेख्त आदि यहां के प्रमुख हिंदी लेखक रहे हैं।

उजबेकिस्तान:-उजबेकिस्तान में हिंदी का जो रूप प्रचलित है उसे 'पारया' के नाम से जाना जाता है।

त्रिनिदाद:-वेस्ट इंडीज के त्रिनिदाद और टोबैगो द्वीपों में भारतवंशी हिंदी भाषी निवास करते हैं। यहां अंग्रेजी का प्रचार अधिक होने के कारण यहां की हिंदी पर अंग्रेजी का प्रभाव ज्यादा है। 'त्रिनिदादी हिंदी' में हिंदी 'त' अंग्रेजी के 'ट' के रूप में उच्चरित होता है। यथा- जाता के लिए जाटा, खाता के लिए खाटा इत्यादि।

गुयाना:-अमेरिका महाद्वीप में अवस्थित गुयाना द्वीप में प्रथमत: भोजपुरी भाषियों का आगमन हुआ। यहां भी अंग्रेजी का प्रभाव अधिक होने के कारण यहां की हिंदी पर अंग्रेजी एवं भोजपुरी दोनों का प्रभाव दिखाई देता है। गुयान में प्रचलित हिंदी को 'टूटल' भाषा के रूप में जाना जाता है। यहां शिक्षित वर्ग मानक हिंदी का प्रयोग करते हैं तथा अशिक्षित लोग भोजपुरी का।

इंडोनेशिया:-इंडोनेशिया में अनुमानित रूप से लगभग 25000 भारतीय मूल के व्यक्तियों/अनिवासी भारतीय हैं जो मूलत: बिहारी, तमिल एवं सिख हैं। ये भी अंग्रेजी, भोजपुरी, तमिल मिश्रित हिंदी का प्रयोग करते हैं। इंडोनेशिया मुस्लिम देश है, फिर भी यहां रामलीला बहुत लोकप्रिय है। यहां के लोग स्वीकार करते हैं कि श्री राम उनके पूर्वज हैं। यह बात अलग है कि उनकी उपासना पद्धति अलग है। गत वर्ष अयोध्या में भव्य दीपावली मनाई गई थी, उसमें कोरिया की महारानी मुख्यातिथि के रूप में शामिल हुई थी। उनका कहना था कि वह भी श्री राम की वंशज हैं।

इंग्लैंड:-इंग्लैंड से भारत के राजनीतिक एवं व्यापारिक संबंध रहें हैं। लगभग डेढ़ सौ वर्ष तक भारत पर अंग्रेजों का शासन रहा। जिस तरह भारत इग्लैंड से प्रभावित हुआ उसी तरह इग्लैंड भी भारत से प्रभावित हुआ। भाषा की दृष्टि से देखें तो इग्लैंड हिंदी का गढ़ है। लंदन और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयों में ही नहीं यहां के अन्य विश्वविद्यालयों में हिंदी के अध्ययन एवं अध्यापन की पर्याप्त व्यवस्था है। यहां की हिंदी पर अंग्रेजी का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। यहां के हिंदी प्रयोक्ता हिंदी की मूल ध्वनियां अंग्रेजी भाषा के समान उच्चरित करते हैं।

विदेशों में रामलीला:-आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने तुलसी को लोकनायक मानते हुए कहते हैं कि 'लोकनायक वही हो सकता है जो

समन्वय कर सके, क्योंकि भारतीय जनता में नाना प्रकार की परस्पर विरोधिनी संस्कृतियाँ, साधनाएं, जातियाँ, आचार, निष्ठा और विचार पद्धतियाँ प्रचलित हैं। तुलसी का सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, और वैराग्य का समन्वय, भक्ति और ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृति का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, पांडित्य और अपांडित्य का समन्वय है। रामचरितमानस शुरू से अंत तक समन्वय-काव्य है।'' (डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका पृष्ठ-101) रामचरितमानस वैश्विक मूल्यों एवं मानव समाज के समन्वय वाला महाकाव्य है और इसी का परिणाम है कि आज विश्व स्तर पर इसकी पहचान है। डॉ दिलीप अग्निहोत्री के अनुसार ब्रिटिश राज्य में गिरमिटिया मजदूर बनकर गरीब भारतीय मॉरीशस, त्रिनिदाद, फिजी आदि अनेक देशों में गए थे। ये अपने साथ रामचरितमानस की प्रति लेकर गए थे। सदियों बाद भी ये अपने को श्रीराम का वंशज बताने में गर्व का अनुभव करते हैं। यहां भी रामलीला बहुत लोकप्रिय है। यहां कई स्थानों में मंच की जगह मैदान में रामलीला होती है। बड़ी संख्या में दर्शक उसका अवलोकन करते हैं। रामनगर की रामलीला विश्व प्रसिद्ध है। यहां आज भी बिना माइक के मशाल की रोशनी में रामलीला होती है। कम्बोडिया में रामलीला मंचन का अलग रूप है। ......अन्तर्राष्ट्रीय रामायण महोत्सव के अन्तर्गत फिजी की प्रस्तुति में दिखाया गया। फिजी में भारतीय मूल के लोग बहुमत में है। तब उन्होंने सुनिश्चित किया कि उनकी समृद्धशाली भारतीय संस्कृति, धार्मिक विरासत, पारम्परिक लोकसंगीत, लोकगीत, महाकाव्यों में रामायण और भगवदगीता, जो कि हमारी सबसे कीमती धरोहर है, को वह अपने साथ लेकर गए। यह धरोहर और विरासत आज भी फिजी में पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित है।

नेपाल, मॉरीशस, मलेशिया, इंडोनेशिया, फिजी, गुयाना में भी रामलीलाएं बड़े पैमाने पर होती हैं। नेपाल में जनकपुर की रामलीला देखने के लिए अनेक देशों से लोग आते हैं। मुस्लिम देश इंडोनेशिया और मलेशिया में होने वाली रामलीलाओं में सभी पात्र मुसलमान ही होते हैं। वे लोग वहां की स्थानीय रामायण के अनुसार रामलीला करते हैं।

डॉ. शशिबाला के अनुसार विदेशों में कई देशों में रामायण का मंचन किया जाता है। थाईलैंड में रामायण 'केइन' कहलाती है। वहां की भावनाओं कल्पनाओं, सामाजिक और धार्मिक जीवन मूल्यों और साहित्यिक अभिरुचियों के अनुरूप रामकथा में अनेक परिवर्तन एवं परिवर्धन हो गये हैं। परंतु मूल भावना रामकथा की है। वहां रावण पर श्रीराम की विजय, अधर्म पर धर्म की विजय को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। इंडोनेशिया में रामायण के विभिन्न रूप देखने को मिलते हैं। 'वायाङ' और 'केचक' का प्रचलन अन्य देशों से अलग है। मीकांग (मां गंगा) नदी के पूर्व की ओर बसे छोटे-से देश लाओस में मूर्तिकला, चित्रकला, नृत्य नाटिका और संगीत आदि रामकथा पर आधारित होती हैं। यहां 18वीं शताब्दी से रामलीला होती आ रही है। लाओस की रामायण फ्रम्लक फ्रम्लाम (प्रिय लक्ष्मण प्रिय राम) में लक्ष्मण को प्रमुख स्थान प्राप्त है। यहां रावण को दस सिरे या बीस भुजाओं वाला नहीं बनाया जाता। वह एक सुंदर राजकुमार है जिस पर इन्द्र की विशेष अनुकम्पा है। यहां तक कि सीताहरण के समय वह स्वयं सुवर्ण मृग बनकर आता है। लाओ रामायण में मारीच का प्रसंग नहीं दिया जाता है। कम्बोडिया में रामलीला सातवीं शताब्दी से लोकप्रिय है और रामायण के अभिनय का ज्ञान राष्ट्रीय निधि माना जाता है।

''रामलीला का आयोजन भारत में तो अत्यन्त प्राचीन काल से होता ही रहा है, विदेशों में भी सहस्त्रों वर्षो से बसे भारतीय इसे अक्षुण्ण बनाये हुए हैं। इस प्रकार रामलीला ने विदेशों में स्थापित भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध को ऐसा दृढ बना दिया है कि सहस्त्रों वर्षो तक निरंतर प्रयत्न करते रहने पर भी काल उसे नष्ट करने में समर्थ नहीं हो सका है। इसमें सांस्कृतिक जीवन कि ऐसी महत्तपूर्ण झाँकी मिलती है जो इस युग में भी समस्त क्षेत्रों में मानव का पथ-प्रदर्शन करने में सर्वथा समर्थ है।''

निष्कर्षः-

विदेशों में रह रहे गरीब भारतवंशी शोषित, पीड़ित, प्रताड़ित, एवं अपमानित अवस्था में रहते हुए भी भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों को बचाए रखने में सफल रहने के साथ-साथ अपनी भाषागत एकता के मूल्यों को भी बनाए रखने में सफल हुए और इनके पीछे जिस भावना या आधार की भूमिका रही वह थी रामकथा विशेषकर ''रामचरितमानस' । 'सभी प्रवासी भारतीय विदेश में अपनी भाषा की रक्षा, संरक्षा, एवं भाषा के प्रति सचेष्ट है, यही कारण है कि सर्वत्र विदेश में जहाँ-जहाँ भारतीय, प्रवासी या अप्रवासी के रूप में गए हैं वे हिंदी बोलने का प्रयत्न करते हैं और अपनी भाषा एवं संस्कृति पर उन्हें गर्व है। वे अपनी अगली पीढ़ी को हिंदी सिखाना चाहते हैं। क्योंकि वही हिंदी उन्हें विदेश में जोड़ने वाली ताकत है। (विमलेश कांति वर्मा: 2017, पृष्ठ संख्या-7) ऐसा भी नहीं है कि जिन विदेशों में जहां हिंदू जनसंख्या का बाहुल्य है वहीं रामचरितमानस या रामलीला का लोकप्रिय है। विश्व के पचास से अधिक देशों में व्यापक स्तर पर रामलीला का आयोजन होता है। वहाँ आज भी रामचरितमानस हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है।

19वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में भारत से अधिकांश मजदूरों को मजदूरी करने के लिए मॉरिशिस लाया गया, जो कि अधिकांशतः निर्धन, गरीब एवं दलित थे। ध्यातव्य है कि अनुबंध के आधार पर जाने वाले अनपढ़ एवं अशिक्षित लोग स्वयं को गिरमिटिया संज्ञा से संबोधित करने लगे।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का जीवन दर्शन

■ प्रो. दिग्विजय कुमार शर्मा
संस्कृति विश्वविद्यालय, मथुरा

सभी धर्मग्रन्थों में राम को सबसे आदर्श पुरुष माना गया है। सांसारिक जीवन में आगे बढ़ने, नाम कमाने यानी ख्याति, यश, कीर्ति के लिए सद्‌गुणों और अच्छे कामों की बड़ी भूमिका होती है, क्योंकि गुण ही किसी भी इंसान को असाधारण और विलक्षण प्रतिभा का स्वामी बना देते हैं।

भगवान श्री राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है। क्योंकि उन्होंने अपने जीवनकाल में कभी भी किसी मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया। उनका व्यक्तित्व मर्यादा, नैतिकता, विनम्रता, करूणा, क्षमा, धैर्य, त्याग तथा पराक्रम का सर्वोत्तम उदाहरण माना जाता है। क्षत्रिय कुल में जन्म लेने के बाद भी उन्होंने बहुविवाह नहीं किया। मर्यादा पालन करने के लिए राज्य, परिवार सब कुछ त्याग कर जंगल में बनवास के लिए चले गए। उन्होंने रावण का वध करने के बाद तथा स्वर्ण लंका पर विजय के बाद भी वहां पर राज नहीं करके वहां का राजा रावण के भाई विभीषण को बनाया।

राम को मर्यादा पुरुषोत्तम इसलिए कहा जाता है कि एक पुरुष में जो भी उच्चतम गुण हो सकते हैं वो सभी राम के पास हैं, राम एक आदर्श पुत्र, एक आदर्श भाई, एक आदर्श मित्र, एक आदर्श राजा, एक आदर्श पति और एक आदर्श पिता है। राम ने दुर्जनों का संहार किया तो सज्जनों का उद्धार भी किया। राम ने अपने समय में एक राज्य का उदाहरण प्रस्तुत किया जहाँ सभी सुख शांति और अमन चैन से रहते थे।

भगवान राम ने हनुमानजी से प्रथम भेंट पर कहा-सो अनन्य जाके असि मति न टरे हनुमंत, मैं सेवक सचराचर रुप राशि भगवंत।

अर्थात् हे हनुमानजी, अनन्य भक्त वह है, जिसकी बुद्धि में यह पक्का निश्चय हो कि मैं सेवक हूँ, और रूपराशि याने चराचर के स्वरूप में दिखने वाला यह विश्व ही भगवान है।

भगवान ने उत्तरकाण्ड में याने राजकाज सम्हालने के बाद अंगद विभीषण आदि सहित सभी से कहा-निज ग्रह जाहु सखा सब भजहु मोहित दृण नेम, सदा सर्वगत सर्वहित जानि करहु अति प्रेम।

राम को मर्यादा पुरुषोत्तम
इसलिए कहा जाता है कि
एक पुरुष में जो भी उच्चतम
गुण हो सकते हैं
वो सभी राम के पास हैं,
राम एक आदर्श पुत्र,
एक आदर्श भाई,
एक आदर्श मित्र,
एक आदर्श राजा,
एक आदर्श पति और
एक आदर्श पिता है।
राम ने दुर्जनों का संहार किया
तो सज्जनों का उद्धार भी किया।

अर्थात् अब सब अपने अपने घर जाओ और मेरी भक्ति करो, वो कैसी कि, मुझे सबमें व्याप्त देखो और ऐसा देखकर सर्वहित के कार्य करो। सबसे प्रेम करो।

उन्होंने मानव मात्र के लिए मर्यादा पालन का जो आदर्श प्रस्तुत किया वह संसार के इतिहास में कहीं और नहीं मिल सकता।

उन्होंने अपना पहला आदर्श आज्ञाकारी पुत्र के रूप में प्रस्तुत किया। उनके पिता राजा दशरथ अपनी रानी कैकेयी से वचनबद्ध थे। रानी कैकेयी ने ठीक उस समय जब राम का राज्यभिषेक होने वाला था, राम को वनवास और अपने पुत्र भरत के लिए राजतिलक की मांग कर दी। दशरथ नहीं चाहते थे परंतु अपने पिता के वचन का पालन करने के लिए राम ने एक पल में राजपाट को त्याग दिया और वनवासी बनकर वनों को चले गए। पूरे चौदह वर्ष उन्होंने वन में बिताए। ऐसा आदर्श कौन प्रस्तुत कर सकता है। संसार में जितने भी युद्ध और लड़ाइयां अब तक हुई हैं वे राज प्राप्ति के लिए हुई हैं परंतु भगवान राम ने जो आदर्श प्रस्तुत किया उसकी तो कल्पना भी नहीं कर सकते।

दूसरा आदर्श उन्होंने एक आदर्श भाई का प्रस्तुत किया। यद्यपि भरत की माता कैकेयी ने उन्हें राजपाट के बदले वनवास दिलाया था परंतु श्रीराम ने भरत से न ईर्ष्या की और न द्वेष। वह निरंतर भरत के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित करते रहे और उसे राज-काज संभालने की प्रेरणा देते रहे। उन्होंने उसे कभी अपना प्रतिद्वंदी नहीं समझा। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के द्वारा स्थापित आदर्श भातृ-प्रेम के आदर्श को अपनाकर हम उनसे प्रेरणा ले सकते हैं।

तीसरा आदर्श उन्होंने आदर्श पति का प्रस्तुत किया। वह चौदह वर्ष वनों में वनवासी होकर रहे और वनों में रहने वाले ऋषियों-मुनियों की सेवा का व्रत लिया। जो राक्षस ऋषियों के यज्ञ में विघ्न डालते थे उन राक्षसों का संहार किया। इस काल में उन्होंने गृहस्थ की चिंता नहीं की अपितु अपनी संपूर्ण शक्ति को राक्षसों का संहार करने के लिए लगाया।

रावण ने जब उनकी धर्मपत्नी सीता जी का अपहरण करने का

दु:स्साहस किया तो भगवान श्रीराम ने इस दुष्कृत्य के लिए रावण का सर्वनाश कर दिया।

श्रीराम ने अपने जीवन काल में कभी भी समाज के मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं किया था। इसलिए वह एक मर्यादित पुरुष हैं। उन्हें पुरुषोत्तम इसलिए कहा जाता है क्योंकि वे उत्तम गुणों का भंडार हैं। वाल्मीकि रामायण में उनके गुणों का उल्लेख कुछ इस प्रकार से मिलता है-

श्री राम बड़े ही रूपवान और पराक्रमी थे। वे किसी के दोष नहीं देखते थे। भूमण्डल में उनकी समता करने वाला कोई नहीं था। वे अपने गुणों से पिता दशरथ के समान एवं योग्य पुत्र थे।

वे सदा शान्त चित्त रहते और सांत्वनापूर्वक मीठे वचन बोलते थे, यदि उनसे कोई कठोर बात भी कह देता तो वे उसका उत्तर नहीं देते थे।

कभी कोई एक बार भी उपकार कर देता तो वे उसके उस एक ही उपकार से सदा संतुष्ट रहते थे और मन को वश में रखने के कारण किसी के सैकड़ों अपराध करने पर भी उसके अपराधों को याद नहीं रखते थे।

अस्त्र-शस्त्रों के अभ्यास के लिए उपयुक्त समय में भी बीच-बीच में अवसर निकालकर वे उत्तम चरित्र में, ज्ञान में तथा अवस्था में बढ़े-चढ़े सत्पुरुषों के साथ ही सदा बातचीत करते (और उनसे शिक्षा लेते थे)।

वे बड़े बुद्धिमान थे और सदा मीठे वचन बोलते थे। अपने पास आये हुए मनुष्यों से पहले स्वयं ही बात करते और ऐसी बातें मुँह से निकालते जो उन्हें प्रिय लगें, बल और पराक्रम से सम्पन्न होने पर भी अपने महान पराक्रम के कारण उन्हें कभी गर्व नहीं होता था।

झूठी बात तो उनके मुख से कभी निकलती ही नहीं थी। वे विद्वान थे और सदा वृद्ध पुरुषों का सम्मान किया करते थे। प्रजा का श्रीराम के प्रति और श्रीराम का प्रजा के प्रति बड़ा अनुराग था।

वे परम दयालु क्रोध को जीतने वाले और ब्राह्मणों के पुजारी थे। उनके मन में दीन-दु:खियों के प्रति बड़ी दया थी। वे धर्म के रहस्य को जानने वाले, इन्द्रियों को सदा वश में रखने वाले और बाहर-भीतर से परम पवित्र थे।

अपने कुलोचित आचार, दया, उदारता और शरणागत रक्षा आदि में ही उनका मन लगता था। वे अपने क्षत्रिय धर्म को अधिक महत्व देते और मानते थे। वे उस क्षत्रिय धर्म के पालन के महान स्वर्ग (परम धाम) की प्राप्ति मानते थे, अत: बड़ी प्रसन्नता के साथ उसमें संलग्न रहते थे।

वाल्मीकि श्री राम के गुणों का आगे वर्णन करते हुए लिखते हैं-अमंगलकारी निषिद्ध कर्म में उनकी कभी प्रवृत्ति नहीं होती थी, शास्त्र विरुद्ध बातों को सुनने में उनकी रुचि नहीं थी, वे अपने न्यायमुक्त पक्ष के समर्थन में बृहस्पति के समान एक-से-एक बढ़कर युक्तियाँ देते थे।

उनका शरीर निरोग था और अवस्था तरुण। वे अच्छे वक्ता, सुन्दर शरीर से सुशोभित तथा देश काल के तत्व को समझने वाले थे। उन्हें देखकर ऐसा जान पड़ता था कि विधाता ने संसार में समस्त पुरुषों के सारतत्व को समझने वाले साधु पुरुष के रूप में एकमात्र श्रीराम को ही प्रकट किया है।

राजकुमार श्रीराम श्रेष्ठ गुणों से युक्त थे। वे अपने सद्‌गुणों के कारण प्रजाजनों को बाहर विचरने वाले प्राण की भाँति प्रिय थे।

भरत के बड़े भाई श्रीराम सम्पूर्ण विद्याओं के व्रत में निष्णात और छहों अङ्गों सहित सम्पूर्ण वेदों के यथार्थ ज्ञाता थे। बाण विद्या में तो वे अपने पिता से भी बढ़कर थे।

वे कल्याण की जन्मभूमि, साधु, दैन्यरहित, सत्यवादी और सरल थे, धर्म और अर्थ के ज्ञाता वृद्ध ब्राह्मणों के द्वारा उन्हें उत्तम शिक्षा प्राप्त हुई थी।

उन्हें धर्म, काम और अर्थ के तत्त्व का सम्यक ज्ञान था। वे स्मरणशक्ति से सम्पन्न और प्रतिभाशाली थे। वे लोकव्यवहार के सम्पादन में समर्थ और समयोचित धर्माचरण में कुशल थे।

वे विनयशील, अपने आकार (अभिप्राय) को छिपाने वाले, मन्त्र को गुप्त रखने वाले और उत्तम सहायकों से सम्पन्न थे। उनका क्रोध अथवा हर्ष निष्फल नहीं होता था। वे वस्तुओं के त्याग और संग्रह के अवसर को भलीभाँति जानते थे।

गुरुजनों के प्रति उनकी दृढ भक्ति थी। वे स्थितप्रज्ञ थे और असदद्वस्तुओं को कभी ग्रहण नहीं करते थे। उनके मुख से कभी दुर्वचन नहीं निकलता था। वे आलस्य रहित, प्रमाद शून्य तथा अपने और पराये मनुष्यों के दोषों को अच्छी प्रकार जानने वाले थे।

वाल्मीकी जी यहीं नहीं थकते। वे श्रीराम के अन्य गुणों का आगे वर्णन करते हुए लिखते हैं-

वे शास्त्रों के ज्ञाता, उपकारियों के प्रति कृतज्ञ तथा पुरुषों के तारतम्य को अथवा दूसरे पुरुषों के मनोभाव को जानने में कुशल थे। यथायोग्य निग्रह और अनुग्रह करने में वे पूर्ण चतुर थे।

उन्हें सत्पुरुषों के संग्रह और पालन तथा दुष्ट पुरुषों के निग्रह के अवसरों का ठीक-ठीक ज्ञान था। धन की आय के उपायों को वे अच्छी तरह जानते थे (अर्थात् फूलों को नष्ट न करके उनसे रस लेने वाले भमरों की भाँति वे प्रजाओं को कष्ट दिये बिना ही उनसे न्यायोचित धन का उपार्जन करने में कुशल थे) तथा शास्त्रवर्णित व्यय कर्म का भी उन्हें ठीक-ठीक ज्ञान था।

उन्होंने सब प्रकार के अस्त्र समूहों तथा संस्कृत, प्राकृत आदि भाषाओं से मिश्रित नाटक आदि के ज्ञान में निपुणता प्राप्त की थी। वे अर्थ और धर्म का संग्रह (पालन) करते हुए तदनुकूल काम का सेवन करते थे और कभी आलस्य को पास नहीं फटकने देते थे।

विहार (क्रीडा या मनोरंजन) के उपयोग में आने वाले संगीत वाद्य और चित्रकारी आदि शिल्पों के भी वे विशेषज्ञ थे। अर्थो के विभाजन का भी उन्हें सम्यक ज्ञान था। वे हाथियों और घोड़ों पर चढ़ने और उन्हें भाँति-भाँति की चालों की शिक्षा देने में भी निपुण थे।

श्रीरामचन्द्र जी इस लोक में धनुर्वेद के सभी विद्वानों में श्रेष्ठ थे। अतिरथी वीर भी उनका विशेष सम्मान करते थे। शत्रुसेना पर आक्रमण और प्रहार करने में वे विशेष कुशल थे। सेना-संचालन की नीति में उन्होंने अधिक निपुणता प्राप्त की थी।

संग्राम में कुपित होकर आये हुए समस्त देवता और असुर भी उनको परास्त नहीं कर सकते थे। उनमें दोष दृष्टि का सर्वथा अभाव था। वे क्रोध को जीत चुके थे। दर्प और ईर्ष्या का उनमें अत्यन्त अभाव था।

किसी भी प्राणी के मन में उनके प्रति अवहेलना का भाव नहीं था। वे काल के वश में होकर उसके पीछे-पीछे चलने वाले नहीं थे (काल ही उनके पीछे चलता था)। इस प्रकार उत्तम गुणों से युक्त होने के कारण राजकुमार श्रीराम समस्त प्रजाओं तथा तीनों लोकों के प्राणियों के लिये आदरणीय थे। वे अपने क्षमा सम्बन्धी गुणों के द्वारा पृथ्वी की समानता करते थे। बुद्धि में बृहस्पति और बल-पराक्रम में शचीपति इन्द्र के तुल्य थे।

जैसे सूर्यदेव अपनी किरणों से प्रकाशित होते हैं। उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजी समस्त प्रजाओं को प्रिय लगने वाले तथा पिता की प्रीति बढ़ाने वाले सद्गुणों से सुशोभित होते थे। वाल्मीकि रामायण संस्कृत से अनुवाद उद्धरण।

वैसे तो मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम का सम्पूर्ण जीवन रामत्त्व है जो हम सभी के लिए अनुसरणीय है। किन्तु उनके जीवन की कुछ महत्वपूर्ण बातें हैं जो हम सीख सकते हैं। उनका हम सभी को अनुसरण करना चाहिए।

1. विनम्रता एवं शालिनता- जब भगवान श्री राम ने सीता स्वयंवर में शिव धनुष तोड़ा था। तब परशुराम जी क्रोधित हो गए थे। जिससे सभा में उपस्थित सभी राजा भयभीत हो गए । लक्ष्मण जी उग्र स्ववाभ के थे। उनका विवाद परशुराम जी से हो गया था। किन्तु राम जी ने विनम्रता से बात की तथा विवाद को शांत किया।

2. क्षमा- जब कैकई ने अपनी गलती को स्वीकार किया तो उन्होंने कैकई को क्षमा किया।

3. धैर्य- जब माँ सीता का अपहरण हुआ तो उन्होंने धेर्य नहीं खोया और सीता को पुनः प्राप्त करने के लिए रामजी ने हनुमान, विभीषण और वानर सेना की मदद से रावण को पराजित किया।

4. त्याग- अपने पिता के दिए हुए वचन के कारण उन्होंने माता पिता, मित्र, राज्य सब का त्याग कर दिया और बारह वर्ष का वनवास किया।

5. राष्ट्रप्रेम- विभीषण का राजतिलक-जब रामचन्द्र जी ने लंका पर विजय हासिल की। तब लक्ष्मण जी ने उनको वहाँ पर राज करने की बात कही तब श्री राम जी ने कहा-अपि स्वर्णमयी लंका में लक्ष्मण रोचते। जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

ऐसे थे हमारे मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम।

Ph. : 9319967375, 9837102459, 8126455566, 7060028426

राम कथा के कुछ अनूठे लोक काव्य

■ **डॉ. प्रशांत अग्निहोत्री**
निदेशक रुहेलखण्ड शोध संस्थान

■ **डॉ. दिव्या गुप्ता**
रघुनंदन प्रसाद सरदार पटेल पी.जी. महिला महाविद्यालय

भगवान राम लोकनायक हैं। उनके लोकनायक रूप के दर्शन साहित्य में सभी जगह दृष्टिगोचर होते हैं। महर्षि वाल्मीकि द्वारा संस्कृत में रचित रामायण के मानवीय गरिमा युक्त राम, भारत ही नहीं विश्व की तमाम भाषाओं में कवियों और लेखकों की भावनाओं के अनुरूप विविध रूपों में हमारे सामने उपस्थित होते हैं। नौवीं शताब्दी में तमिल कवि कंबन द्वारा लिखी गई कंब रामायण में राम को दैवीय और मानवीय दोनों गुणों के समन्वित रूप में चित्रित किया गया है। वहीं अवधी भाषा में रचित गोस्वामी तुलसीदास की रामचरितमानस में राम सम्पूर्ण दैवीय और अवतारी पुरुष के रूप में स्थापित होते हैं। संभवत विश्व की ऐसी कोई भी भाषा नहीं होगी जिसमें राम की कथा लिखी न गयी हो। थाईलैंड, इंडोनेशिया, जापान, जावा, मलाया, सुमात्रा, श्रीलंका आदि देशों में राम कथा वहां के जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। भारत में हिंदी में लिखे गये राम काव्य और कथाओं से पूर्व में प्राकृत, अपभ्रंश और संस्कृत में अनेक राम कथाएं लिखी गईं इनमें प्राकृत में लिखित बौद्ध और जैन ग्रंथों में विमलसूरि की पउम चरियम, प्रवरसेन की रावण वध, भुवनतुंग सूरि की रामचरियम् और सिया चरियम्, स्वयंभू की पउम चरिउ, गुणभद्र की उत्तर पुराण आदि प्रमुख हैं। पुष्पदंत की अपभ्रंश में लिखित महापुराण में भी राम की कथा वर्णित है। संस्कृत के विभिन्न कवियों ने राम कथा से संबंधित विभिन्न काव्य और नाटक लिखे। ब्रह्मांड पुराण के उत्तर खंड के भाग के रूप में आध्यात्म रामायण, कालिदास का रघुवंशम, आनन्द रामायण, भट्टि का भटिटकाव्य (रावण वध), भास लिखित नाटक प्रतिमा और अभिषेक, महाकवि भवभूति रचित महावीर चरित और उत्तर राम चरितम्, अनंगहर्ष का उदात राघव (नाटक), कुमारदास की जानकीहरण, क्षेमेन्द्र की रामायण मंजरी, दिड्.नाग का नाटक कुन्दमाला, साकल्यमल की उदार राघव, वामन भट्ट की रघुनाथ चरित, जानकी परिणय चक्रकवि, राघवोल्लास (नाटक)अद्वैत कवि, अनर्घ राघव (नाटक) मुरारि, बाल रामायण (नाटक) सोमेश्वर, राघव पाण्डवीय धनंजय आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त भी अन्य भारतीय भाषाओं में राम कथाएं बहुतायत में लिखी गई। बांग्ला भाषाा में कृतिवासी की लिखी कृतिवास रामायण, तेलुगु में रंग द्वारा रचित रंग रामायण और भास्कर की भास्कर रामायण, मराठी में रचित एकनाथ की भावार्थ रामायण और गिरधर स्वामी की अर्द्ध रामायण काफी प्रसिद्ध हुई। वहीं केशव द्वारा लिखी गई रामचंद्रिका, मैथिलीशरण गुप्त के साकेत और राधेश्याम कथावाचक द्वारा लिखी गई राधेश्याम रामायण को भी सम्मानित स्थान प्राप्त हुआ। हिंदी भाषा में पुनर्जागरण काल में भारतेंदु युग और उसके तत्काल बाद भी हिंदी में अनेक कवियों द्वारा अपने-अपने ढ़ंग से राम कथाओं को गाया गया। उनके द्वारा रचे गए राम कथा काव्य में युग के अनुरूप अनेक प्रयोग दिखाई देते हैं। अधिकांशत: लिथो प्रेस में छपी पुस्तकों में राम कथाओं को विविध छन्दों में लिखा गया है। राम अवतार बारहमासा, आल्हा रामायण, गजल रामलीला, नाटक सहित विविध छन्दों में प्रयोगधर्मी रूपों में यह कथाएं कही गई हैं।

बुद्धि विलास :

ऐसी ही एक पुस्तक बुद्धि विलास है। यह गणेश प्रसाद, जो फर्रुखाबाद के कूंचा सालिक राम मोहल्ले के रहने वाले थे, के द्वारा लिखित है। इसे फतेहगढ़ के ही बजाजे मोहल्ले के हुसैन बख्श की प्रेस में सन 1888 में छापा गया है। इसमें भगवान विष्णु के दशावतार का वर्णन है। इसकी भाषा कन्नौजी हैं। राम अवतार कथा में तुलसीदास की भांति ही इसमें भी काण्ड का निरूपण किया गया है। बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किंधाकाण्ड, सुंदरकाण्ड, लंकाकाण्ड और उत्तरकाण्ड, बाल काण्ड में राम जन्म से लेकर सीता से उनके विवाह तक की कथा बारहमासा के रूप में है। जिसमें चैत्र से लेकर फाल्गुन तक माहों में क्रमागत रूप से राम की लीलाओं का वर्णन है। प्रत्येक माह में कथा का वर्णन गीतिका छंद में है और अंत में दोहे के साथ समापन हुआ है। एक बानगी देखें-

चैत जन्मे अवधि पुर सुत चारि दशरथ के भये।
सुनि खचरि भूपति मुदित मन आनंद उर छाये नये॥
पुरवाय मोतिन चौक कंचन कलश आंगन भरि दिये॥
आये सकल मुनि विविध पंडित भुवन भूपति के गये॥

फाल्गुन मास में लौंद के अतिरिक्त महीने का भी वर्णन है, जहाँ विवाह के बाद श्री राम के सीता सहित लौटकर अयोध्या आने की कथा है-

मुख देखि दूलह राम दुलहिन जानकी आनंद भरी।
कंचन सजो है थार जननी मुदित मन आरती करी॥
जै कारैं सूर सुमन बर्षत गंगन ते लगी झरी॥
सो सुख उमा नहिं जात वरनो करैं परछनि सुंदरी॥

इसके पश्चात बालकाण्ड में सीता और राम के अनन्य प्रेम के विविध गीत अनेक रागों में संजोए गए हैं। राग सारंग, राग किंकौटी, राग भैरवी, राग देश ताल रूपक, धुर्पद मलार, राग धुर्पद खंमाच, राग वसंत

बहार, राग काफी, राग आसावरी, राग विहाग, राग कानडा आदि का सुंदर प्रयोग दिखाई देता है। इसी प्रकार का प्रबंध सभी शेष काण्डों में दिखाई देता है।

राम शिरोमणि :

राम शिरोमणि पुस्तक का लेखन उन्नाव जिले के न्यूतनी गांव के रामलाल वैश्य ने किया। वे पंडित रामदयाल त्रिवेदी के शिष्य थे। उनकी इस पुस्तक का प्रकाशन सन् 1900 ई. में बम्बई के सेठ छोटे लाल लक्ष्मी चन्द ने जैन प्रेस, लखनऊ से मुद्रित करा कर किया था। इस पुस्तक में राम कथा सात काण्डों में वर्णित है। इसके साथ ही इसमें कृष्ण जन्म, षट ऋतु, नखशिख और स्फुटिक आदि के कविता सवैया सम्मिलित है। बालकाण्ड के प्रारंभ में राम जन्म होने पर कौशल्या द्वारा इतने उपहार बांटे जाते हैं कि उनके हाथों की चूड़ियाँ बहुत कम रह जाती हैं।

चैत रामनौंमी को रामजी को जन्म भयो, आये सूत बंदीजन वंश के जे नांचकी। हीरा मोती नीलम लुटावै भूप दशरथ, गजग्राम पाये भये जांचक अजांचकी। ऋद्धिसिद्धि सकुचाते धनद लजाती ब्रह्मा पढ़ै वेद प्रभू मेरी बात सांची की। कैसे में प्रमाण करूं कौशिला के दान केरी हाथन में रहि गई चूरी पांच कांच की।

जब भगवान राम स्वयंवर में धनुष भंग कर देते हैं तो माता सीता की एक सखी आकर उन्हें यह सूचना देती है–राजन के राजा महाराजा कौशिला किशोर के मुखाबिवंद पै अनेकु रविवारो है।। जाइकै जनकपुर कीन्हो नरनार सुखी महिमा अपार वेद पावन न पारो है।। जेते अभिमानी नृप बैठे तेहि मण्डल में रामलाल जाय सद सबको निकारो है।। जैसे गज पंकज की नाल तोरि डारत है तैसे रामचंद्र जी ने धनुष तोरि डारो है।।

इस पुस्तक में जितना सुंदर वर्णन राम की कथा का है, उतना ही कृष्णा की कथा का भी है। राधा का नखशिख वर्णन अद्वितीय है। अलग–अलग अंगों की शोभा का वर्णन कविता में किया गया है।

रामकथा की एक और पुस्तक रामलीला प्रकाशिका है। यह पुस्तक वौंक्टेश पुस्तकालय, मौदा, पोस्ट काकोरी, तत्कालीन अवध प्रांत से प्रकाशित हुई, जिसका मुद्रण जैन प्रेस, लखनऊ ने किया था यह पुस्तक अयोध्या निवासी नंदकिशोर दास जी द्वारा रचित है, जिसका संपादन रघुवर दास जी द्वारा किया गया है। सन् 1906 में प्रकाशित इस पुस्तक का सिर्फ बालकांड उपलब्ध है। बालकांड का प्रारंभ संस्कृत के श्लोक से होता है। इसके पश्चात एक दोहे में तुलसीदास की भी वंदना की गई है। कथा का प्रारंभ कवित्त सवैया से होता है, जिसमें कवि ईश्वर वंदना से प्रारंभ करता है–

जो प्रभु दीनदयाल कहाबो तो मैं आतिदीन अधीन बना हूं। जो शरणागत पाल कहो तो सवै तजि के प्रभु द्वारा पड़ा हूं। जो कहो नाथ अनाथन को तो मैं होइ अनाथ पुकारि रहा हूं। दास किशोर खरोचहे खोटोहि नाथ तुमारहि दास सदा हूं।

आगे दण्डक, घनाक्षरी, मनहर आदि छंदों का प्रयोग किया गया है। जब राम जनकपुर पहुँचते हैं तब कवि ने अष्ट सखियों के संवाद के रूप में राम के रूप और गुण का बहुत ही सुंदर वर्णन किया है। तीसरी सखी का संवाद सवैया छंद में देखें- ***जैसे रचो विधि राम लला इन योग रच्यो मिथिलेश लली को। मानो सरोवर श्यामल पीत उदय रवि सोहत कंज कली को। जो नृप देखे इन्हें कहुँ नेक बरें हठ त्यागि धरो मन ठीको। नातो किशोर बिना रघुनाथ रहे न बनै घर में छिन एको।।***

कथा के सारे कवित्त रामचरितमानस की विभिन्न चौपाइयों के आधार पर रचे गए हैं। हर कविता के ऊपर उस चौपाई का उल्लेख किया गया है। पुस्तक में राम बारात में छः रस रुचिर व्यंजनों का वर्णन और बारहमासा का वर्णन अद्‌भुत है। बालकांड के समापन के बाद कुछ कवित्त भगवान राम के राज्याभिषेक के बाद राजगद्दी पर बैठने से संबंधित है। कथा का समापन राम और सिया के होली खेलने के नौ सवैयों के साथ होता है। इनमें माता सीता की सखियों के नाम का प्रयोग दृष्टव्य है।

यहाँ दो पुस्तकों की चर्चा करना महत्वपूर्ण है। एक है बलदेव प्रसाद सक्सेना कृत गजल राम लीला नाटक और दूसरी पंडित लक्ष्मण प्रसाद कृत आल्हा रामायण। गजल रामलीला नाटक के उपलब्ध तीसरे भाग में तुलसीदास कृत रामचरितमानस के सुंदरकांड का उल्लेख है। यह पुस्तक मुंशी बलदेव प्रसाद सक्सेना 'शातिर' द्वारा लिखी गई है। वे सादाबाद के निवासी थे। इस पुस्तक को लाला श्यम लाल हीरालाल ने अपनी श्याम काशी प्रेस, मथुरा में सन 1912 में प्रकाशित किया था। पुस्तक में कथा का प्रारंभ जामवंत, अंगद और हनुमान के सागर किनारे पहुँचने और आपस में विचार विमर्श से होता है–

कवन विधि जावें सागर पास जामवंत अंगद हनुमाना सोचत बारम्बारा कवन विधि जावें सागर पारा अंगद कहा जाऊं मैं पारा संसे फिरती बार। जामवन्त कहा मैं अति बूढ़ा सबही विधि गया हार। कवन विधि जावें सागर पार। अंजनि कुमर मौन क्यों बैठे जाओ सागर पार। तुम छुट कौन यहां बलधारी शातिर कहत पुकार। कवन विधि जावें सागर पार।

कथा में गजलों का बड़ा ही अनूठा प्रयोग किया गया है। बीच–बीच में दादरा और लावनी का भी प्रयोग है। राग एमन, राग असावरी, राग खम्माच आदि के प्रयोग बहुत सुंदर हैं। भाषा में हिंदी के साथ उर्दू शब्दों का बाहुल्य है। ऐसा गजल छंद के प्रयोग के चलते होना स्वाभाविक ही है। जब लंका जाते समय हनुमान सुरसा से मिलत हैं तब उनकी प्रार्थना गजल के रूप में देखें–

सुरसा न छेड़ हमको बचन हम सुनाते हैं।
लैने खबर सिया की हम इस वक्त जाते हैं।।
हैं रिष्य मूक शैल पर राम और लखन मुकीम।

वोह रंजो गम से धीर नहीं दिल में लाते हैं।।
लेकर सुध सिया की सुना करके राम को।
यह काम करके जल्द तेरे पास आते है।।
अय मात हमको खाइयो तब अपने शौक से।
सच्चा हमारा कौल है सौगंद खाते हैं।।
शातिर का पार कीजिये बेड़ा श्री हजूर है।
हम गम से बेकार हैं घबराए जाते हैं।

अंत में लेखक भगवान श्री हनुमान की प्रार्थना कर कथा का समापन करता है। दूसरी पुस्तक आल्हा रामायण का लेखन फतेहपुर निवासी पंडित राजाराम जी शर्मा ने किया। वह आल्ह खंड के सुप्रसिद्ध रचयिता पंडित लक्ष्मण प्रसाद जी शर्मा के भाई थे। उनकी यह पुस्तक सन् 1915 ईस्वी में तीसरी बार प्रकाशित हुई, जिसे लाल श्याम लाल अग्रवाल ने अपने श्याम काशी प्रेस, मथुरा में छापकर प्रकाशित किया था। 136 पृष्ठों की पुस्तक में राम कथा को आठ काण्डों में विभाजित कर आल्हा छंद में प्रस्तुत किया गया है। अपने आप में यह प्रस्तुतीकरण अनूठा है। मंगलाचरण में प्रारंभ हुई कथा, बालकाण्ड से चलकर अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किंधाकाण्ड, सुंदरकाण्ड, लंकाकाण्ड, उत्तरकाण्ड और लवकुश काण्ड में आबद्ध है। प्रत्येक काण्ड से पूर्व आल्हा लेखन की परंपरा के अनुरूप ईश वंदना की गई है। लवकुश काण्ड में राम के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को पकड़ लेने के बाद जब शत्रुघ्न लवकुश से युद्ध में पराजित हो गये तो हारी हुई सेना ने राम के समक्ष जाकर सारी घटना का वर्णन किया। देखें इसकी एक बानगी–

हाथ जोरिकें कहिवे लागे, धनि धनि रामचंद्र महाराज।।
जैसी कुछ रिपुहन पर बीती, सो कुछ कहीं नहीं हमसे जाए।।
घोड़ा है आयौ देशन में, कोऊ महीपति रोक्यो नाया।।
बालमीक की मढ़िया हैकें, जब दल चल्यो आपको जाया।।
एक बालक यानी उमर का, ताने घोड़ा रोक्यो आया।।
पट्टा बांध्यौ वा लड़का ने, शंका करी लिखे की नाया।।
बड़े लडैया बाणां धारी, जिन से चला न एक उपाया।।
घोर युद्ध बिन हमसु कीयौ, फौजैं काटिकरी खरिहाना।।
घोड़ा बांधि लीन जब उनने, रिपुहन मूर्छित गत है जाया।।
द्वैही बालक बड़े लडैया, शंका करें काल की नांया।।

विशेष बात यह है कि कथा के इस अंतिम कांड में जब सीता और राम का मिलन होता है। तब सीता के साथ राम अध्योध्या लौट आते हैं और अवधपुरी में हर्ष जाता है। यहाँ माता सीता के धरती में समा जाने की कथा नहीं कही गई है। इन प्रबंध काव्यों के अतिरिक्त बहुत से कवियों ने राम के जीवन प्रसंगों को भजनों के रूप में लिखा है। ऐसा ही एक ग्रंथ है श्रीराम भजन दर्पण। इसे फैजाबाद जिले के निवासी पंडित छोटकुन शुक्ल ने सन् 1901 में लिखा था। सेठ छोटे लाल लक्ष्मी चन्द बैंक्टेश पुस्तकालय मौंदा, पोस्ट काकोरी, लखनऊ ने जैन प्रेस,लखनऊ से मुद्रित कराकर सन् 1904 में इसे प्रकाशित कराया गया। इसमें रामकथा के विभिन पात्रों के भजन बहुत सारे छंदों में लिखे गये हैं। राग बिलावल, राग ध्रुपद, राग बिहाग, राग रामकली, राग देश, राग सोरठ, राग खेमटा, राग जैतश्री राग झूलना, राग चंचरीक, राग धानाश्री, राग ईमन, राग बसंत, राग प्रभाती, राग नट आदि का बहुत ही मनोरम संयोजन भजनों में किया गया है। कुछ भजन गजल के रुप में भी है। राग बिहाग में एक भजन देखें–

प्रणत कल्पतरु राम भजनो मन क्रीट मुकुट मकराक्रति कुंडल तिलकरेख अभिराम भजो मन। प्रणत। करधनु शर कटि में तरकश है पीत झंगातन श्याम भजो मना प्रणत0। नखशिख छबि कबि कहई कहॉ लगि जेहि लजाहिं भजो मन प्रणत0। द्विज छोटकुन सुख उभय लोककरु जानि भूलहु धन धाम भजो मन। प्रणत0।

इस पुस्तक को देखने से पता चलता है कि कवि को रागों की गहरी समझ थी। भोजपुर निवासी लाला नौबति राय ने सन् 1885 के आसपास भजन रामायण की रचना की। इस पुस्तक को बाबू श्री प्रसाद माहेश्वरी की चिंतामणि प्रेस फर्रुखाबाद में छापा गया। इसके उपलब्ध पांच भागों में राम की कथा को भजनों के रूप में लिखा गया है। हर भाग में कुछ कवित्त तुलसीदास और कबीरदास के भी सम्मिलित किए गए हैं। इसके पांचवें भाग में लंका में हुए राम रावण युद्ध का वर्णन है। रावण वध से संबंधित भजन देखें–

अब रज मैं कोपे रघुराई।
जाटा सम्हार मुकुट प्रभु बांधो पीतांबर फहराई।
इकतीस तीरे धरे रौदा पर खौंच श्रवण लौं दिये चलाई।
अब रन मैं कोपे रघुराई।
दस सर से दस मस्तिक कटिगै लैगै बान उड़ाई।
बीस बान बीसौ भुज काटे इक तोंदी में गओ समाई।
अब रन मैं कोपे रघुराई।
बिन सर भुज धड़ धावत वाको कपिन अधिक भय पाई।
तब दुइ खंड करे हरि वाके गिरा धरणि अहराई।
अब रन मैं कोपे रघुराई।
नौबति राय दास दासन को हरि चरनन बलि जोई।
जो गति है देवन को दुलर्भ सो गति तौ रावण ने पाई।
अब रन मैं कोपे रघुराई।

भगवान राम की ऐसी अनेक कथाएं काव्य ग्रन्थों के रूप में लिखी गई। अपनी–अपनी भावनाओं के अनुरूप काव्य के सुमन कवियों ने भी राम के चरणों में समर्पित किये। ऐसे बहुत से राम काव्य ग्रंथ लोगों के निजी संग्रह और पुस्तकालय में उपलब्ध है। इन पर गहनता से अनुसंधान कर राम भक्ति का नवनीत प्राप्त किया जा सकता है।

तुलसी काव्य में पर्यावरण बोध

■ डॉ. दुर्गेश शर्मा

सृष्टि के आगमन काल से ही पर्यावरण का अपना विशिष्ट महत्त्व है। मानव एवं पर्यावरण एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। पर्यावरण के बिना मानव जगत की परिकल्पना करना व्यर्थ होगा। जिस प्रकार मानव जीवन के लिए पर्यावरण का होना आवश्यक है उसी तरह से किसी भी श्रेष्ठ काव्य में मानव और पर्यावरण की उपस्थिति अनिवार्य होती है। एक श्रेष्ठ कवि अपने काव्य में मानव और पर्यावरण के अन्तः सम्बन्धों को प्रकट करते हुए उसकी श्रेयस एवं प्रेयस भावनाओं का प्रकटीकरण करता है।

भक्तिकालीन काव्य में पर्यावरण आलम्वन एवं उद्दीपन दोनों ही रूपों में उपस्थित रहा है। तुलसीदास ने अपने काव्य में मानव एवं पर्यावरण को समन्वित करने का प्रयास किया है। उन्होंने पर्यावरणीय संस्कृति को पुष्पित एवं पल्लवित करने का कार्य किया है। तुलसी के काव्य का मुख्य आधार रामचरितमानस का जनकंठ द्वारा गायन है। तुलसी के राम लोक कल्याणकारी तथा लोक मर्यादित हैं। तुलसी के लोक कल्याण में मानव जगत के साथ-साथ जीव जगत तथा पर्यावरण भी आता है। इसमें पुरूषोत्तम राम की लोकमर्यादा में लोक की पर्यावरण के प्रति मर्यादा को भी अभिव्यक्ति मिली है।

मनुष्य पर्यावरण से अलग नहीं हो सकता है क्योंकि वह पर्यावरण का ही एक घटक है। साहित्य में यदि पर्यावरण की उपस्थिति नहीं होती है तो वह अपने देश, काल और वातावरण की प्रामाणिक तथा विश्वसनीय प्रस्तुति नहीं माना जा सकता, पर्यावरण उसमें चेतना प्रदान करता है किसी भी कवि की महान रचना का सृजन तभी हो पाया है जब उसमें पर्यावरण अपने समस्त रूपों के साथ अनिवार्यतः प्रस्तुत हुआ है। तुलसी की रामचरितमानस, जायसी का पद्मावत, सूरदास का सूरसागर आदि कृतियाँ पर्यावरण की रचनात्मक अभिव्यक्ति के कारण महानता की कोटि में आ गयी हैं। इनकी रचनाएँ पर्यावरण से प्रेरित व पोषित हैं। समय के साथ-साथ काव्य में पर्यावरण की उपस्थिति का रूप बदल जाता है।

तुलसीदास के आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को पर्यावरण पुरुषोत्तम कहा जाय तो अनुचित न होगा। राम का अधिकांश जीवन प्रकृति की गोद में ही बीता है। बचपन में शिक्षा-दीक्षा के लिए गुरु वशिष्ठ के आश्रम में जाते हैं जहाँ उन्हें पर्यावरण के निकट रहने का सुअवसर मिलता है।

मध्यकाल का साहित्य केवल काव्य की दृष्टि से ही उपयोगी नहीं है अपितु भक्ति एवं साधना की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। ये भक्त या सन्त पहले थे तथा कवि बाद में थे। इन भक्त कवियों को अपनी कविता में कथन की सृष्टि तथा पुष्टि करने के लिए पर्यावरण का सहारा लेना पड़ा। प्रकृति के बिना मानव मन के सूक्ष्म भावों तथा स्थितियों को स्पष्ट करना संभव नहीं है। पर्यावरण के विभिन्न घटकों, रूपों, प्रतीकों के द्वारा सूक्ष्म प्रकटीकरण सम्भव है अमूर्त को मूर्त तथा अदृश्य को दृश्यमान करने के लिए पर्यावरण ही श्रेष्ठ माध्यम है। आत्मा का प्रतीक हंस पर्यावरण के जैविक घटक का ही एक अंग है। सृष्टि में मनुष्य की उत्पत्ति से पहले पर्यावरण की संरचना हुई है। विज्ञान ने तो यहां तक स्पष्ट कर दिया है कि संसार में पहले जीवों और वनस्पतियों की रचना हुई मनुष्य तो बाद में हुआ है। तो क्या मानव अपने पूर्वज पर्यावरण को छोड़ सकता है। या उसके अभाव में स्वस्थ प्रसन्न रह सकता है, शायद नहीं। इसीलिए मनुष्य के स्वभाव, संस्कारों और आदतों के वाहक साहित्य में पर्यावरण अपरिहार्य अवयव के रूप में उपस्थित रहता है।

तुलसीदास के आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को पर्यावरण पुरुषोत्तम कहा जाय तो अनुचित न होगा। राम का अधिकांश जीवन प्रकृति की गोद में ही बीता है। बचपन में शिक्षा-दीक्षा के लिए गुरू वशिष्ठ के आश्रम में जाते हैं जहाँ उन्हें पर्यावरण के निकट

रहने का सुअवसर मिलता है। जब वे पारंगत होकर वापस लौटतें हैं तो विश्वामित्र राम लक्ष्मण को राक्षसों द्वारा विनाश की जा रही यज्ञ एवं पर्यावरणीय संस्कृति को बचाने के लिए अपने साथ वन में ले जाते हैं। जहाँ वह सहर्ष जाकर राक्षसों का वध करते हैं। तुलसी ने राम को पर्यावरण सेवक तथा प्रकृति रक्षक रूप में उभारा है। जिस संकट को दूर करने के लिए राम लक्ष्मण गये हैं वहाँ कृषि व सन्तों को संकट है, अरण्य समाज का संकट है पर्यावरण पर हो रहे दुष्टों के कोप का संकट है। इस संकट को दूर करना वह अपना परम कर्तव्य समझते हैं। इसके बाद चौदह वर्ष का वनवास व्यतीत करते हैं इन वर्षो में राम का व्यक्तित्व पर्यावरण पुरुषोत्तम के रूप में स्थापित हो जाता है।

रामचरितमानस में तुलसी ने पौराणिक मिथक को लेकर मौलिक चिन्तन भी दिया है। जिसमें देश, काल, पर्यावरण को प्रमुखता के साथ उजागर किया है। जनकपुरी के रमणीय दृश्य का चित्रण तुलसी के पर्यावरण प्रेम की पुष्टि करता प्रतीत होता है–

पुर रम्यता राम जब देखी हरषे अनुज समेत विसेषी
बापी कूप सरित सर नाना, सलिल सुधा सम मनि सोपना
गुंजत मंजु मत्त रस भृंगा कूजत कल बहुबरन बिहंगा
बचन बरन विकसे वन जाता त्रिविध समीर सदा सुखदाता
सुमन वाटिका बाग बन विपुल विहंग निवास
फूलत फलत सुपल्लवित सोहत पुर चहुँ पास।

राम ने जब लक्ष्मण के साथ जनकपुरी में शोभा देखी तो वह अत्यन्त हर्षित हुए वहाँ अनेको बावलियाँ, कुँए, नदी और तालाब हैं जिनमें अमृत के समान जल है और मणियों की सीढ़िया बनी हुई हैं। भौंरे गुंजार रहे हैं पक्षी मधुर शब्द कर रहे हैं अनेक रंग के फूल खिले हैं शीतल मन्द सुगन्ध समीर बह रहा है। तुलसी यदि चाहते तो यहाँ का पर्यावणीय चित्रण न करके विलासिता सम्पन्नता, ऐश्वर्यता की वस्तुओं का वर्णन कर सकते थे किन्तु उन्होंने ऐसा न करके पर्यावरण संरक्षण संवर्द्धन में अमूल्य योगदान दिया। तुलसी के मन में काव्य रचना के समय यह बात जरूर रही होगी कि वे जिस काव्य का सृजन करने जा रहे हैं उसे कालजयी बनाने में जीव घटकों के साथ प्रकृति एवं वानस्पतिक घटकों की उपस्थिति अनिवार्य है। इसीलिए तुलसी अपने काव्य में प्रकृति को साथ लेकर चलते हैं। तीर्थो का महत्व आध्यात्म एवं नैतिकता के साथ–साथ पर्यावरणीय भी है। पर्वतों पर, नदियों के तटों पर वनों में ही तीर्थ स्थित हैं जहाँ पहुँचकर व्यक्ति जीवन और जगत से ऊपर उठकर अपनी मुक्ति की परिकल्पना करने लगता है। कठिनाई भरे दुर्गम मार्गो के सहारे, कष्ट पद यात्रा करते हुए तीर्थ स्थलों तक पहुँचा जाता है, जहाँ पर्यावरण उन्मुक्त मुस्कान बिखेर रहा होता है।

ऐसे में व्यक्ति सांसारिकता को भूलकर परमसत्ता में मन को रमाने का प्रयत्न करने लगता है। पर्यावरणीय सम्पदा के बीच तीर्थो की स्थापना इसीलिए की गई है कि मन शुद्धि से पहले शरीर की शुद्धि भी हो सके। जब तक शरीर व प्राण शुद्ध न होंगे तब तक आत्मा की शुद्धि बेमानी है। यहाँ साँसों में शुद्ध प्राण वायु का संचार होने से निर्बाध रूप से प्राणायाम व योग के द्वारा ईश्वरीय अनुभूति का हिस्सा हुआ जा सकता है।

'कवितावली' के 'उत्तरकाण्ड' में चित्रकूट महात्म्य के अन्तर्गत स्थान की पर्यावरणिक विशेषताओं को इंगित करते हुए तुलसी लिखते हैं।

जहाँ बन पावनो सुहावने विहंग मृगए देखि
अति लागर अनंद खेत खूट सो
झरना झरत झारि सीतल पुनीत बारिए
मंदाकिनी मंजुल महेस जटाजूट सों।

जबकि विनयपत्रिका में तुलसी विविध उपमानों का प्रयोग करते हुए चित्रकूट स्तुति करते हैं।

सब सोच विमोचन चित्रकूट, कलि हरण करन कल्याण-बूट।
सुचि अवनि सुहावनि आलवाल, आनन विचित्र बारी बिसाल।।
मंदाकिनी मालिन सदा सींच, बारि बारि विषम नर नारी नीच।
साखा सुसृंग भूरह सुपात, निर्झर मधुवर मृदु बलय बात।
सुक, पिक, मधुकर, मुनिवर बिहारू, साधन प्रसून फल चारि चारू॥

रामचरितमानस के बालकाण्ड में तुलसीदास ने पर्वतीय क्षेत्र में सदभाव से युक्त संस्कृति की छटा का उल्लेख किया है हिमाचल के घर उमा का जन्म होता है। इसकी सुन्दरता पवित्रता उदारता और वानस्पतिक प्रचुरता का चित्रण करते हुए तुलसीदास ने पर्यावरण को जीवंत कर दिया है–

सदा सुमन फल सहित सब, द्रुम नव नाना जाति
प्रगटी सुन्दर सैल पर, मन आकर बहु भाँति
सरिता सब पुनित जल बहहीं खग मृग मधुप सखी सब रहहीं।
सहज बयरू सब जीवन त्यागा, गिरि पर करहि सकल अनुराग।।

पर्वतीय स्थलों की विशेषता प्राकृतिक, वानस्पतिक होने के साथ साथ वहाँ के जीवों, प्राणियों में पाया जाने वाला सहज अनुराग भी है।

तुलसी यदि चाहते तो यहाँ का पर्यावणीय चित्रण न करके विलासिता सम्पन्नता, ऐश्वर्यता की वस्तुओं का वर्णन कर सकते थे किन्तु उन्होंने ऐसा न करके पर्यावरण संरक्षण संवर्द्धन में अमूल्य योगदान दिया। तुलसी के मन में काव्य रचना के समय यह बात जरूर रही होगी कि वे जिस काव्य का सृजन करने जा रहे हैं उसे कालजयी बनाने में जीव घटकों के साथ प्रकृति एवं वानस्पतिक घटकों की उपस्थिति अनिवार्य है।

जिसके परिणाम स्वरूप वे वैर भाव त्यागकर आत्मीय पूर्ण व्यवहार करते हैं। ऋषि मुनि आश्रमों में निवास करते हैं वहीं वे विद्याध्ययन तथा शस्त्राभ्यास कराते हैं। ये आश्रम ग्राम बस्ती से दूर वन प्रांतर में प्रकृति सम्पदा से परिपूर्ण हैं। राम ने गुरू वशिष्ठ के आश्रम में ज्ञान प्राप्त कर प्रकृति बोध प्राप्त किया है। वन गमन करते हुए वे वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचते हैं। यहाँ पशु पक्षी, कीट आदि वैर भाव भूलकर प्रसन्नता के साथ विचरण करते हैं। तुलसी ने प्रेम और सद्‌भाव की सृष्टि की है वैर एवं द्वेष को वह अलग रखते हैं–

देखत बनसर सैल सुहाए, वाल्मीकि आश्रम प्रभु आए।
राम दीख मुनि बासु सुहावन, सुन्दर गिरि काननु जल पावन।।
सरनि सरोज विटप बन फूले गुंजत मंजु मधुप रस भूले।
खग मृग बिपुल कोलाहल करहीं, बिरहित बैर मुदित मन चरही।।

पिता की आज्ञा पाकर राम के वन गमन करने पर सीता साथ चलने की ठान लेती है। राम समझाते हैं कि चौदह वर्ष वनों, पर्वतों, नदियों, बीहड़ों में भटकना पड़ेगा। जहाँ पग पग पर अपार कष्ट ही कष्ट होंगे। अयोध्या जैसी सुख सुविधाएँ वहाँ न मिलेंगी। सीता समस्त संभावित संकटों का सामना करने के लिए तैयार हो जाती हैं, क्योंकि वह जानती हैं कि केवल यही सुअवसर ऐसा है जब वह महलों को छोड़कर प्रकृति व पर्यावरण को आत्मसात कर सकती थी। सीता पति के साथ रहकर अरण्य से परिचित होना चाहती है। ये सब प्राणपति के साथ उसके लिए सुखद बन जाएँगे।

अगम पंथ वन भूमि पहारा, करि केहरि सर सरित अपारा।
कोल किरात कुरंग बिहंगा, मोहि सब सुखद प्रानपति संगा।।

नदियों का वर्णन तुलसी ने पूरे मनोयोग से किया है। गंगा नदी की पवित्रता, समानता, उदारता की महिमा वर्णित करते हुए वे कहते हैं–

सुभ और असुभ सलिल सब बहई, सुरसरि कोउ, अपुनीत न कहहि।
समरथ कँहु नहिं दोपु गोसाईं, रवि पावक सुरसरि की नाईं।।

पर्यावरण की शुद्धि और मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए पूजा यज्ञ जप तप का विधान तुलसी काव्य में मिलता है। रावण ने सीता का अपहरण कर उसे अशोक वाटिका में ठहराया है। अशोक का वृक्ष मनुष्यों के शोक हरण करने वाला होता है। स्त्रियों के स्थास्थ्य एवं औषधि की दृष्टि से अशोक महत्वपूर्ण वृक्ष है शायद तुलसी के मन में सीता को महलों में न रखकर अशोक वाटिका में रखने का एक आग्रह यह भी रहा होगा। कदाचित रावण के मन में भी यही बात हो। 'कवितावली' में इसकी सुन्दरता का वर्णन तुलसी ने करते हुए लिखा है–

माली मेघमाल, कनपाल विकराल भट,
नीके सब काल सीचौं सुधासार नीर को।

मेघों के समूह माली के रूप में अमृत रूपी नीर से अशोक वाटिका को सदैव सींचते रहते हैं। सीता रावण के अत्याचारों से दुखी होकर लकड़िया इकट्ठा करके चिता बना लेती है, लेकिन अग्नि के लिए चन्द्रमा व तारों से विनती करती है। इसके बाद अशोक वृक्ष से अग्नि माँगती है–

सुनहि विनय मम विटप असोका, सत्य नाम करु हरु मम सोका।
नूतन किसलय अनल समाना, देहि अगिन जनि करहि निदाना।।

सीता खोज में हनुमान जब विभीषण के घर के बाहर तुलसी के पौधे देखते हैं तो हर्षित हो जाते हैं क्योंकि लंका में निशाचरों के बीच कोई सज्जन व्यक्ति मिल जाए तो सीता की जानकारी मिल सकती है। तुलसीदास ने घर में तुलसी का होना पर्यावरण का प्रतीक माना है। साथ ही यह सज्जनता की निशानी है सज्जन पर्यावरण पोषक होता है शोषक नहीं–

रामायुध अंकित गृह, सोभा बरनि न जाई।
नव तुलसिका वृन्द तहँ, देखि हरष कपिराई।।

पंचवटी की महिमा का गान करते हुए तुलसी कहते हैं–

खगमृग वृन्द अनंदित रहहिंए मधुर मधुर गुंजत छवि लहहिं।
पंचवटी बर पर्नकुटीतर बैठे हैं राम सुभाष सुहाए।
सोहैं प्रिया, प्रिय बंधु लसै, तुलसी सब अंग घने छवि छाए।।

ऋतुओ का चित्रण करते हुए तुलसी ने पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों एवं प्रतिक्रियाओं का सुन्दर दृश्य खींचा है। वसन्त ऋतु का एक दृश्य देखिए–

जागई मनो भव मुइहुँ मनवन, सुभगता न परै कही।
सीतल सुगंध सुमंद मारूत, मदन अनल सखा सही।।
बिकसें सरन्हि बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा।
कलहंस पिकसुक सरस रव करि गान नाचाहिं अपछरा।।

इसी प्रकार तुलसी ने वर्षा ऋतु का भी सर्वत्र चित्रण किया है–

घन घमंड नभ गरजत घोरा, प्रियाहीन डरपत मन मोरा।
दामिनि दमक रहनि घन माहीं, खल के प्रीति जथा थिर नाहीं।।
बरषहिं जलद भूमि निअराएँ, जथा नवहिं बुध विद्या पाएँ।
बूँद अघात सहहिं गिरि कैसे, खल के बचन संत सह जैसे।।

तुलसी के शरद ऋतु में भी विलक्षण प्रतिभा के दर्शन होते हैं। पर्यावरण के साथ–साथ नक्षत्र ज्ञान तथा नीति निपुणता का परिचय मिलता है रामजी लक्ष्मण को शरद ऋतु के आगमन की सूचना देते हुए कहते है–

बरसा बिगत सरद ऋतु आई, लक्ष्मन देखहु परम सुहाई।
फूले कांस सकल महि छाई, जनु बरषाँ त प्रगट बुझाई।।

विनय पत्रिका में तुलसीदास के पर्यावरण स्नेही होने का अनुपम उदाहरण मिलता है। जब भगवान शिव स्वयं वन का रूप धारण कर लेते हैं। शिव स्वयं सम्पूर्ण पर्यावरण को अपने रूप में समाहित कर लेते हैं। शिव का यह अदभुत रूप अपार शोभा के साथ चमक रहा है। ऋतुराज बसंत भी इस सौन्दर्य को देखने आता है।

देखो–देखो बनु वन्यों आज उमाकान्त मानो देखन आई तुम्हे रितु बसंत,
जनु तनु दुति चंपक कुसुम माल बर बसन नील नूतन तमाल
पिक वचन चरित वर बरहि कीर, सित सुमन हास लीला समीर।

तुलसी के काव्य में जीव जन्तुओं, पशु पक्षियों, वनचरों, जलचरों, गगनचरों के प्रति आदर का भाव प्रकट हुआ है। यह पर्यावरण के विविध घटकों के प्रति सम्मान को प्रकट करता है। जीवों के प्रति प्रेम और आदर का भाव राम के व्यक्तित्व का श्रेष्ठ पक्ष है। राम घायल जटायु को लेकर विलाप कर रहे हैं। उसे पितृ तुल्य सम्मान देकर एक सामान्य पक्षी को चरितार्थ कर रहे हैं। जीवों के प्रति आदर भाव का ऐसा सुन्दर चित्रण गीतावली से देखिए–

राधो गीध गोद कर लीन्हो, नयन सरोज सनेह सलिल सुचि मनहुँ
अरध जल दीन्हों, सुवहु लषन खगपतिहि मिले बन।
मैं पितु मरन न जान्यो।

सीता हरण के बाद राम जीवों, वनस्पतियों से सीता का पता पूछते हुए विलाप कर रहे हैं। तुलसी का यह प्रयोग मैलिक और अनूठा है–

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी, तुम देखी सीता मृगनयनी।
खंजन सुक कपोत मृग मीना, मधुप निकर कोकिला प्रवीना।।

राम भाई लक्ष्मण के साथ सीता को वन में ढूँढ़ते क्षुब्ध हो जाते हैं राम को अकेलापन खलने लगता है। कामदेव सताने लगता है। प्रकृति और पर्यावरण का उद्दीपन रूप राम की विरहानुभूति को बढाने मे सहायक हुआ है—

बिटप बिसाल लग अरूझानी, बिबिध बितान दिए जनुतानी।
कदली ताल बर धुजा पताका, देखि न मोह धीर मन जाका।।

कामदेव चतुरंगिनी सेना लेकर वन में डेरा डाले हुए हैं तथा राम के प्रियाहीन मन पर अधिकार जताने का प्रयत्न कर रहा है पर्यावरण रूपी योद्धा बार–बार राम के मन में धावा बोलकर हताहत कर रहे हैं। इसके पश्चात राम पंपापुर नामक सरोवर के किनारे पहुँचे। यहाँ का पर्यावरण अत्यन्त मन भावन है।

बिकसे सरसिज नाना रंगा, मधुर मुखर गुंज बहु भृंगा।
बोलत जल कुक्कुट कल हंसा, प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा।
सीतल मंद सुगंध, सुभाऊसतत बहई मनोहर बाऊ
कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं।।

लंका पर चढ़ाई करने के लिए राम की सेना में भालू बन्दर व वनचारी सेतुबंध रामेश्वर पहुँच जाते हैं। जलचरों का वर्णन करते हुए तुलसी ने लिखा है–

मकर नक्र नाना झष व्याला, सत जीवन जोजन तन परम विसाला
अइसेउ एक तिन्हहिं जे खाहीं, एकन्ह के डर तेपि डेराहीं।।

समुद्र पार करके सेना ने डेरा डाल दिया। पूरब दिशा में चाँद को देखकर राम सबसे कहने लगे–

''पूरब दिशा विलोकि प्रभु देखा उदित मयंक।
कहत सबहि देखहु ससिहि, मृगपति सरिस असंक''।।

रात्रि रूपी सुन्दरी का चित्रण तुलसी ने रूपक में बाँधकर किया है। शिव उमा को वह इतिहास सुनाते हैं जिसे सुनकर लोक के भ्रम का नाश हो जाता है। गरूण ने काक भुशुण्ड से जो प्रश्न किए थे उन्हीं के बारे में शिव बता रहे हैं और काकभुशुण्ड का वह सुन्दर स्थल वर्णित कर रहे हैं–

गिरि सुमेर उत्तर दिसिदूरी, नील सैल एक सुन्दर भूरी।
तासु कनकमय सिखर सुहाए, चारि चारू मोरे मन भाए।।

तुलसी ने काकभुशुण्ड को ऐसे को सुन्दर सुमेरू पर्वत का निवासी बताया है। उसकी दिनचर्या में रामकथा कहना शामिल है जिसे अनेक पशु पक्षी सुनकर अपने जीवन को धन्य बनाते हैं–

पीपर तंरू तर ध्यान सो धरई, जाप जग्य पाकरि तर करई।
आँब छँहि कर मानस पूजा तजि हरि भजन काजु नहिं दूजा।।
वर तर कह हरि कथा प्रसंगा, आनहिं सुनहि अनेक बिहंगा।
सुनहि सकल मति बिमल गराला, बसहिं निरन्तर जे तेहिं ताला।।

इस तरह तुलसी ने पीपल, बड़, पाकर, आम के वृक्षों की महत्ता बढ़ा दी तथा रामकथा कहने सुनने के निभित्त पर्यावरणीय घटकों की उपस्थिति से दृश्य को सजीव कर दिया है। तुलसी के यहाँ गरुड़ एवं काक दोनों विद्वान हैं। ये किसी ज्ञानी ध्यानी सन्त से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं। इससे हम तुलसी की वन्य जीवों के प्रति उदार धारणा को सहज ही समझ सकते हैं। तुलसी के काव्य में मानव और पर्यावरण का संबध इतना गहरा है कि दोनों में कहीं कोई अन्तर प्रतीत ही नहीं होता। मानव जगत एवं पर्यावरण जगत की ऐसी व्यवस्था दूसरे कवियों के यहाँ दुर्लभ है। तुलसी के आराध्य राम ऐसे लोक नायक हैं जिनका स्वरुप पर्यावरण रक्षक के रूप में दृष्टिगोचर होता है। उनकी काव्य रचना को पढ़कर लगता है कि वे पर्यावरण के प्रति उतने ही सजग थे जितने मानव समुदाय के प्रति। उनका काव्य सच्चे रूप में मूल्यों की स्थापना करने में समर्थ है यह काव्य हमारे भीतर पर्यावरणीय चेतना जगाने में आज भी प्रांसगिक है।

श्रीराम मन्दिर स्थापत्य

■ डॉ. सुधीर कुमार शर्मा

सत्यमेवैश्वरो लोके सत्ये धर्मः सदाश्रितः। सत्यमूलनि सर्वाणि सत्यान्नास्ति परं पदम्।।

''सत्य ही संसार में ईश्वर है, धर्म भी सत्य के ही आश्रित है, सत्य ही समस्त भव-विभव का मूल है, सत्य से बढ़कर और कुछ नहीं है।''

हिंदूओं का प्राचीन पवित्र तीर्थ स्थल अयोध्या भारत के उत्तर प्रदेश राज्य का एक अति प्राचीन धार्मिक नगर है। यह नगर पवित्र एवं प्राचीनतम नदियों में से एक सरयू नदी के तट पर बसा हुआ है। रामायण के अनुसार अयोध्या की स्थापना ब्रह्मा जी के पुत्र मनु महाराज ने की थी। अयोध्या हिंदुओं के 7 पवित्र तीर्थ स्थलों में से एक है जिसमें अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, कांची, अवंतिका और द्वारका शामिल है। अयोध्या स्थित राम जन्मभूमि का इतिहास बहुत पुराना है। 1528 से 2023 तक श्री राम जन्मभूमि के पूरे इतिहास में 495 वर्षो में कई मोड़ आए, इसमें 9 नवम्बर 2019 का दिन बेहद खास रहा जब पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक बेंच ने ऐतिहासिक फैसला सुनाया। भूमि को लेकर हुए कानूनी और राजनीतिक संघर्ष का समापन सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक फैसले के साथ हुआ जिसने राम मंदिर के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया। सर्वसम्मत फैसले ने सौहार्दपूर्ण समाधान और सांप्रदायिक सद्भाव की आवश्यकता पर बल दिया। अयोध्या में राम मंदिर का निर्माण केवल एक धार्मिक उपक्रम नहीं है, बल्कि सदियों से चले आ रहे विवाद के समापन का प्रतीक है। यह मंदिर एक आशा की किरण बनकर उभरते हुए राष्ट्रीय गौरव और एकजुटता की भावना को बढ़ावा दे रहा है, जो सत्य, न्याय और धार्मिकता की विजय का प्रतीक है। यह मंदिर हिदू समुदाय की स्थाई भावना और भगवान राम के प्रति उनकी अटूट भक्ति का प्रमाण है। मंदिर आशा और प्रेरणा का प्रतीक है जो हमें आस्था की शक्ति और मानवीय भावना की ताकत की याद दिलाता है।

अयोध्या में राम मंदिर का निर्माण भारत के इतिहास में एक महत्वपूर्ण और परिवर्तनकारी घटना है। राम जन्म-भूमि के पवित्र स्थल पर निर्मित इस मंदिर का अत्यधिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और ऐतिहासिक महत्व है। मंदिर का कुल क्षेत्रफल 2.7 एकड़ है और इसका निर्मित क्षेत्रफल 57,400 वर्ग फुट है। मंदिर 360 फीट लंबा, 235 फीट चौड़ा और 161 फीट ऊंचा हैं। मंदिर में पांच शिखर और पांच मंडप हैं। मंदिर में 12 द्वार हैं। मंदिर स्थापत्य उत्तर भारत की प्रमुख स्थापत्य शैली नागर शैली का अनुसरण करता है जो जटिल शिल्प, कौशल और डिजाइन का दर्पण प्रस्तुत करता है। ऊंचे शिखर मंदिर की भव्यता में चार चांद लगाते हैं। निर्माण प्रक्रिया में पारंपरिक और आधुनिक तकनीक का मिश्रण विरासत और प्रगति के सम्मिश्रण का प्रतीक है। मंदिर की सबसे खास विशेषता शलिग्राम पत्थर है। माना जाता है कि यह पत्थर भगवान राम का प्रतिनिधित्व करता है और इसे नेपाल में गंडकी नदी से लाया गया था। मंदिर में तीन मंजिल है। प्रत्येक का अलग-अलग उद्देश्य है। पहली मंजिल भगवान राम को समर्पित है जब कि दूसरी मंजिल भगवान हनुमान को समर्पित है जबकि दूसरी मंजिल श्रीराम के अनन्य भक्त श्री हनुमान को समर्पित है और तीसरी मंजिल अयोध्या के इतिहास और संस्कृति को प्रदर्शित करने वाला एक संग्रहालय है।

भगवान राम को समस्त दुनिया पूजती है। भगवान राम हमारे सभी कष्ट हरते हैं। श्री राम सकारात्मकता के प्रतीक हैं। यह दो अक्षर का नाम दिल को बहुत सुकून देता है। इस सृष्टि के सभी प्राणी भगवान राम के सहारे चलते हैं। श्री राम सबसे बुद्धिमान और न्यायप्रिय राजा में से एक माने जाते हैं। भगवान राम के बिना कोई भी काम मुमकिन नहीं हो सकता है। भगवान श्रीराम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है। भगवान राम सुखों का समझौता कर न्याय और सत्य के मार्ग पर चले। अपने इन्ही गुणों के कारण वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाए, जिस समय जैसा करना चाहिए राम ने उस समय वैसा ही किया। राम रीति, नीति, प्रीति तथा भीति सभी जानते हैं। राम परिपूर्ण है, आदर्श हैं। राम ने नियम, त्याग का एक आदर्श स्थापित किया है।

विद्या एवं गुरु

■ अमित रावत
अ.भा. युवा आयाम प्रमुख, भा.शि.मं

प्राचीन काल की जब बात करते हैं तब ध्यान में आता है कि उस समय गुरुकुल शिक्षा पद्धति थी। आज आधुनिक कालखंड में जो विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय दिखाई देते हैं। ये उस समय नहीं थे उस समय गुरुकुल हुआ करते थे और शिष्य जिसको कि आज छात्र अथवा विद्यार्थी ऐसा कहते हैं वह गुरुकुल में ही रहकर वहां निवास करते हुए वेद, शास्त्र आदि की विद्या प्राप्त करते थे और जब गुरुकुल संचालित होते थे तब उस समय के कालखंड का अध्ययन करते हैं तो ध्यान में आता है कि उस समय गुरु और शिष्य का संबंध निस्वार्थ था। इसके अतिरिक्त उस समय गुरुकुल किसी राज्य के राजा अथवा धनाढ्य व्यक्ति की कृपा से संचालित नहीं होते थे अपितु समाज के सहयोग से संचालित होते थे। गुरु अथवा आचार्य केवल वेतन मात्र के लिए विद्या देने का कार्य नहीं करते थे अपितु गुरु समाज के लिए, राष्ट्र के लिए, राष्ट्र की रक्षा के लिए अच्छे नागरिक देने का कार्य करते थे तथा गुरुओं ने हमारी प्राचीन ज्ञान परंपरा को साथ में प्राचीन संस्कृति को आने वाली पीढ़ी में संवाहित करने का कार्य किया है।

सन 1823 में अंग्रेजों ने जब सर्वेक्षण कराया तब अंग्रेजों के ध्यान में आया कि प्रत्येक गांव में गुरुकुल चलता है। उस समय लगभग सात लाख से अधिक गुरुकुल भारत में चलते हैं और उस समय 100 प्रतिशत साक्षरता थी। सभी धर्म, पंथ और सभी वर्गों को शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति थी और अंग्रेजों ने षड्चंत्रवश 1835 में अंग्रेजी शिक्षा अधिनियम भारत में पारित किया। इसके माध्यम से अनेक वर्गों को शिक्षा से वंचित कर दिया गया और जब देश स्वतंत्र हुआ उस समय सर्वेक्षण किया गया तब 1947 में भारत में अंग्रेजी शिक्षा अधिनियम के कारण केवल 18 प्रतिशत साक्षरता थी। इस प्रकार हमारी संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था को अंग्रेजों ने छिन्न-भिन्न करने का षड्चंत्र किया और यह अंग्रेजी शिक्षा अधिनियम अभी तक भारत में रहा था। अब राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 से ठीक करने का प्रयास वर्तमान सरकार ने किया है।

जब हम शिक्षा जगत की बात करते हैं तब आषाढ़ की पूर्णिमा 'गुरु पूर्णिमा' ध्यान में आती है और इस गुरु पूर्णिमा का महत्व क्या था?वह आज के आधुनिक युग में विस्मरण हुआ है। प्राचीन काल में जब गुरुकुल शिक्षा व्यवस्था थी तब गुरु पूर्णिमा का एक विशेष महत्व रहा है। यह गुरु पूर्णिमा का दिन वह दिन है जिस दिन शिष्य विद्यारंभ करता था। शिष्य गुरु पूर्णिमा के दिन गुरु के पास जाकर उसके चरणों में अपना सिर झुका कर स्वयं को अर्पण करता था और वह उस समर्पण के भाव से स्वयं को गुरु के चरणों में समर्पित करता था और वह शिष्य कहता था के 12 वर्ष अथवा जितने वर्ष में यहां गुरुकुल में विद्या प्राप्त करूंगा मैं सदैव आपके प्रति समर्पित रहूंगा तथा आपकी आज्ञा का पालन करूंगा और समाज को सहयोग देने योग्य जब शिष्य हो जाया करता था तब गुरुकुल से प्रस्थान करने का दिन भी गुरु पूर्णिमा का दिन था। इसलिए गुरु पूर्णिमा का दिन विशेष महत्व का दिन है। गुरु पूर्णिमा का दिन गुरु के वंदन का दिन है-

''तत्कर्म यन्न बंधाय सा विद्या या विमुक्तये।
आयासायापरम् कर्म विद्यान्या शिल्पनैपुणम् ॥''

विष्णु पुराण के इस श्लोक में ऋषि ने कहा है कि विद्या वह है जो मुक्त करे। जो किसी बंधन में ना बांधे। लॉर्ड मैकाले ने जो शिक्षा पद्धति पारित कराई आज उसके कारण देखने को मिलता है कि शिक्षा केवल नौकरी पाने का साधन है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति में विद्या के साथ संस्कार थे तथा अनुभूति पर आधारित शिक्षा थी। शिष्य विद्या से अनुभूति करता था विद्या की अनुभूति करता था। जो षड्चंत्र से शिक्षा पद्धति भारत में थोपी गई उससे शिक्षा में संस्कार, अनुभूति पर आधारित शिक्षा यह नहीं रही। जो हमारी पुरातन शिक्षा पद्धति थी, शिक्षण की पद्धति थी। उसको पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है। जो कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 से शिक्षा जगत प्रयास कर सकता है।

शिक्षा जगत अथवा शिक्षा क्षेत्र की जब हम बात करते हैं तो इस

जब हम शिक्षा जगत की बात करते हैं तब आषाढ़ की पूर्णिमा 'गुरु पूर्णिमा' ध्यान में आती है और इस गुरु पूर्णिमा का महत्व क्या था?वह आज के आधुनिक युग में विस्मरण हुआ है। प्राचीन काल में जब गुरुकुल शिक्षा व्यवस्था थी तब गुरु पूर्णिमा का एक विशेष महत्व रहा है। यह गुरु पूर्णिमा का दिन वह दिन है जिस दिन शिष्य विद्यारंभ करता था। शिष्य गुरु पूर्णिमा के दिन गुरु के पास जाकर उसके चरणों में अपना सिर झुका कर स्वयं को अर्पण करता था और वह उस समर्पण के भाव से स्वयं को गुरु के चरणों में समर्पित करता था

शिक्षा क्षेत्र का जो मुख्य केंद्र बिंदु है वह है गुरु जिसको आज शिक्षक कहते हैं। जो विद्यार्थियों को शिक्षा देने का कार्य करता है, विद्यार्थी के जीवन को गढ़ने का कार्य करता है, विद्यार्थी के चरित्र को गढ़ने का कार्य करता है, जीवन में केवल सफलता लक्ष्य नहीं है अपितु जीवन को सार्थक कैसे करना है यह मंत्र देने का कार्य गुरु ही करता। इसलिए गुरु को, शिक्षक को भी यह समझने की आवश्यकता है कि वह केवल और केवल वेतन का शिक्षक नहीं है। बल्कि समाज तथा राष्ट्र के लिए उसका एक कर्तव्य है। उस कर्तव्य के बोध की आवश्यकता है। मेरा जो विद्यार्थी है उस विद्यार्थी के प्रति मेरा जो कर्तव्य है उस कर्तव्य को मुझे पूर्ण करना है। उसके लिए 'मैं शिक्षक हूं' यह भाव जब शिक्षक धारण करता है। तब वह गुरु बन जाता है। इसलिए जो प्राचीन काल में जो गुरु की प्रतिष्ठा थी। उसको पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता है। समाज में गुरु के स्थान की जो प्रतिष्ठा थी उसको पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है अर्थात गुरु की प्रतिष्ठा, गुरु का जो आदर था, गुरु का जो सम्मान था उस सम्मान को पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है। यह शिक्षक को भी समझने की आवश्यकता है कि जब वह स्व गौरव से ओतप्रोत होगा, उसके हृदय में यह भाव आएगा 'मैं शिक्षक हूं' मेरा समाज के लिए, अपने विद्यार्थी के लिए जवाबदेही है। मेरी जवाबदेही मेरे वेतन के लिए नहीं है, सरकार के लिए नहीं है। तब वह स्वावलंबी, स्वाभिमानी पीढ़ी का निर्माण करेगा।

इसलिए विद्यार्थियों को अपने गुरु के प्रति आदर, समर्पण, सम्मान, श्रद्धा का भाव रखना ही चाहिए। भगवत गीता में भी वर्णन है कि श्रद्धावान को ही ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। जिसमें श्रद्धा नहीं है उसको ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

विद्यार्थी जानकारी तो कहीं से भी प्राप्त कर सकता है लेकिन विद्या, ज्ञान गुरु के प्रति श्रद्धा से ही प्राप्त कर सकता है। गुरु का सम्मान आयु, धन, शिक्षा, वर्ग, वर्ण इस पर निर्भर नहीं करना चाहिए। शिक्षक शिक्षक है इसलिए उसका सम्मान होना चाहिए। इसलिए शिक्षक स्वयं अपने हृदय में शिक्षक होने का गर्व का अनुभव करे तथा विद्यार्थी व संपूर्ण समाज शिक्षक को प्रतिष्ठा प्रदान करें। तब विश्व का कल्याण एवं कल्याणकारी नेतृत्व करने वाली पीढ़ी का निर्माण हो सकता है।

विद्यार्थियों को अपने गुरु के प्रति आदर, समर्पण, सम्मान, श्रद्धा का भाव रखना ही चाहिए। भगवत गीता में भी वर्णन है कि श्रद्धावान को ही ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। जिसमें श्रद्धा नहीं है उसको ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

Recognition No. AGR09150112669 Recognition No. AGR09150112672

शिक्षा की ओर बढ़ते हुए कदम...

MANORISHI PUBLIC SCHOOL

Basai Arela, Pinahat, Agra
(An English Medium School Based on C.B.S.E. Curriculum)

विद्यालय की विशेषतायें :-

- अनुभवी एवं प्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा अध्ययन।
- कम्प्यूटर शिक्षा एवं सभी कमरों में पंखों की सुविधा।
- कमजोर बच्चों के लिए एक्स्ट्रास कक्षाएं की सुविधा।
- शिक्षक-अभिभावक मिटिंग।
- बच्चों के पीने के लिए शुद्ध पेयजल की व्यवस्था।
- स्वच्छ एवं सुन्दर हवादार शिक्षण कक्ष।
- खेलकूद प्रतियोगिताएँ एवं योगा अभ्यास।
- English Speaking कक्षाएँ संचालित।
- C.C.T.V. कैमरों की सुविधा।
- बच्चों के विद्यालय लाने के लिए वाहन की सुविधा।

Attention Parents !

Are You Looking for Best School For Your Child...

Admission Open

Nursery to Class Above

Prashant Pachauri
Director

Varun Sharma (Principal)

पता :
बसई अरेला, पिनाहट, आगरा
Contact No. 7830168000, 7060100168
Email : www.manorishipublicschool@gmail.com

महिला सशक्तिकरण एक अनछुआ पक्ष

■ प्रो. कामिनी शर्मा
प्रधानाध्यापिका (बेसिक शिक्षा)

महिला सशक्तिकरण की हर तरफ चर्चा होती है और किसी-किसी जगह तो बहस ही छिड़ जाती है लेकिन एक बात जो दिमाग में कौंधती है कि क्या सेल्फ डिफेंस सीख लेना या बाहर नौकरी करने जाना, अपनी बात को रख देना या सही गलत का निर्णय लेना ही महिला सशक्तिकरण की परिभाषा हो सकती है और इसके लिए भी सभी प्रयास करने की बात तो करते है लेकिन धरातल पर प्रयास करने की आवश्यकता महसूस होती है।

या दूसरा पहलू भी हो सकता हैं? जैसे एक महिला के लिए जब कैरियर बनाने का समय होता है तभी विवाह करने की आवश्यकता/उम्र होती है जब कैरियर को एक स्तर देने या कहे कि मुकाम पर पहुंचाने की आवश्यकता होती है तभी बच्चे के जन्म होने का दबाव भी होता है और जैसे-तैसे यदि कैरियर विवाह बच्चे इनमें सन्तुलन बिठा भी लिया जाये जोकि सम्भव नहीं होता तब अबोध बच्चे को घर छोड़कर नौकरी पर जाती माँ का हृदय एक अलग ही अपराध बोध से घिरी होता है जैसे कि उस बच्चे के लिए वह पाप कर रही है और वह एक मात्र उत्तरदायी व्यक्ति है और इस अपराध बोध को कम करने के लिए हमारी संस्थाएं या समाज कितना सोचता है? जैसे कि एक नवजात शिशु की माँ को समस्त सुविधा उसके कार्यस्थल पर मुहैया कराई जाये जिससे वह वास्तविक रूप से सशक्त महसूस करें न कि हारी हुई सी या आधी अधूरी सी।

क्या सेल्फ डिफेंस सीख लेना या बाहर नौकरी करने जाना, अपनी बात को रख देना या सही गलत का निर्णय लेना ही महिला सशक्तिकरण की परिभाषा हो सकती है और इसके लिए भी सभी प्रयास करने की बात तो करते है लेकिन धरातल पर प्रयास करने की आवश्यकता महसूस होती है।

उसके इस निर्बलता के भाव को समाप्त करना क्या महिला सशक्तिकरण का हिस्सा नहीं हो सकता, कितनी बार होता है कि महिला ही पूरे परिवार का भरण-पोषण करने हेतु नौकरी करने के लिए मजबूर या चुनौती को स्वीकार करती है तो वहीं साथ ही साथ अपराध बोध (निर्बल) से भी भरी रहती है क्या इस अपराध बोध को समाप्त करने का कोई जरिया/रास्ता नहीं हो सकता कि माँ काम पर जाये तब भी बच्चे की जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए समुचित व्यवस्था के तहत उसे समय/अनुमति दी जाये कि वह अपने बच्चे को साथ ले जाये या पालन-पोषण के स्थान पर जाकर बच्चे की आवश्यकता (फिडिंग) को पूरा कर सके।

क्यों नहीं महिला सशक्तिकरण के इस पहलू पर समाज/राष्ट्र विचार करता। ''परिवार प्रथम'' की संस्कृति में महिला धूरी है और धूरी के सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों में एक कामकाजी महिलाओं की निर्बलता को समाप्त करने का आयाम भी मजबूत पहलू है।

सच्चे अर्थों में महिला सशक्तिकरण का अर्थ है महिला की निर्बलता को हर स्तर पर समाप्त करना। यदि वह निर्णय लेने व बाहर काम काज करने की इच्छुक है तो उसे रोका न जाए, प्रतिबंध किसी भी निबर्लता के कारण न हो और सबल का अर्थ है उस अनुकूलता को बनाने से है जिससे वह अपनी क्षमता, योग्यता के आधार पर समाज को सकारात्मकता विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सके।

और अधिक समझे और निभाये ताकि महिला के एक पक्ष कैरियर की स्वतन्त्रता के कारण उसके दूसरे पक्ष स्त्रीत्व, मातृत्व पर आघात न हो।

जैसे यदि बच्चा बड़ा हो रहा है तो माता-पिता दोनों को साधिकार बच्चे की पैरेंटस मीटिंग में जाने हेतु कार्यालय से आज्ञा/अनुमति मिले जिससे वह और अधिक सबल महसूस करें, बच्चे के पालन पोषण में महत्वपूर्ण गुणों का विकास कर सके, ऊर्जावान बने न कि Guilt Consuice में जीती रहे कि वह कैरियर की दौड़ में अपने बच्चे को वैसे नहीं देख पाई जैसे बिना कामकाजी महिलाएँ करती हैं।

यदि स्त्री कैरियर बनाने का निर्णय ले या घर सम्भालने का दोनों स्थितियों में परिवार, समाज सरकार के छोटे-छोटे प्रयास उसके दक्षता, क्षमता को और अधिक निखारेगी वह कहीं पीछे छूटा हुआ महसूस नहीं करेगी उसके स्त्रित्व गुण की मृत्यु नहीं होगी। शिव शक्ति रूप स्थापित होगा। स्वस्थ परिवार, समाज, राष्ट्र का निर्माण होगा।

यदि महिला पढ़ी-लिखी दक्ष है और कामकाजी होने का निर्णय लेने की स्वतन्त्रता रखती है किन्तु विवाह मात्र इस भय से नहीं करती है कि फिर कैरियर नहीं बना पायेगी या ससमय विवाह हो भी गया तो बच्चे के जन्म में देरी करती है ताकि कैरियर के अवसर हाथ से न छूट जाये या बच्चे के कारण यदि ब्रेक लिया तो जीरो से शुरू करना पड़ेगा इस प्रक्रिया में भावनात्मक पक्ष पर कुठाराघात है स्त्रीतत्व को अनदेखा किया जा रहा है, परिवार की संस्था में देरी, पीढ़ी बढ़ाने में देरी, जो कि अन्ततोगत्वा देश की डेमोक्रेसी को प्रभावित कर देश की उम्र को प्रभावित करेगा और इसका सीधा एवं प्रत्यक्ष प्रभाव विकास उन्नति को बाधित करेगा।

सच्चे अर्थो में महिला सशक्तिकरण का अर्थ है महिला की निर्बलता को हर स्तर पर समाप्त करना। यदि वह निर्णय लेने व बाहर काम काज करने की इच्छुक है तो उसे रोका न जाए, प्रतिबंध किसी भी निबर्लता के कारण न हो और सबल का अर्थ है उस अनुकूलता को बनाने से है।

किसी भी देश की सम्पत्ति उसके नागरिक हैं और गुणवत्तापूर्ण मानव सम्पदा देश की पूंजी हैं यह संसाधन सुरक्षित, संरक्षित, पल्लवित रहे इस हेतु प्राथमिकता कामकाजी गैर कामकाजी महिलाओं हेतु पृथक-पृथक हो सकता है एक व्यवस्था को विकसित किया जाये कि कामकाजी महिलाएँ मानसिक रूप से अत्यधिक दबाव न महसूस करे वरन् उनके स्त्रीतत्व गुणों का निखार हो। देश प्रत्येक अर्थ से उन्नति करे जो खुशहाल परिवार समाज की नींव धर्ता के साथ-साथ स्वयं की वृक्ष बनती परिलक्षित हो तथा परिवार की जड़ों को सींच पाने में अधिक मजबूत हो। देश और समाज को उन्नति के नए आयामों की दिशा में ले जाने की प्रक्रिया में मजबूत योगदान कर देश को विश्व गुरू बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका में अग्रणी बन प्रकाशमय हो।

महिला निष्ठा ईमानदारी से मेहनत करती है पढ़ती है लिखती है परिवार का सम्बल बनती है समाज में योगदान देती है समय की तराजू पर कैरियर, परिवार सम्भालती है बावजूद इसके उसके भावनात्मक पक्ष पर चोट लगती रहती है उसका मातृत्व कभी पश्चाताप में जीता है तो कभी आघात लेता है।

महिला का भावनात्मक पक्ष, उसके स्त्रीत्व को सम्भाल कर रखना परिवार, समाज का उत्तरदायित्व ही नहीं वरन् कर्तव्य भी है वह मजबूत सर्पोट सिस्टम की हकदार है

ईश्वर ने उसे माता के रुप में स्थापित किया है यह मातृत्व शक्ति मात्र उसी के पास है पुरूष के पास नहीं वह धैर्यवान, सहनशील है किन्तु कैरियर की जिम्मेदारी निभाने में उसके स्त्रीत्व गुण दबने लगते हैं क्योंकि वह शारीरिक और मानसिक रूप से परिवार, कैरियर की जिम्मेदारी निभाते-निभाते खुद कहीं पीछे छूटने लगती है। स्वयं के प्रति शारीरिक मानसिक रूप से समय चक्र के किसी बिन्दु पर बाहर से मजबूत किन्तु अंदर से कमजोर महसूस होने पर सही स्त्रीतत्व पक्ष पीछे छूटने लगता है और बेहतर कर पाने की जिददोजहद में उसके पुरूषतत्व को सींचने मिलता है।

परिवार की स्थिति महिला के ईद गिर्द घूमती है वह अकेली बच्चे को जन्म देने जैसे पुनीत कार्य के साथ-साथ पालन पोषण परिवार के प्रत्येक सदस्य की देखभाल अपने स्त्रीत्व गुणों से उर्जित होकर ही कर पाती है उसे निर्णय लेने की स्वतन्त्रता सेना महिला सशक्तिकरण की परिभाषा का अधूरा पक्ष है वरन उसकी निर्णय क्षमता को बढ़ाना जिसमें वह स्वयं भी मानसिक रुप से पल्लवित महसूस करें, खिला हुआ महसूस करे ऐसी परिवार व समाज की तरफ से पहल हो, उसका मजबूत सपोर्ट सिस्टम बने वह अपनी अप्रत्यक्ष जिममेदारी को महिला के प्रत्यक्ष योगदान के सापेक्ष

किसी भी देश की सम्पत्ति उसके नागरिक है और गुणवत्तापूर्ण मानव सम्पदा देश की पूंजी है यह संसाधन सुरक्षित, संरक्षित, पल्लवित रहे इस हेतु प्राथमिकता काम काजी गैर काम काजी महिलाओं हेतु पृथक-पृथक हो सकता है एक व्यवस्था को विकसित किया जाये कि कामकाजी महिलाऐं मानसिक रूप से अत्यधिक दबाव न महसूस करे वरन् उनके स्त्रितत्व गुणों का निखार हो। देश प्रत्येक अर्थ से उन्नति करे जो खुशहाल परिवार समाज की नींव धर्ता के साथ-साथ स्वयं की वृक्ष बनती परिलक्षित हो तथा परिवार की जड़ों को सींच पाने में अधिक मजबूत हो।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उभरती नूतन प्रवृत्तियाँ

■ मनीष पटेल
असि. प्रोफेसर, बी.एम.एल. राज. महिला महाविद्यालय, झाँसी

शिक्षा प्रणाली किसी भी राष्ट्र अथवा समाज के विकास का एक महत्वपूर्ण अभिकरण है। इस कारण सदैव शिक्षा को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता रहा है। लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के तहत यह जरूरी है कि राष्ट्र समस्त नागरिकों को अधिकतम अवसर उपलब्ध कराए। शिक्षा राष्ट्र के निर्माण में अहम भूमिका अदा करती है। उच्च शिक्षा की भूमिका तो और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। उच्च शिक्षा के द्वारा ही देश को योग्य प्रशासक, नीति विचारक, अर्थशास्त्री, वैज्ञानिक तथा इंजीनियर आदि प्राप्त होते हैं।

आज की दुनियाँ में तीव्र तकनीकी प्रगति ने समाज के हर क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव उत्पन्न कर दिये हैं, विशेष रुप से रोबोटिक्स तथा कृत्रिम मेधा तकनीक ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी व्यापक परिवर्तन ला दिया है। कोरोना काल में उच्च शिक्षा व्यापक परिवर्तन के दौर से गुजरी है जिसके कारण उस समय उच्च शिक्षा के क्षेत्र में किए गए कई बदलाव अब हमारी उच्च शिक्षा प्रणाली का अनिवार्य हिस्सा बन गए हैं।

आज की दुनियां में तीव्र तकनीकी प्रगति ने समाज के हर क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव उत्पन्न कर दिये है, विशेष रुप से रोबोटिक्स तथा कृत्रिम मेधा तकनीक ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी व्यापक परिवर्तन ला दिया है।

हाल के वर्षो में उच्च शिक्षा व्यवस्था में आये कुछ प्रमुख बदलावों पर एक नजर डालते हैं–

1. स्मार्ट डिजिटल तकनीक पर आधारित शैक्षणिक परिसर–

परम्परागत शिक्षण प्रणाली चॉक व डस्टर पर आधारित होती है। इसमें शैक्षणिक परिसर में मुद्रित किताबें, भौतिक रुप से अवस्थित पुस्तकालय पुस्तक कलम तथा नोटबुक की मदद से अध्ययन अध्यापन का कार्य संपादित होता था। परन्तु आज कम्प्यूटर, इंटरनेट तथा मल्टीमीडिया पर आधारित शिक्षण प्रौद्योगिकी के विकास ने शैक्षणिक परिसर के रूप में व्यापक बदलाव ला दिया है। आज अधिकांश छात्र एंड्रायड आधारित स्मार्टफोन धारक हैं। उनके पास उच्च क्षमता वाले डेटा पैक वाले फोन उपलब्ध हैं। वे आज गूगल, यू टयूब, फेसबुक, व्हाट्सऐप, जूम, गूगल मीट, फोन पे तथा पेटीएम जैसे ऐप तथा सॉफ्टवेयर प्रोग्राम का प्रयोग कर रहे हैं। इन सबके मद्देनजर शैक्षणिक संस्थान अपने शैक्षणिक परिसर को आज की जरुरत के अनुरूप स्मार्ट डिजिटल शैक्षणिक परिसर के रूप में रूपान्तरित कर रहे हैं। इसके तहत वे फ्री वाई फाई कैम्पस, ऑनलाइन फीस भुगतान की सुविधा, डिजिटल नोटिस बोर्ड, मोबाइल पेज पर रिमांइडर, ऑनलाइन क्लास प्रणाली, पुस्तकालय प्रबंधन प्रणाली तथा कम्प्यूटर पर आधारित पेपरलैस ऑफिस प्रणाली आदि को अपना रहे हैं। यद्यपि ये व्यवस्था अधिकांशत महंगे शहरी संस्थानों तक सीमित हैं परन्तु धीरे–धीरे इनका विस्तार अन्य शैक्षणिक संस्थानों में भी हो रहा है।

(2) डिजिटल लाइब्रेरी की अवधारणा–

पारस्परिक पुस्तकालयों में पाठ्यपुस्तकें, संदर्भ पुस्तकें, जर्नल, समाचार पत्र व पत्रिकाएं मुद्रित रूप से रखी जाती है। आज परम्परागत लाइब्रेरी का स्थान डिजिटल लाइब्रेरी ले रही है। ऐसी लाइब्रेरी में डिजिटल डेटाबेस के रूप में अध्ययन सामग्री को संकलित करके रखा जाता है। ये सामग्री डिजिटल रूप में टेक्सट, चित्र ऑडियो, वीडियो तथा अन्य रूप में संग्रहीत की जाती है। अध्ययनकर्ता/छात्र इंटरनेट के माध्यम से कहीं भी, कभी भी और किसी भी सामग्री को एक्सेस कर सकता है।

डिजिटल लाइब्रेरी आकार में बहुत छोटी होती है और कुछ व्यक्तियों के द्वारा ही इसे चलाया भी जा सकता है। इसमें अध्ययन सामग्री को आसानी से सहेज कर रखा जा सकता है। यह दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के रुप में भी उपयोगी भूमिका अदा कर सकती है।

3. ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली–

कोरोना काल में मजबूरी में शुरु की गई ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली को आज हाथों हाथ लिया जा रहा है। अब ज्यादातर संस्थान हाइब्रिड मोड में शिक्षण कार्य करा रहे हैं जो परम्परागत और ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली का मिश्रित रूप है। ऑनलाइन शिक्षा शिक्षण का एक लचीला तरीका है जिसमें कम्प्यूटर, लैपटॉप तथा स्मार्टफोन के माध्यम से विद्यार्थी घर बैठे अध्ययन कार्य कर सकता है। जो लोग परम्परागत शिक्षण प्रणाली का हिस्सा बन पाने में सक्षम नहीं है उन्हें भी हम ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली से गुणवत्तायुक्त शिक्षा उपलब्ध करा सकते हैं। इस प्रणाली में शिक्षण से जहाँ विद्यार्थी का समय और धन बचता है वहीं शैक्षणिक संस्थानों के आधारभूत ढांचे पर किए जाने वाले व्यय में भी कमी आती है।

4. अध्यापक की भूमिका में बदलाव–

प्रत्येक समाज में शिक्षक को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। आधुनिक शिक्षण प्रणाली में शिक्षक की भूमिका बहुत बदल गई है। आज शिक्षक को एक साथ बहुभूमिका निर्वहन के लिए तैयार होना पड़ रहा है। उसे तकनीक पर आधारित नवीनतम शिक्षण पद्धत्तियों को सीखना और उसका अपने शिक्षण में प्रयोग करना जरुरी हो गया है। चॉक व डस्टर का स्थान लैपटॉप स्मार्टफोन पर आधारित शिक्षण पद्धति ने ले लिया है। आज शिक्षण में यू ट्यूब व पीपीटी का प्रयोग बहुतायत से होने लगा है। आज शिक्षकों को अपने छात्रों के लिए कौशल विकासकर्ता, रोजगार परामर्शदाता तथा संवेगात्मक स्थिरता विकासकर्ता जैसी भूमिकाओं के निर्वाह की भी जरुरत होती है।

5. परीक्षा तथा मूल्यांकन की प्रणाली में बदलाव

परम्परागत परीक्षा प्रणाली समय साध्य होती थी। उसमें परम्परागत उत्तर लेखन द्वारा छात्र का मूल्यांकन किया जाता था। वह प्रणाली स्मृति परीक्षण पर अधिक आधारित थी। परम्परागत परीक्षा प्रणाली में परीक्षा समय सारिणी बनाने से लेकर, पेपर बनाना, परीक्षा कराना, मूल्यांकन करना तथा रिजल्ट तैयार करना की पूरी प्रक्रिया में पर्याप्त समय लगता था।

आधुनिक परीक्षा प्रणाली सतत मूल्यांकन पर बल देती है जिसमें दत्तकार्य, प्रोजेक्ट, सेमिनार प्रस्तुतिकरण तथा सामाजिक जीवन में सहभागिता आदि पक्षों के माध्यम से विद्यार्थी का व्यापक दृष्टिकोण से मूल्यांकन किया जाता है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों को बहुविकल्पीय प्रश्न प्रणाली से रटने के बजाय समझने पर जोर दिया जाता है।

6. कौशल विकास पर बल

परम्परागत शिक्षण प्रणाली में शिक्षा सैद्धान्तिक पक्ष तक सीमित थी परन्तु आज शिक्षा में व्यावहारिक अनुप्रयोग पर जोर दिया जाता है। डिग्री महज एक कागजी प्रपत्र बनकर न रह जाए इसलिए आज शिक्षा में कौशल विकास की शिक्षा पर जोर दिया जाने लगा है। शिक्षा में उद्यमिता तथा नवाचार का महत्व बढ़ रहा है ताकि विद्यार्थी रोजगार आकांक्षी के बजाय रोजगार प्रदाता के रूप में विकसित हो। इस कारण व्यवसायपरक शिक्षा पर बहुत बल दिया जाने लगा है। छात्रों के कौशल विकास से उनमें रचनात्मकता, निर्णयन क्षमता, आत्मविश्वास संचार कौशल, तकनीकी दक्षता तथा अभिप्रेरण जैसे गुणों का विकास सम्भव हो पाता है। ये गुण उन्हें आज के दौर में अपने अस्तित्व तथा पहचान को बनाने में उपयोगी सिद्ध होंगे।

7. परिणाम आधारित शिक्षण

आज शिक्षण कार्य का मूल्यांकन छात्र के द्वारा पाठ्यक्रम के पूरा होने पर उसके ज्ञान, कौशल तथा व्यवहार में वृद्धि या बदलाव के आधार पर किया जाने लगा है। इस शिक्षण प्रतिमान में किसी विशेष पाठ्यक्रम के आवश्यक परिणाम पहले से ही ज्ञात होते हैं, निर्धारित होते है और पाठ्यक्रम के विभिन्न चरणों में सभी मापदण्डों का उपयोग करके विद्यार्थियों का मूल्यांकन किया जाता है।

इस प्रणाली में वार्षिक आधार पर मूल्यांकन के बजाय सेमेस्टर आधारित मूल्यांकन के माध्यम से छात्र की उपलब्धि का आंकलन किया जाता है।

पूर्व शिक्षण प्रणाली में एक खामी थी। जब कि विद्यार्थी पाठ्यक्रम के सभी चरणों को उत्तीर्ण नहीं कर लेता था तब तक उसे डिग्री उपलब्ध नहीं होती थी।

नई शिक्षा नीति के तहत न केवल वार्षिक प्रणाली का स्थान सेमेस्टर प्रणाली ने ले लिया है अपितु दो सेमेस्टर के लिए निर्धारित न्यूनतम क्रेडिट प्राप्त करने पर सर्टिफिकेट, चार सेमेस्टर पर डिप्लोमा तथा छह सेमेस्टर उत्तीर्ण करने पर डिग्री प्रदान किये जाने की व्यवस्था की गई है। इस प्रणाली से बीच में किन्ही कारणवश पढ़ाई छूट जाने की स्थिति में पूरी पढ़ाई बेकार नहीं जाती।

इसी प्रकार एक ही समय में दो पाठ्यक्रम में भी प्रवेश लिया जा सकता है। इस प्रणाली में तीव्र गति से सीखने वाले होशियार विद्यार्थी को कम समय में अधिक पाठ्यक्रम पूरा करने का भी अवसर प्राप्त होता है।

कोरोना काल में मजबूरी में शुरु की गई ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली को आज हाथों हाथ लिया जा रहा है। अब ज्यादातर संस्थान हाइब्रिड मोड में शिक्षण कार्य करा रहे हैं जो परम्परागत और ऑनलाइन शिक्षण प्रणाली का मिश्रित रूप है। ऑनलाइन शिक्षा शिक्षण का एक लचीला तरीका है जिसमें कम्प्यूटर, लैपटॉप तथा स्मार्टफोन के माध्यम से विद्यार्थी घर बैठे अध्ययन कार्य कर सकता है।

निष्कर्ष:– आज के समय में शिक्षा प्रणाली बहुत तेजी से बदल रही है। आज वैश्विक स्तर पर दिन प्रतिदिन प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है। शिक्षा का भी वैश्वीकरण हो रहा है। देश में विदेशी वि.वि. के कैम्पस खुल रहे हैं। विभिन्न तरह के एमओयू स्थापित हो रहे हैं। शिक्षा में प्रोद्यौगिकी का उपयोग बढ़ रहा है। सीखने की प्रक्रिया में कम्प्यूटर, इंटरनेट व मल्टीमीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण होती जा रही है। आज पारंपरिक पाठ्यक्रमों का स्थान लचीलेपन पर आधारित मल्टी डिसिप्लिनरी शिक्षा ले रही है। इन सबके चलते उच्च शिक्षा में नवीनतम बदलाव किया जाना अपरिहार्य है। बस जरुरत इस बात की है कि समाज में डिजिटल डिवाइड को न्यूनतम स्तर पर लाया जाए ताकि शिक्षा वास्तव में अवसर की समता के सिद्धान्त को यथार्थ में प्राप्त कर सके।

भारतीय संस्कृति और जीवन

■ श्रीमती नीलेश
शोध छात्रा, महेन्द्र प्रताप सिंह राज्य विश्वविद्यालय, अलीगढ़

'विविधता में एकता' केवल एक वाक्यांश या उद्धरण नहीं है। ये शब्द अत्यधिक हैं भारत जैसे देश के लिए विवेकपूर्ण और लागू, जो संस्कृति में अविश्वसनीय रूप से समृद्ध है, विरासत और मूल्य। इतने सारे धर्म, इतनी सारी मान्यताएँ भारत की संस्कृति की जटिल और मिश्रित रूप प्रदान करते हैं। 5000 से अधिक वर्षो पुरानी सभ्यता, भारत की संस्कृति को प्रवासी जनसंख्या ने संवारा है। सर्वविदित है कि कुछ प्राचीन सभ्यताओं में से हम एक हैं वर्षों से मिस्र, रोमन और मेसोपोटामिया सभ्यताओं के विपरीत ?इसके जीवित रहने का एक कारण वे मूल्य हैं जो भारतीय संस्कृति में गहराई से निहित हैं।

सांस्कृतिक एवं धार्मिक विविधता

'संस्कृति' शब्द का क्या अर्थ है ? क्या इसका तात्पर्य संगीत, नृत्य और कला से है या है यह व्यापक आधारित है ?क्या यह किसी विशेष क्षेत्र को संदर्भित करता है या व्यापक क्षेत्र को कवर करता है भौगोलिक क्षेत्र ?संस्कृति शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द 'कल्चर' से हुई है। जो 'कोलेरे' शब्द से निकला है जिसका अर्थ है 'खेती करना'। भारत धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता का देश है। भारत में चार प्रमुख धर्म प्रचलित हैं- हिंदू धर्म, सिख धर्म, इस्लाम और ईसाई धर्म। इन चार प्रमुख धर्मो के अंतर्गत कई छोटे धर्म और संप्रदाय भी हैं। यह विविधता भारत की विशालता और इतिहास की परिचायक है। भारत दुनिया की कुछ महान सभ्यताओं का घर रहा है, जिनमें सिंधु घाटी सभ्यता, वैदिक काल और मुगल साम्राज्य शामिल हैं। भारत गांधी, बुद्ध और शंकर जैसे महान दार्शनिकों और विचारकों की भूमि भी है। भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्य इस विविधता को प्रतिबिंबित करते हैं। भारतीय संस्कृति बड़ों के प्रति सम्मान, पारिवारिक एकता, ईमानदारी और कड़ी मेहनत पर आधारित है। भारतीय मूल्य भी औपचारिक और अनौपचारिक दोनों तरह की शिक्षा पर जोर देते हैं। भारत महान अवसरों की भूमि है और इसके नागरिक अपनी उद्यमशीलता की भावना के लिए जाने जाते हैं। भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्य देश के नागरिकों को आनंद लेने के लिए एक समृद्ध टेपेस्ट्री प्रदान करते हैं। ये मूल्य भारत को दुनिया में एक अद्वितीय और विशेष स्थान बनाने में मदद करते हैं।

इतने सारे धर्म, इतनी सारी मान्यताएँ भारत की संस्कृति की जटिल और मिश्रित रूप प्रदान करते हैं। 5000 से अधिक वर्षो पुरानी सभ्यता, भारत की संस्कृति को प्रवासी जनसंख्या ने संवारा है। सर्वविदित है कि कुछ प्राचीन सभ्यताओं में से हम एक है वर्षो से मिस्र, रोमन और मेसोपोटामिया सभ्यताओं के विपरीत? इसके जीवित रहने का एक कारण वे मूल्य हैं जो भारतीय संस्कृति में गहराई से निहित हैं।

भारतीयों के सांस्कृतिक मूल्य

भारत की संस्कृति के मूल्य धर्मो और परंपराओं का एक विविध मिश्रण हैं। भारत हिंदू धर्म, सिख धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म का जन्मस्थान है और देश की संस्कृति इन धर्मो से काफी प्रभावित है। भारत एक बड़ी मुस्लिम आबादी के साथ-साथ ईसाइयों, यहूदियों, पारसी और अन्य लोगों की छोटी आबादी का भी घर है। भारतीयों के लिए सबसे महत्वपूर्ण मूल्य उनके धर्म और क्षेत्र के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं। हालाँकि, कुछ मूल्य पूरे देश में समान हैं। इनमें बड़ों का सम्मान, पारिवारिक एकता और कर्म में विश्वास शामिल है। भारतीय भी शिक्षा को बहुत महत्व देते हैं। भारत में, लोगों के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त करना असामान्य बात नहीं है, भले ही वे धनी परिवारों से न हों। ऐसा इसलिए है क्योंकि शिक्षा को जीवन में किसी की स्थिति को बेहतर बनाने के एक तरीके के रूप में देखा जाता है। भारतीय कला और साहित्य को भी महत्व देते हैं। देश में संगीत, नृत्य और कला की समृद्ध परंपरा है। भारतीय साहित्य का भी बहुत सम्मान किया जाता है, और कई भारतीय रवीन्द्रनाथ टैगोर और प्रेमचंद जैसे महान लेखकों की कृतियों को पढ़ने का आनंद लेते हैं। अंततः भारतीय अपने आतिथ्य सत्कार के लिए जाने जाते हैं। वे मेहमानों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करने और उनके पास जो कुछ भी है उसे सर्वोत्तम प्रदान करने में विश्वास करते हैं। यह मूल्य इस बात से स्पष्ट होता है कि भारतीय दुनिया भर के पर्यटकों का स्वागत करते हैं।

भारतीयों के धार्मिक मूल्य

भारत कई धर्मों और संस्कृतियों का देश है। अधिकांश आबादी हिंदू धर्म का पालन करती है, लेकिन मुस्लिम, जैन, ईसाई और सिखों की भी बड़ी आबादी है। भारत एक बहुत ही विविधतापूर्ण देश है, और इसके धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्य एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बहुत भिन्न होते हैं। धार्मिक मूल्यों का कोई एक सेट नहीं है जिसका सभी भारतीय पालन

करते हों। हालाँकि, कुछ सामान्य मूल्य कई हिंदुओं द्वारा साझा किए जाते हैं। इन मूल्यों में बड़ों के प्रति सम्मान, पुनर्जन्म में विश्वास और धर्म (धार्मिक जीवन) पर ध्यान देना शामिल है। हिंदू भी कर्म में विश्वास करते हैं, जिसका मानना है कि इस जीवन में किसी व्यक्ति के कर्म अगले जीवन में उसका भाग्य निर्धारित करेंगे।

मुसलमान भारत में दूसरा सबसे बड़ा धार्मिक समूह है। इस्लाम एक एकेश्वरवादी धर्म है, और मुसलमान एक ईश्वर में विश्वास करते हैं जो सर्वशक्तिमान और दयालु है। मुसलमान पैगंबर मुहम्मद और ईसा मसीह पर भी विश्वास करते हैं और उनका मानना है कि कुरान ईश्वर का वचन है। मुसलमानों के मूल्यों में प्रार्थना, उपवास और दान देना शामिल है।

भारत में ईसाई एक छोटा लेकिन महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक वर्ग है। ईसाई धर्म भी एक एकेश्वरवादी धर्म है, और ईसाई एक ईश्वर में विश्वास करते हैं जिसने दुनिया और उसमें मौजूद सभी चीजों को बनाया। ईसाई भी ईसा मसीह में विश्वास करते हैं, जिनके बारे में उनका मानना है कि वे ईश्वर के पुत्र हैं। ईसाइयों के मूल्यों में प्रेम, क्षमा और जरूरतमंदों की मदद करना शामिल है।

सिख भारत में एक छोटा लेकिन महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक वर्ग है। सिख धर्म एक एकेश्वरवादी धर्म है, और सिख एक ईश्वर में विश्वास करते हैं जो सर्वशक्तिमान और दयालु है। सिख भी पैगंबर मुहम्मद और ईसा मसीह में विश्वास करते हैं, लेकिन वे यह नहीं मानते कि कुरान ईश्वर का वचन है। सिखों के मूल्यों में ईमानदारी, कड़ी मेहनत और जरूरतमंद लोगों की मदद करना शामिल है।

भारत कई धर्मों और संस्कृतियों का देश है। अधिकांश आबादी हिंदू धर्म का पालन करती है, लेकिन मुस्लिम, जैन, ईसाई और सिखों की भी बड़ी आबादी है। भारत एक बहुत ही विविधतापूर्ण देश है, और इसके धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्य एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बहुत भिन्न होते हैं।

जैन भारत में एक छोटा लेकिन महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक है। जैन धर्म एक प्राचीन धर्म है जो सिखाता है कि सभी जीवित प्राणी समान हैं और उनके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए। जैन भी कर्म और पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं। जैन मूल्यों में अहिंसा, करुणा और दान देना शामिल है।

भारतीय संस्कृति पर भौगोलिक प्रभाव

भारतीय संस्कृति अपनी विशिष्ट भौगोलिक विशेषताओं से प्रभावित है। भारत एक पाँच भौगोलिक प्रभागों वाला प्रायद्वीप है और ये निम्नलिखित हैं:

(1) उत्तरी भारत के पर्वत जो मुख्यत: हिमालय पर्वत श्रेणी।
(2) सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र नदी घाटियों में उत्तरी मैदान
(3) मध्य भारतीय पठार
(4) दक्षिण भारतीय पठार
(5) तटीय क्षेत्र

भौगोलिक विशेषताओं का प्रभाव भारतीय कला, वास्तुकला, अध्यात्म, संगीत, नृत्य आदि सभी पर परिलक्षित होता है। विंध्य के दक्षिण में विशिष्ट द्रविड़ संस्कृति है विकसित हुई जो उत्तरी आर्य संस्कृति से भिन्न है। भारतीय संस्कृति ने एशिया, दक्षिण-पूर्व एशिया और दुनिया के कई हिस्सों को प्रभावित किया है।

भारतीय संस्कृति और मानवीय मूल्यों का ऐतिहासिक विकास तथा भारतीय मूल्यों पर प्रभाव

जो सभ्यता दो महान नदी प्रणालियों, सिंधु और गंगा की घाटियों में विकसित हुई, हालाँकि हिमालय के कारण एक तीव्र सीमांकित भौगोलिक क्षेत्र में, वह कभी भी एक अलग सभ्यता नहीं थी। बसने वाले और व्यापारी भूमि और समुद्री मार्गों से भारत आए और इस प्रकार प्राचीन काल से ही भारत का अलगाव कभी पूरा नहीं हुआ। इसके परिणामस्वरूप सभ्यता के एक जटिल पैटर्न का विकास हुआ, जो प्राचीन से लेकर आधुनिक भारत की कला और सांस्कृतिक परंपराओं में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित हुआ, चाहे गंधर्व कला विद्यालय के नृत्य बुद्ध, जो यूनानियों से काफी प्रभावित थे, से लेकर महान मंदिरों तक। उत्तर और दक्षिण भारत से लेकर मुगल वास्तुकला और लघु चित्रकला तक, जो हिंदू और मुस्लिम परंपरा का मिश्रण था।

प्राचीन भारत के लगभग सभी कलात्मक अवशेष धार्मिक प्रकृति के हैं, या कम से कम धार्मिक उद्देश्यों के लिए बनाए गए थे। धर्मनिरपेक्ष कला निश्चित रूप से अस्तित्व में थी, हालाँकि इस धर्मनिरपेक्ष कला को प्रदर्शित करने वाली अधिकांश मौजूदा मूर्तियाँ और पेंटिंग गायब हो गई हैं। दरअसल, प्राचीन काल से बहुत कम पेंटिंग बची हैं। साहित्यिक संदर्भों से यह सिद्ध होता है कि प्राचीन भारत में चित्रकला एक अत्यंत विकसित कला थी। यह हमारे गुफा मंदिरों की मौजूदा भित्ति चित्रों में प्रचुर मात्रा में प्रदर्शित होता है। अन्य साक्ष्यों के अभाव में, इस काल की विरासत का विश्लेषण और व्याख्या हमारे प्राचीन ग्रंथों के साथ-साथ जीवित वास्तुशिल्प और मूर्तिकला अवशेषों की जानकारी पर आधारित है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से, सिंधु घाटी सभ्यता या हड़प्पा संस्कृति, जैसा कि इसे हाल ही में कहा जाता है, हमारी प्राचीन सभ्यता में सबसे व्यापक थी। हड़प्पा संस्कृति और बाद की आर्य संस्कृति के बीच राजनीतिक निरंतरता को पूर्व की गिरावट और बाद की सभ्यता के उदय के बीच की समय सीमा द्वारा रोका गया था। आर्य काल में वैदिक साहित्य के साथ-साथ पुराणों की कहानियों का भी विकास हुआ। ये पूरी तरह से पौराणिक घटनाएँ नहीं हैं क्योंकि इसमें ऐतिहासिक घटनाओं का संदर्भ दिया गया है। सबसे प्रारंभिक साहित्यिक स्रोत ऋग्वेद और दो महाकाव्य, रामायण और महाभारत थे। घटनाओं के उनके वर्णन को 19वीं सदी के यूरोपीय लोगों के सकारात्मकवाद ने चुनौती दी थी। प्रत्यक्षवादियों ने तर्क

दिया कि प्रत्येक कथा को ऐतिहासिक साक्ष्य द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए। हमारे इतिहास की व्याख्या में मिथक, किंवदंती और तथ्य के बीच संबंध को संशयवादी पश्चिमी दर्शकों को समझाना हमेशा मुश्किल रहा है। शायद कभी भी तथ्य को कल्पना से अलग करना संभव नहीं होगा, हालाँकि कुछ ऐतिहासिक घटनाएं जैसे कि कुरुक्षेत्र की लड़ाई, ऐतिहासिक साक्ष्य द्वारा समर्थित हो सकती हैं। हालाँकि, सांस्कृतिक रूप से, बाद के वैदिक साहित्य के काल में भारतीय दर्शन और विचार उसी दिशा में विकसित हुए, जिसका वह तब से अनुसरण कर रहा है। इसने भारत की संस्कृति के महान काल की शुरुआत को चिर्ि त किया जहां उसके समाज, धर्म, साहित्य और कला के पैटर्न ने धीरे-धीरे अपने वर्तमान आकार को ग्रहण किया।

प्राचीन मंदिर वास्तुकला बाद की यूरोपीय गोथिक शैली से काफी अलग थी। जैसा कि ए.एल. बाशम ने संकेत दिया है, मंदिर की मीनारें, हालाँकि ऊंची हैं, ठोस रूप से पृथ्वी पर आधारित हैं। नाचते हुए शिव को छोड़कर, पवित्र चिह्न आमतौर पर जमीन पर बैठा होता है। जैसा कि आप सभी जानते हैं, भारतीय मंदिर की मूर्तियां, चाहे हिंदू हों या बौद्ध या जैन, सौंदर्य के भारतीय मानकों के अनुरूप, सजावटी रूपांकन के रूप में महिला रूप का पूर्ण उपयोग करती हैं। बाशम यह भी बताते हैं कि प्राचीन भारतीय धार्मिक कला उनके धार्मिक साहित्य से बिल्कुल अलग है। कला का काम धर्मनिरपेक्ष कारीगरों से आया है जो इसमें एक तीव्रता लेकर आए हैं जिसे हमारे प्राचीन मंदिरों में उन धार्मिक रूपों के पीछे देखा जा सकता है जिनमें वे खुद को अभिव्यक्त करते हैं। यह बात भारत के कई हिस्सों में मौजूद प्राचीन गुफा मंदिरों से भी स्पष्ट होती है, जिनमें सबसे प्रसिद्ध अजंता और बाद में एलोरा के गुफा मंदिर हैं।

जो सभ्यता दो महान नदी प्रणालियों, सिंधु और गंगा की घाटियों में विकसित हुई, हालाँकि हिमालय के कारण एक तीव्र सीमांकित भौगोलिक क्षेत्र में, वह कभी भी एक अलग सभ्यता नहीं थी। बसने वाले और व्यापारी भूमि और समुद्री मार्गो से भारत आए और इस प्रकार प्राचीन काल से ही भारत का अलगाव कभी पूरा नहीं हुआ।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय वास्तुकला एवं मूर्तिकला गतिशील थी, स्थिर नहीं। संस्कृति के इस पारस्परिक निषेचन के कारण, भारत की प्राचीन संस्कृति मुस्लिम आक्रमणकारियों के आगमन के साथ नष्ट नहीं हुई, प्राचीन फारसी संस्कृति और सभ्यता के भाग्य के विपरीत, 6वीं शताब्दी के मंदिर वास्तुकला में कुछ ग्रीक प्रभाव दिखाई देता है, जबकि बाद में मंदिर की छत का निर्माण हुआ। जो लकड़ी से पत्थर में बदल गया था, उसने कुछ मुस्लिम प्रभाव दिखाया। यह उत्तर में मंदिर वास्तुकला के अध्ययन से स्पष्ट है जिसमें एक गोल शीर्ष और घुमावदार रूपरेखा के साथ इंडो-आर्यन शैली थी और द्रविड़ शैली जो एक आयताकार पिरामिड के आकार में थी। हालाँकि, पहले की संस्कृति की रक्षा के लिए कुछ कठोरता आ गई।

मध्यकालीन भारतीय संस्कृति

इस प्रकार, 10वीं शताब्दी के बाद के आक्रमणों के बावजूद प्राचीन भारतीय संस्कृति अक्षुण्ण बनी रही, जिसने एक विषम भारतीय संस्कृति के विकास पर प्रभाव डाला। तुर्कों, फारसियों और अफगानों के आक्रमण से व्यापार, संस्कृति की एक नई शैली और एक नए धर्म के अलावा एक नई भाषा भी सामने आई। तुर्की शासन के अंत और समरकंद से आए मुगलों के उदय के साथ, कला और संस्कृति की एक विशिष्ट इंडो-इस्लामिक शैली विकसित हुई, जिसका ताजमहल सबसे शानदार उदाहरण है। ये प्रवृत्तियाँ मुगल-पूर्व चरण में स्पष्ट हो गई और इन्हें दिल्ली में 12वीं शताब्दी में निर्मित मस्जिदों में देखा जा सकता है। मस्जिदों का निर्माण स्थानीय हिंदू वास्तुशिल्प परंपराओं के अनुसार किया गया था, जिसमें सहायक कोष्ठक की मदद से स्तंभों पर इमारत खड़ी करना और क्षैतिज बीम के साथ छत को फैलाना शामिल था। इन मस्जिदों में इस्लामी चरित्र बाद में आया। वास्तव में, कुतुबमीनार, हालाँकि अवधारणा में इस्लामी थी, प्रतिभाशाली हिंदू कारीगरों और श्रमिकों द्वारा बनाई गई थी। यहां तक कि कुरान की आयतों को भी पारंपरिक भारतीय आभूषणों में उपयोग किए जाने वाले अरबी और पुष्प डिजाइनों से सजाया गया था। ये कला और वास्तुकला के बाद के इंडो-इस्लामिक रूप के शुरुआती मुगल-पूर्व रुझान थे।

यदि कोई मुगल स्मारकों में संस्कृतियों के इस परस्पर निषेचन का विश्लेषण करता है, तो अकबर द्वारा निर्मित फतेहपुर सीकरी, जिसे बड़े पैमाने पर सजाया गया था, में पेंटिंग और नक्काशी हैं जो स्पष्ट रूप से हिंदू प्रभाव दिखाती हैं। उदाहरण के लिए, मरियम के महल में, जिसका नाम अकबर की मां के नाम पर रखा गया है, उत्तर की ओर के ब्रैकेट पर की गई नक्काशी में हनुमान द्वारा राम की पूजा करते हुए दिखाया गया है। बाद में, ये प्रभाव ऊपर उल्लिखित ताजमहल में और अधिक स्पष्ट हो गए। इसकी महिमा ज्यामितीय संतुलन और सटीक अनुपात की पूर्णता से उत्पन्न होती है। सुरुचिपूर्ण पिएट्रा ड्यूरा उस समय के यूरोपीय और इतालवी डिजाइनों से प्रभावित था लेकिन ज्यामितीय पैटर्न और पुष्प डिजाइन वही हिंदू प्रभाव दिखाते हैं जो कुतुब मीनार में स्पष्ट था।

इसी प्रकार, मुगल लघुचित्र, हालाँकि ईरानी शैली पर आधारित थे, उन्होंने अपना विशिष्ट चरित्र उन स्वदेशी चित्रकारों से प्राप्त किया जिन्हें अकबर ने नियोजित किया था। अकबर के दरबार के प्रमुख चित्रकारों में से एक दसवंत नाम के एक हिंदू कुम्हार का बेटा था। जयपुर के महाराजा

के संग्रहालय में महाभारत के फारसी अनुवाद का दसवंत का चित्रण मिल जाएगा। अबुल फजल की आधिकारिक पुस्तक के अनुसार, एक अन्य चित्रकार, बसावन ने, 'विशेषताओं के चित्रण, रंगों के वितरण और चित्रांकन चित्रों' में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। बाद में, जहांगीर के शासनकाल के दौरान चित्रकारों के काम, जैसे अबुल हसन या मनोहर या बिशुन दास, विशेष रूप से चित्रांकन चित्रों में यूरोपीय, भारतीय और ईरानी कलात्मक रुझानों का क्रिस्टलीकरण दिखाएं। जहांगीर के अधिकांश प्रसिद्ध कलाकार शाहजहाँ के दरबार में रहे। उनमें रंग तकनीक और सूक्ष्म रंग शामिल थे और रोजमर्रा की जिंदगी से यथार्थवादी दृश्यों का इस्तेमाल किया गया था। औरंगजेब के शासन के समय से गिरावट देखी गई।

स्पष्ट रूप से भारत में मध्ययुगीन और मुस्लिम इतिहास का सबसे आकर्षक पहलू कला और वास्तुकला में इंडो-इस्लामिक शैली का विकास है, जो इस्लाम की जरूरतों के लिए भारतीय संसाधनों, विशेषज्ञता, डिजाइन और रूपांकनों के अनुकूलन की विशेषता है। पतले कुतुबमीनार की बालकनियों के नीचे अद्वितीय स्टैलेक्टाइट ब्रैकेटिंग को हिंदू श्रमिकों द्वारा निष्पादित किया गया था, जबकि ईरानी वास्तुशिल्प प्रवृत्तियों को मस्जिदों में पारंपरिक हिंदू अलंकरण के साथ जोड़ा गया था जो अभी भी अहमदाबाद और चंपानेर में मौजूद हैं। मुगल काल में जो विकसित हुआ वह एक उदार पैटर्न था, जहाँ, जैसा कि फतेहपुरसीकरी के महलों में दिखाया गया था, हिंदू कल्पना को ईरानी सादगी पर आरोपित किया गया था। आगरा के पास सिकंदरा में अकबर के मकबरे की सीढ़ीदार संरचना एक बौद्ध स्मारक की याद दिलाती है। बेशक, ताज महल ने, अपने डिजाइनरों की कल्पना और संवेदनशीलता में, इसे भारत-इस्लामिक सभ्यता का अद्वितीय फूल बना दिया।

संस्कृति, सभ्यता और विविधता के माध्यम से वैश्विक विश्व विरासत में भारत का योगदान

वैश्विक विरासत में भारत का योगदान की दृष्टि से देखें तो हम पाते हैं कि हमारी विरासत की अंतर्राष्ट्रीय मान्यता यूनेस्को की प्रतिष्ठित विश्व विरासत समिति द्वारा समन्वित है जो विश्व स्तर पर विश्व विरासत स्थलों के संरक्षण और संरक्षण की देखरेख करती है, और जिसके हम एक महत्वपूर्ण सदस्य हैं। संयुक्त राष्ट्र विश्व धरोहर समिति के सदस्य के रूप में, भारत वर्तमान में माजुली द्वीप (ब्रह्मपुत्र नदी पर और आकार में बेल्जियम से बड़ा), अमृतसर में स्वर्ण मंदिर, चंडीगढ़ के सांस्कृतिक परिदृश्य सहित कई परियोजनाओं को अंतरराष्ट्रीय मान्यता दिलाने की मांग कर रहा है। क्राउन ऑफ ले कौरबुसिएर प्रोजेक्ट, और स्पाइस रूट। भारत अंतर्राष्ट्रीय अनुबंधित श्रम मार्ग परियोजना की मान्यता के लिए मॉरीशस सरकार का भी समर्थन कर रहा है और उसके साथ काम कर रहा है। कुछ उदाहरण नीचे दिए गए हैं-

1. अंतर्राष्ट्रीय स्पाइस रूट परियोजना

दो सहस्राब्दी स्पाइस रूट को पुनर्जीवित करने का चल रहा प्रयास एक नई और महत्वपूर्ण भारतीय पहल है। बीते समय के नाविकों और व्यापारियों द्वारा तय किया गया यह इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण और रहस्यमय व्यापार मार्गों में से एक है। इस प्रसिद्ध मार्ग के केंद्र में केरल था लेकिन अन्य राज्य, विशेष रूप से गुजरात भी इस स्पाइस रूट का हिस्सा थे। इन मसालों की खुशबू ने दुनिया को लुभाया, जिसमें वास्को डी गामा भी शामिल थे जिनका निधन केरल में हुआ था। उनका पहला दफन केरल में हुआ था। मालाबार तट, जिसे स्पाइस कोस्ट का नाम दिया गया, की उनकी यात्रा इतिहास में एक निर्णायक क्षण थी क्योंकि इसने भारत और यूरोप के बीच संपर्क स्थापित किया, उपनिवेशवादियों को भारत लाया और पुर्तगाली और डचों की विदेशी बस्तियों की नींव रखी, जिन्हें बाद में धकेल दिया गया। जब अंग्रेजों ने भारत में अपनी निश्चित उपस्थिति स्थापित की तो उन्हें बाहर कर दिया गया।

स्पाइस रूट के परिणामस्वरूप भारत के इन हिस्सों में प्रमुख धर्मों, संस्कृति और सभ्यता का संगम हुआ। मिस्रवासियों, इथियोपियाई और यूनानियों के बाद, इन विदेशी मसालों की खोज में रोमन और चीनी आए। उनके साथ या उनसे पहले 587 ईसा पूर्व और 70 ईस्वी में यहूदी आए, 52 ईस्वी में एपोस्टल थॉमस के आगमन के साथ ईसाई और 7वीं शताब्दी ईस्वी में अरब व्यापारियों के साथ इस्लाम आया, जिससे यह क्षेत्र संस्कृति और सभ्यता का एक वास्तविक मिश्रण बन गया। इस कारण से, स्पाइस रूट शुरू में पर्यटकों और यात्रियों को वर्तमान के स्वाद के साथ-साथ अतीत की विरासत से जोड़ने के लिए रूट के किनारे संग्रहालय स्थापित करना चाहता है।

इस प्रकार, स्पाइस रूट इस प्राचीन मार्ग से जुड़े 31 देशों के साथ हमारे समुद्री व्यापार संबंधों को फिर से स्थापित करता है, और आधुनिक यात्रियों के बीच इस प्राचीन समुद्री मार्ग के प्रति रुचि को फिर से जगाने का प्रयास करता है जो प्राचीन और मध्ययुगीन काल में दुनिया भर के यात्रियों को भारत लाने के लिए जिम्मेदार था। इस परियोजना ने संयुक्त राष्ट्र और अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार निकायों के साथ-साथ उन सरकारों का भी ध्यान आकर्षित किया है जिनके स्पाइस रूट के साथ ऐतिहासिक संबंध थे जैसे कि नीदरलैंड, फ्रांस और यूनाइटेड किंगडम।

इस परियोजना का उद्देश्य प्राचीन मार्ग के 31 देशों के बीच इन विरासतों को साझा करना है। इस पहल से इस ऐतिहासिक यात्रा का पता लगाने के लिए बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटकों के भारत आने की उम्मीद है। परियोजना का केंद्र-बिंदु मध्य केरल में कोच्चि-कोडुंगल्लूर बेल्ट है, जहां प्राचीन मसाला बंदरगाह मुजिरिस स्थित था और जहां पश्चिम एशिया और भूमध्यसागरीय क्षेत्र से व्यापारी समुद्र और जमीन के रास्ते आते थे। साक्ष्य मुजिरिस - एक बंदरगाह जो दो सहस्राब्दी पहले फला-फूला और पश्चिम के बीच, रहस्यमय तरीके से गायब होने से पहले, मसाला व्यापार की ओर इशारा करता है। मुजिरिस की तलाश में शुरू की गई खुदाई निर्णायक रूप से प्रदर्शित करेगी कि यह प्राचीन बंदरगाह, जो प्लिनी द एल्डर की पहली शताब्दी के इतिहास के अनुसार, मिस्र के लाल सागर

बंदरगाहों से 14 दिनों में पहुँचा जा सकता था, स्पाइस रूट का मुख्य केंद्र था।

2.अंतर्राष्ट्रीय अनुबंधित मार्ग परियोजना

जुलाई 06 में, अप्रवासी घाट को भारत के समर्थन से यूनेस्को की विश्व विरासत सूची में अंकित किया गया था। यह गिरमिटिया श्रम प्रणाली की सबसे महत्वपूर्ण जीवित अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है जो 19वीं और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में औपनिवेशिक काल में मौजूद थी। 1834 में गुलामी के औपचारिक उन्मूलन के बाद स्थापित, अप्रवासी घाट उस बिंदु को चिह्नित करता है जहां अनुबंधित श्रमिक, मुख्य रूप से बिहार और उत्तर प्रदेश प्रांतों से, बल्कि औपनिवेशिक भारत के दक्षिणी प्रांतों से भी आते थे, इन द्वारों से होकर या तो मॉरीशस में काम करने के लिए रुकते थे। चीनी बागानों में गिरमिटिया मजदूर के रूप में या गुयाना, सूरीनाम और रीयूनियन द्वीप जैसे आगे के गंतव्यों तक जाने के लिए, कुछ नाम हैं। इस प्रकार, 1834 से इस अवधि के दौरान यानी गुलामी के उन्मूलन के बाद से 20 वीं शताब्दी की शुरुआत तक, इससे भी अधिक बीस लाख गिरमिटिया मजदूरों ने इस मार्ग, जिसे 'कुली रूट' भी कहा जाता है, से मॉरीशस और अन्य गंतव्यों तक यात्रा की। इसलिए यह मार्ग न केवल संविदात्मक श्रम की एक नई प्रणाली के विकास का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि सभ्यता की विरासत, परंपराओं और मूल्यों के संरक्षण का भी प्रतिनिधित्व करता है, जिन्हें ये लोग मॉरीशस सहित दूर-दराज के स्थानों तक अपने साथ ले गए। इसके परिणामस्वरूप, एक सदी बाद, इन नए देशों में बहुसांस्कृतिक समाजों का विकास हुआ, जहां से अक्सर ये गिरमिटिया श्रमिक कभी भी अपने वतन नहीं लौटे।

अंतर्राष्ट्रीय गिरमिटिया श्रम मार्ग परियोजना को विश्व धरोहर समिति द्वारा अनुमोदन के लिए विकसित किया जा रहा है। यह परियोजना, अपनाए जाने पर, स्लेव रूट के समान, मेमोरी ऑफ द वर्ल्ड रजिस्टर में एक महत्वपूर्ण योगदान का प्रतिनिधित्व करेगी। यह दुनिया भर में फैले अपने प्रवासी भारतीयों की सांस्कृतिक विविधता में भारत के योगदान को भी उजागर करेगा, जिसमें हमारी मौखिक परंपराएं, जैसे कि भोजपुरी भाषा और गाने शामिल हैं, जो अभी भी मॉरीशस, गुयाना, सूरीनाम और पूरे कैरेबियन में गाए जाते हैं। वे अपनी महान मातृभूमि, भारत की यादों को याद करते हैं और 150 साल पहले इन देशों में लाई गई सांस्कृतिक परंपराओं को जीवित रखते हैं।

प्राचीन काल से इस विरासत का पता लगाने के बाद, कोई केवल इस बात पर आश्चर्यचकित हो सकता है कि घटनाएँ इतिहास और ऐतिहासिक व्याख्याओं को कैसे आकार देती हैं, जैसा कि मैंने पहले ई.एच. को उद्धृत करके नोट किया था। खैर हमारी सांस्कृतिक और सभ्यतागत विरासत के वैश्विक योगदान को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तेजी से मान्यता और सम्मान मिल रहा है। एक राष्ट्र के रूप में हम उस भारत से बहुत दूर आ चुके हैं जिसका वर्णन स्वामी विवेकानन्द ने कई वर्ष पहले 'भारत का सार' में किया था।

'ऐसा लगता है कि सबसे लंबी रात बीत रही है, सबसे बड़ी मुसीबत खत्म होती दिख रही है और आखिरकार, प्रतीत होता है कि लाश जाग रही है और एक आवाज हमारी ओर आ रही है - दूर पीछे जहाँ इतिहास और यहाँ तक कि परंपरा भी झाँकने में विफल रहती है अतीत का अंधकार, वहां से उतर रहा है, ऐसे प्रतिबिम्बित हो रहा है, मानो ज्ञान, प्रेम और कर्म के अनंत हिमालय के शिखर से शिखर तक, भारत, हमारी यह मातृभूमि - एक आवाज हमारी ओर आ रही है, सौम्य, दृढ़, और फिर भी अपने उच्चारण में असंदिग्ध, और जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे हैं, यह बढ़ता जा रहा है, और देखो, सोया हुआ व्यक्ति जाग रहा है! हिमालय से आने वाली हवा की तरह, यह लगभग मृत हड्डियों और मांसपेशियों में जीवन ला रहा है, सुस्ती दूर हो रही है, और केवल अंधे नहीं देख सकते, या विकृत नहीं देख पाएंगे, कि वह जाग रही है, हमारी इस मातृभूमि को, उसकी गहरी लंबी नींद से। कोई भी अब उसका विरोध नहीं कर सकता है, वह कभी भी सोने वाली नहीं है, कोई भी बाहरी शक्तियाँ ऐसा नहीं कर सकती हैं उसे अब और रोके रखो। जो भारत बनना है, वह भविष्य का भारत, प्राचीन भारत से कहीं अधिक महान होना चाहिए।

आज की स्थिति के विपरीत, जहां हमारी विरासत में अंतर्राष्ट्रीय ध्यान और रुचि और हमारी प्रतिक्रिया पुरानी संस्कृत कहावत के निरंतर ज्ञान को प्रदर्शित करती है:

'न रत्नानां विषयति मृग्यतेहि तत अर्थात् 'हीरा खोजता नहीं, बल्कि खोजा जाता है'

निष्कर्ष : यदि हम वर्तमान समय से तुलना करें तो 70 वर्ष पहले की मानव संस्कृति (व्यवहार, विचार, प्रौद्योगिकियाँ) बहुत भिन्न हैं। शोधकर्ताओं के लिए अपनी धारणाओं को निर्दिष्ट करने और सबसे जटिल प्रक्रिया को निकालने की आवश्यकता ने सांस्कृतिक विकासवादी क्षेत्र में आगे बढ़ने की उपयोगिता साबित कर दी है। यह अकादमिक मूल्यों से परे महत्वपूर्ण है। इसने शैक्षणिक मूल्यों और अन्य विषयों के बीच अंतर को पाटने में बहुत मदद की है। इसका आदर्श उदाहरण जीनोमिक विविधताओं को प्रकट करने के लिए प्रौद्योगिकी को बंद करना हो सकता है। परंपरा में गहराई से निहित होने के बावजूद, भारतीय संस्कृति स्थिर नहीं है। आज के युवा सांस्कृतिक प्रथाओं की पुर्नव्याख्या कर रहे हैं, वैश्विक पॉप संस्कृति को अपना रहे हैं और सामाजिक परिवर्तन पर जोर दे रहे हैं। शिक्षा और सांस्कृतिक संस्थान भी विकसित हो रहे हैं। भारत में ललित कला, संगीत, नृत्य और समग्र चिकित्सा की एक लंबी परंपरा है जिसे पुनर्जीवित किया जा रहा है। भारतीय साहित्य, फिल्में, संगीत, भोजन और फैशन अधिक मुख्यधारा की अंतर्राष्ट्रीय अपील प्राप्त कर रहे हैं। साथ ही, शहरीकरण और प्रौद्योगिकी सांस्कृतिक बदलावों को प्रभावित कर रहे हैं। शहरों में कई पुराने रीति-रिवाजों को छोड़ा जा रहा है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक ग्रामीण जीवन कायम है। भारत की सांस्कृतिक यात्रा में परंपरा और आधुनिकता, विविधता और एकता के बीच संतुलन की भूमिका है।

शिक्षा में भारतीयता के तत्व

■ श्रीमती अमिता शर्मा

जब मनुष्य का जन्म होता है तब उसमें कोई समझ नहीं होती है। अपने व्यक्तित्व को पूर्ण बनाने में उसे विकास के अनेक सोपानों पर चढ़ना पड़ता है। व्यक्तित्व विकास की इस यात्रा में शिक्षा ही व्यक्ति की सहायता करती है। शिक्षा से व्यक्ति में सोचने-समझने की शक्ति का विकास होता है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में सामंजस्य स्थापित करने योग्य बनता है। शिक्षा द्वारा ही वह अपने समाज और राष्ट्र के हित में एक नवीन वातावरण का निर्माण करने योग्य बनता है।

अत: हमें यह निश्चित करना होगा कि हम शिष्यों को किस प्रकार का सामाजिक और राष्ट्रीय वातावरण दे रहे हैं। शिक्षा का स्तर, पद्धति और व्यवस्था भी निर्धारित करना होगा। जिससे हम सर्वगुण सम्पन्न, सुसंस्कारित, अनुशासित व्यक्ति का निर्माण कर सकें।

इसके लिए क्या हमें विश्व की विभिन्न शिक्षा पद्धतियों जैसे- हरबर्टीय पंचपदी, प्रो.ब्लम की सप्तपदी, मौरिसन की ईकाई पद्धति, किंडरगार्टन पद्धति, मोंटेसरी पद्धति, डाल्टन पद्धति का अंधानुकरण करना चाहिए। अथवा हमें शिक्षा में भारतीयता के आधार पर शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। इन पाश्चात्य पद्धतियों में से अच्छे बिन्दु लेकर अपनी वैदिक और अर्वाचीन भारतीय पद्धतियों में सुधार कर एक नई शिक्षा पद्धति का निर्माण करना चाहिए। उसके लिए हमें पहले शिक्षा और भारतीयता दोनों का ही अभिप्राय विस्तार से जान लेना होगा।

- स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है कि ''मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।'
- पं. रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार शिक्षा का अर्थ मानव मस्तिष्क को इस योग्य बनाना है कि वह सत्य की खोज कर सके और उसे व्यक्त कर सके।''
- महान दार्शनिक सुकरात ने कहा - ''शिक्षा का अर्थ है प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में अदृश्य रूप से विद्यमान संसार के सर्वमान्य विचारों को प्रकाश में लाना।''
- प्रो. ड्रिवर के अनुसार - ''शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा बालक के ज्ञान, चरित्र तथा व्यवहार को एक विशेष सांचे में ढ़ाला जाता है।''
- वहीं ब्राउन का कहना है- ''शिक्षा चैतन्य रुप में एक नियंत्रित प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाए जाते हैं तथा व्यक्ति द्वारा समाज में।''

भारतीय परिपेक्ष्य में शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा की शिक्ष धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से बना है जिसका अर्थ है सीखना और सिखाना।

अत: हम यह कह सकते हैं कि- ''शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के ज्ञान, रुचियों, आदतों, शक्तियों व आदर्शों का विकास करना है, जिसके द्वारा उसे अपना स्थान प्राप्त हो सके तथा वह इस स्थान का सदुपयोग कर स्वयं, समाज तथा राष्ट्र को उच्च एवं पवित्र उद्देश्यों की और ले जाए।''

भारतीयता अर्थात् वह विचार या भाव जिसमें भारत से जुड़ने का बोध होता हो या भारतीय शिक्षा से व्यक्ति को विद्या प्राप्त होती है और विद्या से ज्ञान प्राप्त होता है। विद्या प्राप्त करने वाला मनुष्य मुक्त हो जाता है और ज्ञान प्राप्त करने वाला अमृतत्व को प्राप्त करता है। यजुर्वेद में कहा गया है कि

सा विद्या या विमुक्तये विद्या या अमृतश्रुते''

अर्थात् विद्या वह है जिससे मुक्ति प्राप्त हो। विद्या से अमृत या मोक्ष प्राप्त होता है। परन्तु वर्तमान समय में वास्तविकता यह है कि शिक्षा से हमें जो ज्ञान प्राप्त होना चाहिए वह नहीं हो रहा है। केवल साक्षरता ही प्राप्त हो रही है। विद्या प्राप्त नहीं हो रही है। यह जो प्राप्त हो रहा है वह अ-विद्या है। भारत देश-विद्वानों का देश है। भारत में शिक्षा को प्राचीन काल से ही महत्व दिया गया है। यहाँ शिक्षा प्रदान करने वाला मात्र शिक्षक नहीं होता है वरन् ज्ञान देने वाले गुरु होते हैं। भारतीय गुरु अपने शिष्यों को व्यवहारिक एवं उसमें निहित नैसर्गिक गुणों के आधार पर ज्ञान एवं संस्कार देते रहे हैं। वर्तमान युग में जब शिक्षा का पाश्चात्यीकरण और बाजारीकरण हो गया है। जिसके परिणामस्वरूप मानवीय मूल्यों का विघटन हो रहा है।

भौतिकीकरण हो गया है। पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय प्रत्येक स्तर पर विकृतियाँ व्याप्त हो गई हैं। शिक्षा के बदलते स्वरूप ने भारतीय संस्कारों को नष्ट कर दिया है। अत: भारतीय शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन कर पुन: प्राचीन भारत के समान शिष्य को सुसंस्कृत अनुशासित कर मानवीय गणों से युक्त सफल व्यक्तित्व वाला व्यक्ति बनाने का प्रयास करना चाहिए।

''ब्रह्माग्नौ सत्यं, ज्ञानं अनंतं ब्रह्मं''

शिक्षा में भारतीयता तभी संभव है जब हम शिष्य को समन्वय, सहयोग, त्याग, कृतज्ञता, संयम तथा वृद्धोपसेवा भली भांति सिखा सकें। शिष्य में सदाचार तथा सद्व्यवहार जैसे आध्यात्मिक सद्गुणों को रोपित और विकसित कर सकें।

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्यया मृतमश्नुते

जो विद्या और अविद्या इन दोनों को ही एक साथ जानता है वह अविद्या से मृत्यु को पार करके विद्या से अमृतत्व प्राप्त कर लेता है।

इसके लिए हरबर्टीय व प्रो. व्लूम की शिक्षा पद्धति में भारतीयता के अनुसार सुधार कर भारतीय पंचपदी शिक्षण पद्धति के अनुसार शिक्षा प्रदान करनी होगी, जिसमें शिष्य को अधीति, बोध, अभ्यास, प्रयोग व प्रसार सिखाना होगा। भारतीय मूल्यों के आधार पर भारतीय संस्कारों के साथ शिक्षा प्रदान करना ही शिक्षा में भारतीयता कहलायेगा।

भारतीय मूल्य एवं संस्कृति

एक विश्लेषणात्मक रूपरेखा

■ डॉ. प्रिया
एसो. प्रो. महालक्ष्मी कॉलेज, गाजियाबाद

भारत महान धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता का देश है। भारत में कोई एक प्रमुख धर्म या संस्कृति नहीं हैं। भारत महान धार्मिक सहिष्णुता की भूमि है, जहां विभिन्न धर्मों के लोग एक साथ रह सकते हैं और पूजा कर सकते हैं। भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्य इस देश को इतना खास बनाने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। भारतीयों के लिए सबसे महत्वपूर्ण मूल्य उनके धर्म और क्षेत्र के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं। हालाँकि, कुछ मूल्य पूरे देश में समान हैं। इनमें बड़ों का सम्मान, पारिवारिक एकता और कर्म में विश्वास शामिल है। भारतीय भी शिक्षा को बहुत महत्व देते हैं। भारत में, लोगों के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त करना असामान्य बात नहीं है, भले ही वह धनी परिवारों से न हों। ऐसा इसलिए है क्योंकि शिक्षा को जीवन में किसी की स्थिति को बेहतर बनाने के एक तरीके के रूप में देखा जाता है। भारतीय कला और साहित्य को भी महत्व देते हैं। देश में संगीत, नृत्य और कला की समृद्ध परंपरा है। भारतीय साहित्य का भी बहुत सम्मान किया जाता है, और कई भारतीय रवीन्द्रनाथ टैगोर और प्रेमचंद जैसे महान लेखकों की कृतियों को पढ़ने का आनन्द लेते हैं। अंततः भारतीय अपने आतिथ्य सत्कार के लिए जाने जाते हैं। वे मेहमानों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करने और उनके पास जो कुछ भी है उसे सर्वोत्तम प्रदान करने में विश्वास करते हैं। यह मूल्य इस बात से स्पष्ट होता है कि भारतीय दुनिया भर के पर्यटकों का स्वागत करते हैं। भारतीय संस्कृति उन सामाजिक मानदंडों और प्रौद्योगिकियों की विरासत है जो 1947 तक भारतीय उपमहाद्वीप और 1947 के बाद भारतीय गणराज्य से संबंधित जातीय-भाषाई रूप से विविध भारत में उत्पन्न हुए या उससे जुड़े हुए हैं। यह शब्द भारत से परे उन देशों और संस्कृतियों पर भी लागू होता है जिनका इतिहास आप्रवासन, उपनिवेशीकरण या प्रभाव द्वारा भारत से दृढ़ता से जुड़ा हुआ है, विशेष रूप से दक्षिण एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया में। भारत की भाषाएँ, धर्म, नृत्य, संगीत, वास्तुकला, भोजन और रीति-रिवाज देश के विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न हैं।

भारतीय संस्कृति एक अध्ययन स्त्रोत- संस्कृति शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द 'कल्चर' से हुई है। जो 'कोलेरे' शब्द से निकलता है जिसका अर्थ है 'खेती करना'। अति विस्तार से संस्कृति की स्वीकृत परिभाषा (1974) द्वारा दी गई परिभाषा है जिसमें उन्होंने संस्कृति को गतिविधियों के एक व्यापक समूह के रुप में परिभाषित किया गया है जो सभी मनुष्यों में निहित है समाज इसलिए संस्कृति शब्द का अर्थ विचारों, विश्वासों, मूल्यों का एक समूह हो सकता है। किसी विशेष समाज का ज्ञान, व्यवहार, शिक्षा यूनेस्को का यूनिवर्सल नवंबर 2001 में अपनाई गई सांस्कृतिक विविधता पर घोषणा, संस्कृति को परिभाषित करती है विशिष्ट आध्यात्मिक, भौतिक, बौद्धिक और भावनात्मक विशेषताओं के समुच्चय के रूप में एक समाज या सामाजिक समूह, जिसमें कला और साहित्य के अलावा, जीवन भी शामिल है शैलियाँ, एक साथ रहने के तरीके, मूल्य प्रणालियाँ, परंपराएँ और मान्यताएँ। संस्कृति सामाजिक माध्यम से व्यक्ति को पूर्णता और परिष्कार की स्थिति की ओर ले जाता है परिवार, शैक्षणिक संस्थान और समुदाय जैसी एजेंसियां, सांस्कृतिक इस प्रकार उपलब्धियाँ जन्मजात नहीं होती बल्कि समय के साथ अर्जित की जाती हैं समाजीकरण और सीखना, इसलिए संस्कृतिक आध्यात्मिक, भौतिक, भाषा, साहित्य, कला के साथ-साथ समाज के भावनात्मक, बौद्धिक पहलु, संगीत, नृत्य, मूल्य, विश्वास, विचार, रीति-रिवाज, परंपराएँ आदि।

किसी भी राष्ट्र के विकास में संस्कृति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह साझा दृष्टिकोण, मूल्यों, लक्ष्यों और प्रथाओं के एक समूह का प्रतिनिधित्व करता है। संस्कृति और रचनात्मकता लगभग सभी आर्थिक, सामाजिक और अन्य गतिविधियों में प्रकट होती है। भारत जैसा विविधतापूर्वक देश अपनी संस्कृति की बहुलता का प्रतीक है।

भारत में गीत, संगीत, नृत्य, रंगमंच, लोक परंपराओं, प्रदर्शन कला, संस्कार और अनुष्ठान पेंटिंग और लेखन का दुनिया का सबसे बड़ा संग्रह है, जिसे मानवता की 'अमूर्त सांस्कृतिक विरासत' (आईसीएच) के रूप में जाना जाता है। इन तत्वों को संरक्षित करने के लिए संस्कृति मंत्रालय प्रदर्शन, दृश्य और साहित्यिक कला आदि में लगे व्यक्तियों, समूहों और सांस्कृतिक संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के उद्‌देश्य से कई योजनाएं और कार्यक्रम लागू करता है।

यह अनुभाग भारत की सांस्कृतिक विरासत, प्राचीन स्मारकों, साहित्यिक कलाओं, दृश्य कलाओं, योजनाओं, कार्यक्रमों, प्रदर्शन कलाओं, मेलों और त्योहारों और हस्तशिल्प से संबंधित व्यापक जानकारी प्रदान करता है। भारतीय कला और संस्कृति के प्रचार और प्रसार में शामिल विभिन्न संगठनों की विस्तृत जानकारी भी इस अनुभाग में उपलब्ध है। भारतीय संस्कृति को एक प्राचीन संस्कृति के रूप में वर्णित किया जा सकता है, जिसका अतीत आज भी जीवित है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे पाषाण युग के अवशेष खोजे गए हैं, जिससे पता चलता है कि किसी समय भारत में सांस्कृतिक प्रगति हुई थी। हमारे पूर्वजों ने अपने पूर्वजों से बहुत कुछ सीखा और जैसे जैसे समय बीतता गया, उन्होंने अपने अनुभवों से इसमें मूल्य जोड़ा। जैसे-जैसे समय बीतता है, हम उन विचारों और विचारों को जोड़ना जारी रखते हैं जो पहले से मौजूद हैं और

इसलिए संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रहती है।

संस्कृति शब्द से किसी भी विशिष्ट भूखंड की मानसिक क्षमता एवीएन प्रगति का एक दीर्घकालीन इतिहास प्रकट होता है व्यक्ति के मन शरीर तथा आत्मा से संबंधित शक्तियों संस्कृति से ही परिवर्तन तथा परिमार्जित होती है मनुष्य और आत्मा की तृप्ति के लिए मनुष्य जो विकास अर्थात् उन्नति करता है वह समग्र रूप से संस्कृति के अंतर्गत आता है। अतः यह स्पष्ट है कि मानव की प्रतिक सम्यक कृति संस्कृति में मानव की विशेषता है, इसमें मुख्य है, इसमें मुख्यता सभी कलाओं, ज्ञान विज्ञान, धर्म दर्शन तथा विभिन्न सामाजिक प्रथाओं को ग्रहण किया जा सकता है सभ्यता शब्द का व्युत्पत्ति लब्धि अर्थ है सभा में बैठने की योग्यता अतः सामाजिक का प्रधान अर्थ है सभ्य सामाजिक प्रतिबन्धों तथा कर्तव्यों पर बल देती हैं। शिष्टाचार गत नियमों के साथ-साथ सामाजिक उत्तरदायित्व एवं सामाजिक आवरण भी सभ्यता के द्वारा निर्देशित होते हैं। अतः सभ्यता के द्वारा मनुष्य की भौतिक सुख समृद्धि तथा तदंतर्गत व्यवहार का परिज्ञान होता है इस आधार पर जो राष्ट्र भौतिक दृष्टि से अधिक प्रगतिशील है वह स्वयं को दूसरे राष्ट्र की अपेक्षा अधिक सभ्य मानते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि संस्कृति एवं सभ्यता ये दो शब्द व्युत्पति एवं भाव दोनों ही दृष्टियों से नितान्त भिन्न हैं। भारत के प्राचीन वाङ्मय में भारतीय मनीषियों ने संस्कृति शब्द के लिए 'धर्म शब्द को प्रयोग किया था, और सभ्यता शब्द का अन्तभाव 'अर्थ शब्द में हो जाता था। किन्तु समय की गति में कर्म एवं अर्थ शब्दों का अभिप्राय अत्यन्त संकुचित होता गया। अतः आज के युग में अभिप्राय स्पष्ट करने के लिए संस्कृति एवं सभ्यता शब्दों का प्रयोग ही समीचीन है। किन्तु ये दोनों शब्द परस्पर भिन्न होते हुए भी एक दूसरे से बहुत अधिक संयुक्त भी हैं। सभ्यता से यदि व्यक्ति के शारीरिक एवं भौतिक विकास की सूचना मिलती है तो संस्कृति शब्द बौद्धिक एवं मानसिक प्रगति को परिलक्षित कराता है। सांस्कृतिक विचारधारा का बाह्य क्रियात्मक रूप ही सभ्यता बन जाता है। किन्तु संस्कृति सभ्यता की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक है। संस्कृति मानव को मानव बना देने वाले कतिपय विशिष्ट तत्व में अन्यतम है। वे सारी अभिव्यक्तिया ही संस्कृति हैं, जो मनुष्य को मानसिक, आत्मिक एवं बौद्धिक विशिष्ट्ता प्रदान करती हैं। किन्तु यह संस्कृति किसी एक व्यक्ति के कुछ समय के अथवा सम्पूर्ण जीवन के कार्स्यो से निर्मित नहीं होती। यह संस्कृति तो किसी भी देश के ज्ञात अथवा अज्ञात असहाय व्यक्तियों के दीर्घकालीन एव काट/साध्य प्रयत्नों के परिणाम से पल्लवित पुष्पित होती है। देश की परम्परागत सम्पूर्ण मानसिक निधि ही संस्कृति शब्द में समाहित हो जाती है। समय की निर्वाध गति में सभी अपनी-अपनी सामर्थ्य और योग्यता के अनुसार अपने देश के संस्कृति निर्माण में योगदान देते जाते हैं। श्री हरिदत वेदालंकार ने संस्कृति-निर्माण की इस प्रक्रिया के लिए अत्यन्त सुन्दर उपमान प्रस्तुत किया है। 'संस्कृति की तुलना ऑस्ट्रेलिया के निकट समुद्र में पाई जाने वाली मूंगे की भीमकाय चटटानों से की जा सकती है। मूंगे के असंख्य कीड़े अपने छोटे घर बनाकर समाप्त हो गए, फिर नए कीड़ो ने घर बनाए, उनका भी अन्त हो गया। इसके बाद उनकी अगली पीढ़ी ने भी यहीं किया, और यह क्रम हजारों वर्ष तक निरन्तर चलता रहा आज उन सब मूंगों के नन्हें नन्हे घरों ने परस्पर जुड़ते हुए विशाल चट्टानों का रूप धारण कर लिया है। संस्कृति का भी इसी प्रकार धीरे-धीरे निर्माण होता है और उसके निर्माण में हजारों वर्ष लगते हैं। मनुष्य विभिन्न स्थानों पर रहते हुए विशेष प्रकार के सामाजिक वातावरण, संस्थाओं, प्रथाओं, व्यवस्थाओं, धर्म, दर्शन, लिपि, भाषा तथा कलाओं का विकास करके अपनी विशिष्ट संस्कृति का निर्माण करते हैं। भारतीय संस्कृति की भी इसी प्रकार रचना हुई है। किसी भी देश की संस्कृति उनके विभिन्न युगों के आचारों एवं विचारों की परम्परा से उत्पन्न एक भूषणयुक्त परिष्कृत स्थिति की द्योतक होती है। विश्व में प्राचीन एवं अर्वाचीन अनेक संस्कृतियाँ है किन्तु उन सबमें भारतीय संस्कृति का स्थान अनुपम एवं सर्वोच्च है। भारतीय संस्कृति के अनुठे महत्व को पाश्चात्य अथवा पारस्तय सभी मनीषियों ने एक स्वर से स्वीकार किया है।

भारतवर्ष में भिन्न-भिन्न स्थानों पर प्रायः सभी प्रकार की जलवायु उपलब्ध हो जाती है ऐसी भौगोलिक विभित्ता वाले देश में जातियों, धर्मो भाषाओं, आचार और विचारों की भी बहुत भिन्नता दिखाई पड़ती है। किन्तु जाति, धर्म, भूगोल, भाषा आदि की ऐसी विषमताएँ पाई जाने पर भी सम्पूर्ण देश में एक ऐसी मौलिक अखण्ड एकता अन्तर्निहित है, जिसे कोई भी नकार नहीं पाता। सर हर्बर्ट रिजली ने भारत में व्याप्त इसी मौलिक एकता को परिलक्षित करके कहा भारत में दर्श को भौतिक क्षेत्र में और सामाजिक रूप में भाषा, आचार, धर्म में जो विविधता दिखाई देती है, उसकी तह में हिमालय से कन्याकुमारी तक एक आन्तरिक एकता है। सम्पूर्ण भारत की आन्तरिक एकता का सर्वाधिक पुष्ट प्रमाण स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास है। देश में स्वाधीनता से अनुप्राणित राष्ट्रीय चेतना का जागरण होते हुए कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा बंगाल से राजस्थान तक सम्पूर्ण भू मंडल में मानों एक ज्वाला धधक उठी थी। इतने विशाल देश में व्याप्त उस मौलिक एकता की कुछ कारक तत्व भी होने चाहिए इस दृष्टि से देखने पर हमारे सम्मुख अनेक पहलु स्वतः उद्घाटित हो जाते हैं।-

1. भौगोलिक एकता- प्रकृति ने भारत की रचना एक सुरक्षित वर्ग के समान की है। यह एक ऐसी सुदृढ़ प्राकृतिक इकाई है जिसके तीन और समुद्र और एक ओर अनुलंघनीय पर्वत सुरक्षित सीमाओं के रूप में अवस्थित है। इस प्रकार संपूर्ण भारत भूखंड का अपना अलग अस्तत्व है। भारत के आन्तरिक भौगोलिक विभाजन नगण्य है। यह भौगोलिक एकता केवल भौतिक धरातल मात्र पर स्थित नहीं है अपितु भारतीयों की बौद्धिक चेतना तथा हृदयगत भावों में भी पूर्णतया उपस्थित है। इसीलिए यहां के दर्शन ग्रन्थों अथवा काव्य ग्रंथों में भारत की यह भौगोलिक अखण्डता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। जिन प्रारंभिक सम्राटों अथवा बादशाहों ने इस भौगोलिक इकाई में राजनीतिक एकता स्थापित करने के प्रयत्न किए थे, उनकी प्रशंसा की गई।

2. राजनीतिक एकता– इस विशाल भारत भूखण्ड में विकेन्द्रीकरण की शक्तियों के निरंतर कार्यरत रहने के कारण राजनैतिक एकता का प्राय: अभाव रहा। तथापि प्राचीन भारत निवासी इस एकता से भली–भांति अभिज्ञ इतिहास में सदैव ही सारे देश को राजनैतिक एकता में बांधने के प्रयास होते ही रहे। प्रतापी नरेशों की सदा यही कामना रहीं कि पूरे देश का एकछत्र बन कर महाराजाधिराज कहला सकें। चाणक्य ने चक्रवर्ती सम्राट सष्तया उसी राजा को कहा जो हिमालय से समुद्र तक अपना राज्य विस्तृत कर सके। चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक महान तथा सम्द्र गुप्त ने भारत में राजनीतिक एकता स्थापित की थी। इन सम्राटों के समय देश के शासन का संचालन केन्द्र से ही होता था। वर्तमान युग में ब्रिटिश राज्य में यह राजनीतिक एकता पूर्णतया स्थापित थी।

3. सांस्कृतिक एकता– भारत की अखण्ड मौलिक एकता इसके सांस्कृतिक रूप में सर्वाधिक अभिव्यक्त हुई हैं। समय–समय पर भारत में बाह्य शक्तियों ने प्रवेश किया। उनके साथ उनकी भिन्न सभ्यता तथा संस्कृति भी यहां आई। किन्तु वे सभी शनै–शनै यहाँ की संस्कृति में घुल–मिल कर एकाकार हो गई। सम्पूर्ण देश का सामाजिक संस्थान एक सा ही है। विभिन्न सभी प्रदेशों में जातिभेद, वर्ण व्यवस्था, विभिन्न संस्कार तथा अनुष्ठान समान रूप से प्रचलित है। उनमें मात्र लोकाचार की भिन्नता है। सांस्कृतिक एकता की भावना भारत में राजनीतिक प्रभाव से भी ऊपर रहकर पल्लवित पुष्टि हुई। भारत देश और भारतीय संस्कृति शरीर और आत्मा के समान है। एक के बिना दूसरी व्यर्थ है। इसी सांस्कृतिक एकता के कारण सभी प्रांन्तों में भारतीयता समान रूप से पाई जाती है।

4. धार्मिक एकता– भारत में अनेक धर्म तथा सम्प्रदाय हैं, किन्तु इन सभी विभिन्न सम्प्रदायों और धर्मो में आंतरिक समानता है। धार्मिक दृष्टि से सभी भारतीय सम्प्रदायों के आध्यात्मिक तत्व एवं अमरत्व, एक परत्रह्म की सता, कर्म, पुनर्जन्म, मोक्ष, निर्वाण, ईश्वर भक्त आदि सभी भारतीय धर्मो में एक समान है। धार्मिक संस्कार, अनुष्ठान, व्रत, उपवास, उत्सव, पर्व तथा रीति सम्पूर्ण भारत में लगभग एक सी है।

5. भाषागत एकता: भारत के विभिन्न प्रदेशों में आपात भिन्न–भिन्न भाषाओं की व्यवहार होने परे भी भारत देश में भाषागत एकता भी विद्यमान है, क्योंकि सभी भारतीय भाषाओं की जन्मदात्री संस्कृत भाषा है। हिन्दी, बंगला, मराठी, गुजराती, तमिल, तेलगू सभी भारतीय भाषाओं पर संस्कृत की गहरी छाप स्पष्ट है। मुस्लिम युग में विदेशी भाषा का जन्म हुआ। अत: उर्दू भाषा संस्कृत से प्रभावित है। सारे देश में पढ़े जाने वाले अधिकांश पूज्य धर्म ग्रंथ संस्कृत भाषा में ही है। भारत देश की सम्पूर्ण विशालता में जन्म विवाह, मृत्यु आदि के समय पढ़े जाने वाले सारे मंत्र एक से ही है तथा सभी संस्कृत भाषा में हैं। इस प्रकार संस्कृत भाषा ने हिमालय से कन्याकुमारी तक भारत का सभी विभिन्न प्रदेश को एक प्रबल भाषागत एकता से जोड़ रखा है।

6. निवासियों की एकता: भारत में भिन्न–भिन्न रोमियों पर भिन्न–भिन्न जातियों में प्रवेश किया सभी शक, सीथियन, हण, तुर्क पठान मुगल आदि यहां के समाज में पूर्णतया घुल मिल गए और क्रमश: उनका पृथक अस्तित्व ही समाप्त हो गया। इसलिए भारत के विभिन्न प्रदेशों के निवासियों भिन्न भिन्न जातियों का सम्मिश्रण की शारीरिक रचनाएं प्राप्त होती हैं। आज भारत में मुसलमान और ईसाइयों की जो बहुसंख्या दृष्टिगोचर होती है वह भी मूलत: हिन्दू हैं जिन्होंने किसी कारणवश धर्म परिवर्तन कर लिया तथा इस दृष्टि से संपूर्ण भारत में निवासियों की एकता का पता हमें इस बात से ही चल जाता है कि भारत में विभिन्न जातियों की एक विलक्षण प्रकार की संस्कृति और सभ्यता का विकास हुआ। जिसकी संसार की किसी अन्य प्रकार की संस्कृति तथा सभ्यता में कोई समानता नहीं है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि भारत की विभिन्न विषमताओं में भी एकता है रक्त, वर्ण, भाषा, वेशभूषा, आचार–विचार, धर्म आदि के भेदभाव का प्रतिरोध करके यह एकता संपूर्ण भारत को दृढ़ बनाती है। भारत के क्षेत्रफल की विशालता भी इस मौलिक एकात्म में बंधक नहीं बन पाती।

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ– भारतीय संस्कृति अद्वितीय एवं विविध है। इसमें किसी भी इंसान के बौद्धिक और सामाजिक पहलू शामिल है। यह मनुष्य की सौंदर्यवादी प्रवृत्ति के साथ–साथ आध्यात्मिक आवेगों का भी ध्यान रखता है। भारत एक विशाल देश है जिसके भौतिक और सामाजिक परिवेश में बहुत विविधता है। यहां के लोग अलग–अलग बोलियां बोलते हैं और अलग–अलग धर्मों का पालन करते हैं। भारत एक अरब से अधिक लोगों का घर है, जो भाषाओं, भौगोलिक क्षेत्रों, धार्मिक परंपराओं और सामाजिक स्तरीकरण के बीच अविश्वसनीय सांस्कृतिक विविधता को समायोजित करता है। इस विशाल जनसांख्यिकीय विविधता की मान्यता में, निम्नलिखित विवरण का उद्देश्य प्रत्येक भारतीय व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करना नहीं है। हालाँकि, ऐसे सामान्य विषय और सिद्धांत हैं जो प्रमुख समाज के मूल्यों, दृष्टिकोण, विश्वासों और मानदंडों में योगदान करते हैं। सामान्यतया, भारतीयों में अपनी संस्कृति की विशिष्टता और विविधता पर गर्व की प्रबल भावना होती है। उदाहरण के लिए, देश का कृषि विस्तार और बुनियादी ढांचे, विज्ञान और इंजीनियरिंग में तकनीकी प्रगति गर्व के स्त्रोत हैं। इसके अलावा, भारत के संगीत, ललित कला, साहित्य और आध्यात्मिकता (विशेष रूप से योग के अभ्यास) के समृद्ध कलात्मक सांस्कृतिक निर्यात से बहुत गर्व पैदा होता है।

अब हम भारतीय जिन विशेषताओं का उल्लेख करने जा रहे हैं वे समग्रता विश्व की अन्य किसी भी संस्कृति में उपलब्ध नहीं होती। सर्वाधिक प्राचीन भारतीय संस्कृति की अन्यतम विशेषता यह है कि वह विश्व की उपलब्ध सभी संस्कृतियों में प्राचीनतम है मिस्र की संस्कृति संभवत है इसकी समकालीन थी किंतु आज यह है ना मात्र वशिष्ठ है। यूरोप रूस अमेरिका आदि की संस्कृतियों के जन्म से भी बहुत पूर्व भारतीय संस्कृति अपनी पूर्ण परिपुष्ट अवस्था में वर्तमान थी सिंधु घाटी की खुदाई और अवशेषों के साक्ष्य से यह तथ्य स्पष्ट हो चुका है वर्तमान

युग में चीन के अतिरिक्त अन्य कोई इसे तुलनीय नहीं है। भारतीय संस्कृति नैतिक गुणों के साथ-साथ दानशीलता, सादगी और मितव्ययिता की प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहित करती है। भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था एक प्रचलित संस्था है।

यह तब होता है जब विस्तारित परिवार के सदस्य माता-पिता, बच्चे, बच्चों के जीवन साथी और उनकी संतानें एक साथ रहते हैं। परिवार का सबसे बुजुर्ग पुरुष सदस्य आमतौर पर संयुक्त परिवार का मुखिया होता है और सभी प्रमुख निर्णय लेता है जैसे-

सुसंगत विवाह- भारतीय समाज में, व्यवस्थित शादियाँ लंबे समय से मानक रही हैं। आज भी, अधिकांश भारतीय शादियाँ उनके माता-पिता और परिवार के अन्य सम्मानित सदस्यों द्वारा आयोजित की जाती हैं। शादियाँ सबसे बड़ा पारिवारिक उत्सव है, जिसमें विस्तृत सजावट, समारोह, कपड़े, संगीत, गीत, भोजन इत्यादि शामिल हैं।

समारोह- भारत एक बहु-सांस्कृतिक, बहु-धार्मिक और बहु-जातीय सभ्यता है जो धार्मिक त्योहार मनाता है। स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस और गांधी जयंती भारत की तीन राष्ट्रीय छुट्टियां हैं। पूरे भारत में, हर कोई उत्साह और उमंग के साथ जश्न मनाता है। इसके अलावा, कई भारतीय राज्यों और क्षेत्रों की अपनी परंपराएं और त्यौहार हैं जिनका वे पालन करते हैं। नवरात्रि, दुर्गा पूजा, दिवाली, होली, जन्माष्टमी, रक्षाबंधन, महा शिवरात्रि, उगादि, गणेश चतुर्थी, रथ यात्रा, ओणम, वसंत पंचमी, दशहरा और अन्य धार्मिक छुट्टियां प्रसिद्ध हैं।

व्यंजन और भोजन- भारतीय व्यंजन भारत की तरह ही विविध हैं। भारतीय व्यंजन भोजन तैयार करने के दृष्टिकोण, खाना पकाने की तकनीक और पाक प्रस्तुति की विविध श्रृंखला का उपयोग करते हैं। भारतीय व्यंजन आम तौर पर जटिल होते हैं, ऐपेटाइजर से लेकर मुख्य पाठ्यक्रम भोजन स्नैक्स और मिठाइयों तक।

वेशभूषा- भारत में पारंपरिक पोशाक क्षेत्र के अनुसार भिन्न होती है। प्रत्येक राज्य की अपनी अनूठी पोशाक होती है जो स्थानीय संस्कृति, भूगोल और जलवायु से प्रेरित होती है। महिलाओं के लिए साड़ी और पुरुषों के लिए धोती या लुंगी जैसे ड्रेप्ड कपड़े प्रमुख पोशाक शैलियाँ हैं।

साहित्य और भाषाएँ – भारत में भाषाएँ और साहित्य क्षेत्र और राज्य के अनुसार भिन्न-भिन्न हैं। इसकी 22 आधिकारिक भाषाएँ हैं, जिनमें से 15 इंडो-यूरोपीय हैं। संस्कृत भारतीयों द्वारा उपयोग की जाने वाली सबसे पुरानी भाषा है, और कई प्राचीन साहित्य और ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखे गए हैं। हिंदी भारत में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। अन्य लोकप्रिय भाषाओं में तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, उड़िया और अन्य शामिल हैं। इसके अलावा, लोग जहां रहते हैं उसके आधार पर विभिन्न प्रकार की स्थानीय भाषाएं बोलते हैं।

भारतीय संस्कृति को एक प्राचीन संस्कृति के रूप में वर्णित किया जा सकता है, जिसका अतीत आज भी जीवित है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे पाषाण युग के अवशेष खोजे गए हैं, जिससे पता चलता है कि किसी समय भारत में सांस्कृतिक प्रगति हुई थी। हमारे पूर्वजों ने अपने पूर्वजों से बहुत कुछ सीखा और उन्होने अपने अनुभवों से इसमें मूल्य जोड़ा। जैसे-जैसे समय बीतता है, हम उन विचारों और विचारों को जोड़ना जारी रखते हैं जो पहले से मौजूद हैं, और इसलिए संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रहती है।

निष्कर्ष:- भारत संस्कृति और इतिहास से समृद्ध एक ऐसा स्थान है जो लोगों को दया, दान और सहिष्णुता सिखाता है। भारतीय संस्कृति स्थान के आधार पर भिन्न होती है क्योंकि यह एक द्विभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहु-जातीय सभ्यता है। भारतीय संस्कृति में विभिन्न नई प्रवृत्तियां एवं बाह्य प्रभावों को केवल सहन ही नहीं किया अपितु स्वदेशी अथवा विदेशी नवीन तत्वों को आत्मसात करके अपना अंग ही बना लिया विनाश एवं विध्वंस भारतीय संस्कृति का गुण नहीं था इसका विशिष्ट है तो ग्रहण तथा संरक्षण था इसी कारण इस भारतीय संस्कृति में अत्यंत प्राचीन काल से आज तक अपने संपर्क में आने वाली द्रविड़ यूनानी सिंधी मुगल इसाई सभी संस्कृतियों के विभिन्न सुंदर अंश को ग्रहण कर लिया। भारतीय संस्कृति की कहानी एकता और समाधानों का समन्वय है तथा प्राचीन परंपराओं और नवीन मानव के पूर्ण सहयोग की उन्नति की कहानी है। लोगों की मानसिकता और व्यवहार पैटर्न को संस्कृत कहा जाता है विश्वास मूल्य आचरण के मानक और सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संगठन के पैटर्न सभी इसका हिस्सा है। संस्कृत में वह कपड़े शामिल हैं जो हम पहनते हैं जो भोजन हम करते हैं जो भाषा हम बोलते हैं और जिन भगवान की पूजा हम करते हैं इन्हें औपचारिक और अनौपचारिक दोनों माध्यमों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तानांतरित किया जाता है। किसी राष्ट्र का कर उसकी संस्कृति है हम संस्कृति के माध्यम से इसके अतीत और वर्तमान की समृद्धि का अनुभव कर सकते हैं यह हमारे धार्मिक संस्कारों एथलेटिक्स कला और साहित्य में पाया जा सकता है।

भारतवर्ष में भिन्न-भिन्न स्थानों पर प्रायः सभी प्रकार की जलवायु उपलब्ध हो जाती है ऐसी भौगोलिक विभित्ता वाले देश में जातियों, धर्मो भाषाओं, आचार और विचारों की भी बहुत भिन्नता दिखाई पड़ती है। किन्तु जाति, धर्म, भूगोल, भाषा आदि की ऐसी विषमताएँ पाई जाने पर भी सम्पूर्ण देश में एक ऐसी मौलिक अखण्ड एकता अन्तनिर्हित है, जिसे कोई भी नकार नही पाता।

भारत में मूल्य शिक्षा प्रणाली

■ डॉ. विजेन्द्र प्रताप सिंह
अलीगढ़

मूल्य उन बीजों की तरह हैं जो अंकुरित होते हैं, पौधे बनते हैं, वृक्ष बनते हैं और अपनी शाखाएँ चारों ओर फैलाते हैं। सही सोचने में सक्षम होना, सही तरह की भावनाओं को महसूस करना और वांछनीय तरीके से कार्य करना व्यक्तित्व विकास के प्रमुख चरण हैं। मूल्य प्रणाली का निर्माण व्यक्ति से शुरू होता है, परिवार और समुदाय तक जाता है, प्रणालियों, संरचनाओं को पुनर्निर्देशित करता है और संस्थाएँ, पूरे देश में फैल रही हैं और अंततः पूरे ग्रह को गले लगा रही हैं। समावेशिता की संस्कृति हमारे समाज, राष्ट्र और शिक्षा को सभी बच्चों का अधिकार बनाने के संदर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है।

'क्या है' के साथ 'क्या होना चाहिए' और 'क्या किया जाना चाहिए', मूल्य शिक्षा की प्रमुख अवधारणाएं हैं। मूल्य शिक्षा मूल रूप से भावनाओं और भावनाओं को शिक्षित करने का मामला है। यह 'हृदय का प्रशिक्षण' है और इसमें सही भावनाओं और भावनाओं को विकसित करना शामिल है। मूल्य शिक्षा केवल कुछ गुणों और आदतों को शामिल करते हुए उचित व्यवहार और आदतों को विकसित करने का मामला है। मूल्य अंत के बारे में अच्छे विचारों की विस्तृत श्रृंखला का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्हें लोगों को अपने जीवन में अपनाना चाहिए। किसी समाज के मूल्य सदस्यों को लक्ष्य प्रदान करते हैं या लक्ष्य प्रदान करते हैं। मूल्य लोगों के व्यवहार के लिए एक सामान्य दिशा-निर्देश प्रदान करते हैं, उदाहरण के लिए मानवीय गरिमा, मौलिक अधिकार, निजी संपत्ति, देशभक्ति, पत्नी या पति के प्रति निष्ठा, धार्मिकता, त्याग, सहायता, सहयोग, व्यक्तिगत उद्यम, स्वतंत्र वैवाहिक चयन, व्यक्तित्व, सामाजिक समानता, गोपनीयता, लोकतंत्र आदि कई तरीकों से हमारे जीवन का मार्गदर्शन करते हैं।

'क्या है' के साथ 'क्या होना चाहिए' और 'क्या किया जाना चाहिए', मूल्य शिक्षा की प्रमुख अवधारणाएं हैं। मूल्य शिक्षा मूल रूप से भावनाओं और भावनाओं को शिक्षित करने का मामला है। यह 'हृदय का प्रशिक्षण' है और इसमें सही भावनाओं और भावनाओं को विकसित करना शामिल है।

मूल्य शिक्षा के आयामः

मूल्य शिक्षा को निर्देशित करने के लिए बहुत सारे आयाम हैं, उनमें से कुछ पर नीचे चर्चा की जा रही है.

1. सामाजिक आयाम

भारत एक समाजवादी देश है इसलिए सामाजिक मूल्य इस देश की संस्कृति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। सामाजिक मूल्य, मानदंड और संस्थाएं किसी दिए गए समाज में सामाजिक प्रक्रियाओं के संचालन के तरीके की व्याख्या करती हैं। वे पैटर्नयुक्त अंतःक्रिया के सामाजिक स्रोत हैं। मूल्य सामाजिक व्यवस्था की स्थिरता के लिए जिम्मेदार होते हैं। वे आचरण के लिए सामान्य दिशा-निर्देश प्रदान करते हैं। मूल्य वे मानदंड हैं जिनका उपयोग लोग अपने दैनिक जीवन का आकलन करने, अपनी प्राथमिकताओं को व्यवस्थित करने, अपने सुख और दुख को मापने, कार्रवाई के वैकल्पिक तरीकों के बीच चयन करने में करते हैं।

2. शैक्षिक आयाम

चूँकि, भारत एक लोकतांत्रिक देश है इसलिए इस देश के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा में भाग लेने का अधिकार है। ठोस तर्क के आधार पर नैतिक निर्णय लेने की क्षमता मूल्य शिक्षा का एक बहुत ही महत्वपूर्ण उद्देश्य है और इसे जानबूझकर विकसित किया जाना चाहिए। शिक्षा मूल्यों के विकास का प्रमुख बीज है। यह व्यक्ति को किसी भी बात को तर्क की कसौटी पर कसने में मदद करता है, इसके अलावा शिक्षा व्यक्ति को अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने के लिए मजबूत कर सकती है। शिक्षा व्यक्ति को समाज में उचित ढंग से कार्य करने के लिए भी मार्गदर्शन करती है जिसकी उसे आवश्यकता होती है।

3. स्थानिक आयाम

भारत में मूल्य शिक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण पहलू बच्चों में राष्ट्रीय पहचान और देशभक्ति की भावना के विकास से संबंधित है। किसी राष्ट्र को एकीकृत और मजबूत करने के उद्देश्य से यह आवश्यक है, खासकर यदि उसने हाल ही में अपनी स्वतंत्रता हासिल की हो या यदि उसकी सुरक्षा को किसी रूप में खतरा हो। लेकिन राष्ट्रीय पहचान के प्रति यह चिंता कभी-कभी राष्ट्रीय अंधराष्ट्रवाद का रूप ले सकती है और किसी देश के नागरिकों में यह भावना विकसित हो सकती है कि उनका देश हमेशा सही है। इसलिए यह तर्क दिया गया है कि बच्चों को इस तथ्य से अवगत कराना मूल्य शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य होना चाहिए कि पूरी दुनिया अब अन्योन्याश्रित देशों का एक समुदाय है कि दुनिया के लोगों का अस्तित्व और कल्याण आपसी सहयोग पर निर्भर करता है।

बच्चों को विश्व-दृष्टिकोण विकसित करने और विभिन्न संस्कृतियों द्वारा विश्व की प्रगति में किए गए योगदान की सराहना करने में सक्षम बनाया जाना चाहिए और उन्हें यह एहसास कराया जाना चाहिए कि विभिन्न देशों के एक-दूसरे के साथ संघर्ष में आने की स्थिति में, दुनिया रहने के लिए एक बहुत ही असुरक्षित जगह होगी। इन्ही कारणों से भारत सरकार ने स्कूली स्तर पर मूल्यपरक शिक्षा देने का निर्णय लिया था। परिणामस्वरूप हमारा देश असामाजिक गतिविधियों से सुरक्षित रह सकता है। अध्यात्म व्यक्ति को अपने मूल्यों का निर्माण करने और उन्हें व्यावहारिक जगत में लागू करने में बहुत मदद करता है।

संज्ञानात्मक, रचनात्मक और प्रभावशाली आयाम

वास्तविक अर्थों में शिक्षित होने का अर्थ सही सोचने, सही प्रकार की भावनाओं को महसूस करने और वांछनीय तरीके से कार्य करने में सक्षम होना है। इसलिए मूल्य शिक्षा के उद्देश्यों का संबंध व्यक्तित्व विकास के सभी तीन चरणों से होना चाहिए क्योंकि वे सही प्रकार के व्यवहार से संबंधित हैं। चूंकि ये चरण आपस में जुड़े हुए हैं, इसलिए यह सोचना गलत होगा कि मूल्य शिक्षा का संबंध विशेष रूप से केवल ज्ञान, भावना या क्रिया से है। यह कहना कि 'नैतिकता पकड़ी गई है', इसमें शामिल संज्ञानात्मक क्षमताओं और प्रशिक्षण के साथ अन्याय करना है। इसी प्रकार मूल्य शिक्षा को छात्रों को कुछ करने और न करने योग्य बातों का पालन कराने के साथ जोड़ना भावनाओं और नैतिक तर्क की शिक्षा की अनदेखी करने जैसा होगा।

मूल्य शिक्षा प्रणालीः सामग्री और शिक्षण संसाधनः

हाल ही में एनसीईआरटी ने बताया है कि भारत के संविधान में निहित मूल्य समानता और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों और एक-दूसरे के सांस्कृतिक मूल्यों की सराहना, सभी व्यक्तियों की गरिमा की ओर इशारा करते हैं। समानता, भाईचारा और न्याय जैसे मूल्य समावेशिता को बढ़ावा दे सकते हैं जहां समाज के सभी सदस्य अपने रंग, संस्कृति, आर्थिक या सामाजिक पृष्ठभूमि, जाति, धर्म, लिंग या समुदाय की परवाह किए बिना शामिल महसूस करते हैं। समावेशिता की संस्कृति हमारे समाज, राष्ट्र और शिक्षा को सभी बच्चों का अधिकार बनाने के संदर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है। इस प्रकार शिक्षा का उद्देश्य अब केवल विशिष्ट संस्कृति और उसकी परंपराओं को सीखने तक ही सीमित नहीं रह गया है, बल्कि बहु-संस्कृति को सीखना और उसकी सराहना करना भी है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ), 2005 सहयोग, मानवाधिकारों के प्रति सम्मान, सहिष्णुता, न्याय, जिम्मेदार नागरिकता, विविधता, लोकतंत्र के प्रति श्रद्धा और शांतिपूर्ण संघर्ष समाधान जैसे मूल्यों की दृढ़ता से वकालत करती है। व्यक्तिगत इच्छाओं की संतुष्टि पर परिणामी जोर व्यक्तिगत अधिकारों के लिए आंदोलन के समानांतर था। महिलाओं के लिए, बच्चों के लिएए उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों के लिए, इत्यादि। इन क्षेत्रों में अधिक समानता के संदर्भ में कई लाभ हुए हैं, लेकिन इसके साथ ही युवाओं और युवा वयस्कों में विवाह टूटने और आत्महत्या की दर में चिंताजनक गिरावट भी आई है। पुराने मूल्यों की धारण शक्ति कम हो गई है। लेकिन अनुदारता मोहभंग और नई असहिष्णुता को जन्म दे रही है। आम भलाई की कीमत पर निजी प्राथमिकता को आगे बढ़ाने के लिए मुकदमेबाजी के उपयोग में भी भारी वृद्धि हुई है।

मूल्याधारित शिक्षा की आवश्यकता

शिक्षा को मूल्यों की ओर पुनर्उन्मुख करने का सबसे महत्वपूर्ण कारण यह तथ्य है कि शिक्षा का वर्तमान मॉडल छात्रों के असंतुलित विकास में योगदान देता है। शिक्षा का यह मॉडल भावनात्मक क्षेत्र की पूर्ण उपेक्षा के बजाय संज्ञानात्मक पर विशेष ध्यान केंद्रित करता है और सिर और हृदय के बीच अलगाव प्रस्तुत करता है। छात्रों को अत्यधिक प्रतिस्पर्धा की भावना से पोषित किया जाता है और शुरू से ही उन्हें आक्रामक प्रतिस्पर्धा और संदर्भों से अलग तथ्यों से जुड़ने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। उत्कृष्टता के व्यक्तिवादी विचार को भावनात्मक और संबंधपरक कौशल की कीमत पर बढ़ावा दिया जाता है।

- मूल्यों के पतन पर चिंता।
- बच्चों और युवाओं पर परिवर्तन का प्रभाव।
- रंग-कार्यात्मक परिवार बढ़ते अपराध और हिंसा, मीडिया और सूचना अधिभार का प्रभाव।
- छात्राएँ अभिभावकों, शिक्षकों के बीच प्रतिस्पर्धी मानसिकता।

मूल्याधारित शिक्षा का उद्देश्य

व्यापक दृष्टिकोण से, मूल्य शिक्षा का उद्देश्य इस मूलभूत प्रश्न से जुड़ा हुआ है कि शिक्षा स्वयं किसके लिए है। व्यक्तिगत दृष्टिकोण से, इसका उद्देश्य छात्रों को जीवन और कार्य में सफलता के लिए व्यक्तिगत पूर्ति प्राप्त करने में सक्षम बनाना है। सामाजिक दृष्टिकोण से, शिक्षा का उद्देश्य युवाओं को समाज/ राष्ट्र और दुनिया भर में योगदान करने के लिए तैयार करना है। हालाँकि, किसी भी मामले में, शिक्षा को एक परिणाम के रूप में नहीं बल्कि एक अनुभव के रूप में देखा जाना चाहिए, जो छात्रों को सुरक्षित, स्वस्थ और फलदायी जीवन जीने और समाज में सकारात्मक योगदान देने वाले जिम्मेदार नागरिक बनने में सक्षम बनाएगा।

- मस्तिष्क एवं हृदय को संबोधित करते हुए बच्चे का सर्वांगीण विकास।
- मूल्यों पर दोबारा विचार करना और नष्ट हो रहे मूल्यों के प्रति सभी को जागरूक करना।
- बच्चे और समुदाय के बीच संतुलन बनाना।
- एक शिक्षा जो हृदय, सिर और हाथ को जोड़ती है।
- परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व के बीच परस्पर निर्भरता की समझ पैदा करना।
- एक सक्रिय सामाजिक विवेक लाना।
- शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार।
- आत्म-मूल्यों के साथ सद्भाव और शांति।

स्पष्ट मूल्यों की शिक्षा और अंतर्निहित मूल्यों की शिक्षा के बीच

एक और अंतर है, यथा–

1. स्पष्ट मूल्यों वाली शिक्षा उन विभिन्न शिक्षाशास्त्रों, विधियों या कार्यक्रमों से जुड़ी है जिनका उपयोग शिक्षक या शिक्षक मूल्य संबंधी प्रश्नों के मामले में छात्रों के लिए सीखने के अनुभव हेतु किया जाता है।

2. निहित मूल्य शिक्षा औपचारिक शिक्षा के माध्यम से आत्म–खोजपूर्ण, व्यवस्थित और वैज्ञानिक तरीके से 'स्वयं और जीवन के ज्ञान के बारे में सीखना' है।

मूल्याधारित शिक्षा प्राप्ति के उपाय

मूल्याधारित शिक्षा को पाठ्यपुस्तक सामग्री द्वारा सीमित नहीं किया जा सकता है, बल्कि इसे सीखने के संसाधनों को खोजने में शिक्षकों की पहल और प्रेरणा पर छोड़ दिया जाना चाहिए। शिक्षा आवश्यक रूप से शिक्षार्थी को जीवन जीने के लिए सक्षम बनाने के लिए मूल्यों को विकसित करने की एक प्रक्रिया है। एक ऐसा जीवन जो समाज के पोषित मूल्यों और आदर्शों के अनुसार व्यक्ति को संतुष्ट करता है। मूल्य शिक्षा ने हमें अपनी अवधारणा को धार्मिक और नैतिक शिक्षा से शांति के लिए शिक्षा में स्थानांतरित करने में मदद की, जो शिक्षा के बड़े संदर्भ में बदलती भावना और संवेदनशीलता के समानांतर है। हालाँकि, मूल्य शिक्षा कुछ तरीकों से प्रदान की जा सकती है। वे इस प्रकार हैं–

1. व्यक्ति मूल्य वास्तुकला का पहला निर्माण खंड है एकीकरण के लिए बच्चे की सुरक्षा, गरिमा, पहचान और कल्याण की आवश्यकता को पूरा करना होगा। किसी समाज में शांति बनी रहे, इसके लिए उसके व्यक्तिगत सदस्यों को हिंसा, अन्याय, अपमान और भेदभाव से बचाया जाना चाहिए। बच्चा केवल एक भौतिक इकाई नहीं बल्कि एक समग्र प्राणी है। उसके व्यक्तित्व के सभी पहलुओं के सामंजस्यपूर्ण विकास को सुनिश्चित करने के लिए उसकी शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक आवश्यकता पर ध्यान देना होगा।

2. मूल्यों को विकसित करने में दूसरा कारक परिवार है जो एक बच्चे में मूल्यों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। संघर्षग्रस्त घर में पलने वाले बच्चे के शांति उन्मुख होने की संभावना नहीं है। एक स्थिर परिवार में स्वस्थ रिश्ते अच्छे मूल्यों का निर्माण करते हैं। घर मूल्यों को विकसित करने की नर्सरी है।

3. कोई व्यक्ति जिस समुदाय से संबंध रखता है वह तीसरा ब्लॉक है। व्यक्ति और समुदाय के बीच संबंध घनिष्ठ है। यह किसी व्यक्ति की पहचान के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, और यह निर्धारित करता है कि बच्चे को किस स्तर की सुरक्षा प्राप्त है। मूल्यों की शिक्षा समुदायों की असुरक्षा को कम करने और अपनेपन की भावना को बढ़ावा देने में बहुत मदद करती है।

4. समाज मूल्यों का चौथा निर्माण खंड है। समाज एक विस्तृत परिवार है जिसकी विशेषता व्यक्तियों की विविधता, परिवारों और समुदायों के हित हैं। प्रत्येक समाज में कुछ साझा विशेषताएं भी होती हैं जिनका उसके सदस्य समर्थन करते हैं, अपनाते हैं और नियोजित करते हैं, जो उसके द्वारा लिए गए सामूहिक निर्णयों को प्रभावित करते हैं। एक व्यक्ति और उस समाज के बीच एक पारस्परिक संबंध होता है जिसका वह हिस्सा है। किसी समाज में बड़े होने की प्रक्रिया के दौरान सामाजिक रीति–रिवाज/परंपराओं को आत्मसात कर लिया जाता है। समाज बनाने वाले व्यक्तियों, परिवारों और समुदायों का कर्तव्य है कि वे मूल्यों को कमजोर करने वाले कार्यों, वकालत, तरीकों और लक्ष्यों से बचें।

5. राष्ट्र मूल्यों का सर्वोपरि निर्माण खंड है। जो देश अपने नागरिकों को नफरत और नकारात्मकता से ग्रस्त होने देता है, वह अपनी ऊर्जा बर्बाद होने देता है। मूल्य प्रगति और कल्याण के लिए बुनियादी हैं। शांति से रहने वाले राष्ट्र वैश्विक मूल्यों के निर्माण खंडों का निर्माण करते हैं।

6. इसके अलावा वैल्यू एजुकेशन हासिल करने के कई अन्य रास्ते भी हैं–

1. सकारात्मक सोचें एक आत्म–सशक्त अवधारणा है जो छात्र को एक सकारात्मक आत्म–छवि रखने की अनुमति देती है और उसे और उसके जीवन को सभी रूपों में महत्व देती है।

3. दयालु बनें और प्रेम, दया और मित्रता को विकसित करने के लिए कोई नुकसान न पहुँचाएं, जो समाज में असहिष्णुता और हिंसा का जवाब देने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

4. आंतरिक शांति की खोज व्यक्ति को चेतना के गहरे स्तर पर स्वयं को समझने में सक्षम बनाती है। यह व्यक्ति की आध्यात्मिक आवश्यकताओं को भी संबोधित करता है।

5. एक साथ रहना सीखना साझा करने, सहयोग, आपसी मदद, विश्वास निर्माण और टीम वर्क के गुणों को बढ़ावा देना है। दूसरों के साथ समूहों में सामंजस्यपूर्ण ढंग से काम करने से प्रतिस्पर्धा कम होती है और एक टीम के रूप में काम करने की खुशी पर जोर मिलता है।

6. मानवीय गरिमा का सम्मान करना मानवाधिकार और न्याय की अवधारणाओं पर आधारित है। इसका उद्देश्य ऐसी चेतना विकसित करना है जो अपने साथ–साथ दूसरों के अधिकारों को भी पहचाने।

7. अपना सच्चा आत्म बनें, समय प्रबंधन, ईमानदारी और चरित्र की मजबूती जैसे व्यवहार कौशल का निर्माण करें जो संघर्षों को सुलझाने और प्रभावी सामाजिक संपर्क के लिए आवश्यक हैं।

8. आलोचनात्मक सोच विकसित करने में तर्क और तर्क के साथ सोचने की क्षमता शामिल होती है। इसमें निर्णय लेना भी शामिल है और यह लोकतांत्रिक संस्थाओं का एक महत्वपूर्ण घटक है।

9. संघर्ष को अहिंसक तरीके से हल करना मूल्य शिक्षा का एक बुनियादी घटक है। इसमें संघर्ष समाधान, सक्रिय रूप से सुनना, मध्यस्थता, रचनात्मक समाधान और वैकल्पिक समाधान खोजने के लिए आवश्यक कौशल शामिल हैं।

10. समुदाय में शांति स्थापित करने से युवा शिक्षार्थियों को सामाजिक वास्तविकताओं से अवगत होने और लोगों की समस्याओं के साथ–साथ अपनी जिम्मेदारियों और कर्तव्यों को समझने का अवसर मिलता है।

11. ग्रह की देखभाल बच्चों और वयस्कों के लिए एक वैश्विक शैक्षिक

आवश्यकता है। ग्रह के स्वास्थ्य का मानव जाति के भाग्य पर सीधा और तत्काल प्रभाव पड़ता है।

12. सामाजिक और नैतिक मूल्य, दिन-प्रतिदिन की स्थितियों के उदाहरण, महापुरुषों की बातों, घटनाओं और समस्याओं के अंश जो विद्यार्थियों में मूल्य निर्णय विकसित करते हैं, नाटक, संवाद सरल कविताएँ (काव्यवचन) और विश्व धर्मों के धर्मग्रंथों का निर्माण किया जा सकता है। सामग्री का प्रमुख भाग महापुरुषों की जीवनियों के साथ।

13. व्यक्तिगत, पड़ोसी और सामुदायिक मूल्यों को कक्षा में पढ़ाया जाना चाहि, और छात्रों के साथ गहन चर्चा की जानी चाहिए।

14.मूल्य शिक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के शिक्षण संसाधनों का उपयोग किया जा सकता है, जिनमें महापुरुषों की जीवनियाँ, धर्मग्रंथ, भजन और कहावतें से लेकर वर्तमान सामाजिक और राजनीतिक घटनाएं, धर्म और पौराणिक कथाओं की कहानियां, नैतिक दुविधाएं और स्कूल की घटनाएं शामिल हैं।

15. छात्रों में आत्म-अनुशासन विकसित करने वाली योग और अन्य गतिविधियाँ शामिल की जा सकती हैं।

16. स्कूल शिविरों की सफाई, मलिन बस्तियों, सेवा परिसरों का दौरा, अस्पतालों का दौरा, विभिन्न धर्मो के पूजा स्थलों का दौरा जैसी समूह गतिविधियाँ मूल्य शिक्षा की सामग्री का हिस्सा होनी चाहिए। आध्यात्मिक नेताओं के जीवन पर प्रवचन आत्म-बलिदान, सामूहिक खुशी, सत्य के प्रति प्रेम और जीवन के सर्वोच्च मूल्यों जैसे मूल्यों को सामने ला सकते हैं जिनके लिए महान नेता रहते थे।

17. छात्रों को आत्म-नियंत्रण, समय की पाबंदी, अन्य धर्मो के प्रति सम्मान, सहयोग और मौन (आंतरिक शांति) के मूल्य को साझा करने और देखभाल करने में सक्षम बनाने के लिए 'पर्सनैलिटी डेवलपमेंट रिट्रीट' आयोजित किया जा सकता है।

18. प्रार्थना, ध्यान और 'श्रमदान' मूल्य शिक्षा की सामग्री का हिस्सा बन सकते हैं। वे छात्रों को आंतरिक संतुलन और दृष्टिकोण में बदलाव लाने में मदद कर सकते हैं, और 'श्रम की गरिमा' की गुणवत्ता विकसित कर सकते हैं।

19. 'जयंती' यानी महान राष्ट्रीय और आध्यात्मिक नेताओं के जन्मदिन मनाने और चरित्र विकास के लिए बालक संघ और तरुण संघ जैसे युवा संगठनों का आयोजन करने से छात्रों में मूल्यों के विकास में काफी मदद मिल सकती है।

21वीं सदी में मूल्य संकट और मूल्य शिक्षा की आवश्यकता

इस प्रकार की शिक्षा बच्चों को मशीन बना देती है। ऐसा दृष्टिकोण नैतिक विकास सहित व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास की शिक्षा के मूल उद्देश्य को विफल कर देता है जो नैतिक संघर्षो के मामले में जिम्मेदार निर्णय लेने के लिए मौलिक है। द रिपब्लिक में प्लेटो ने लिखा, एक शिक्षित व्यक्ति की पहचान समाज की समस्याओं को हल करने के लिए अपने ज्ञान और कौशल का उपयोग करने की इच्छा है। शिक्षा को बच्चों में सक्रिय सामाजिक विवेक का संचार करना चाहिए। समाज व्यक्तियों के लिए सशक्त संदर्भ है। समाज में प्रचलित रिश्तों और जिम्मेदारियों के जाल से बाहर कोई भी व्यक्ति पूरी तरह से मानव नहीं बन सकता है या गरिमा और पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता है। सच्ची शिक्षा व्यक्तियों को समाज में रचनात्मक, जिम्मेदारीपूर्वक और शांतिपूर्वक रहने और बेहतर समाज के लिए परिवर्तन का एजेंट बनने के लिए तैयार करती है।

शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हमेशा से ही शिक्षा की प्रमुख चिंता रही है। हाल के दिनों में, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को अधिक व्यावहारिक शब्दों में परिभाषित किया गया है। यह रोजगार योग्यता का पर्याय बन गया है, काम के लिए तैयारी, शिक्षा के विषय यानी व्यक्तिगत छात्र और एक इंसान के रूप में उसके पूर्ण विकास पर कम ध्यान दिया जाता है। शिक्षा की गुणवत्ता को खंडित रूप में नहीं बल्कि अधिक समग्र और विस्तारित तरीके से माना जाना चाहिए, स्कूली शिक्षा के वर्षों की संख्या के संदर्भ में नहीं बल्कि व्यक्ति के विकास के गुणवत्ता पहलू के संदर्भ में संपूर्ण व्यक्तियों का निर्माण और मनुष्य का पूर्ण विकास और चरित्र निर्माण।

शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार ही मूल्य शिक्षा का एक मात्र कारण नहीं है। छात्रों के बीच मूल्यों को विकसित करने के एक शक्तिशाली साधन के रूप में शिक्षा में रुचि का वर्तमान पुनरुत्थान हमारे देश में मूल्यों के तेजी से पतन के कारण भी है। काफी प्रगति के बावजूद, हमारा समाज संघर्षो, भ्रष्टाचार और हिंसा से हिल गया है। हमारी मूल्य व्यवस्था में विकृति आ गई है। हम जहां भी देखते हैं, हमें झूठ और भ्रष्टाचार नजर आता है। हममें से अधिकांश लोग अपने परिवार में रुचि रखते हैं और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने में रुचि नहीं रखते हैं। यद्यपि मूल्यों का क्षरण मानव अस्तित्व के पूरे इतिहास में मौजूद रहा है और सभी संस्कृतियों द्वारा साझा किया गया है, लेकिन मूल्यों का वर्तमान पतन हमारे देश में बड़ी चिंता का विषय बन गया है। मूल्य क्षरण के विशिष्ट उदाहरण हैं: लोग लालची और स्वार्थी हो गए हैं।

समाज में ईमानदारी खत्म होने लगी है। हिंसा दिन का क्रम बन गई है। भ्रष्टाचार, दुर्व्यवहार और सत्ता अधिक आम हो गए हैं। मूल्यों में गिरावट की समस्या वैश्वीकरण, भौतिकवाद, उपभोक्तावाद, शिक्षा के व्यावसायीकरण, जलवायु परिवर्तन के कारण मानवता के लिए खतरे, पर्यावरणीय गिरावट, हिंसा और आतंकवाद जैसी प्रमुख सामाजिक ताकतों के संयोजन से उत्पन्न होने वाली बहुआयामी है। इनसे असुरक्षाएं, व्यक्तिवादी जीवन शैली और इच्छाओं में तेजी, विज्ञान और प्रौद्योगिकी का दुरुपयोग, निराशावाद, अलगाव की भावना और अन्य नकारात्मक परिणाम सामने आए हैं।

स्कूल दुनिया के सूक्ष्म जगत हैं। दुनिया की अव्यवस्था कई तरह से स्कूलों में सामने आती है। हमारे देश में बच्चों और युवाओं के बड़े होने की स्थिति बदल गई है और आगे भी तेजी से बदल रही है। हमें यह बताने के लिए वैज्ञानिक सर्वेक्षणों की आवश्यकता नहीं है कि हमारी आंखें और कान क्या बता रहे हैं। बेकार परिवारों की संख्या बढ़ी है। बच्चे स्कूल और

बाहर अपराध, हिंसा में लिप्त रहते हैं। मास मीडिया ने हमारे बच्चों को मूर्खतापूर्ण तरीके से जकड़ लिया है, और उन पर सूचनाओं, विचारों और पूर्वाग्रहों से इस तरह हमला करता है कि युवा दिमाग शायद ही समझ सकें या निर्णय ले सकें। जबकि बच्चों में प्रश्न पूछने की प्रवृत्ति और आलोचनात्मक सोच को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, हम पाते हैं कि कई युवा और छात्र शिक्षकों के साथ अनादर का व्यवहार करते हैं और अहंकार के कारण प्रश्न करते हैं और इसे अधिकार से प्रश्न करने के एक तरीके के रूप में देखते हैं। जल्दबाजी करने वाले समाज में अक्सर समुदाय और भाईचारे की भावना का अभाव होता है। सहकर्मी मूल्यों के विकास पर शक्तिशाली प्रभाव डालते हैं। नशीली दवाओं का दुरुपयोग, गैर-जिम्मेदाराना यौन व्यवहार, बर्बरता, व्यावसायीकरण, चोरी, धोखाधड़ी, आदर्श के रूप में नायकों और मशहूर हस्तियों के बीच भ्रम पहले से कहीं अधिक बार देखा गया है। सामान्य अर्थ में, माता-पिता, स्कूल और जनता महसूस करते हैं कि हमारे युवाओं ने सभ्यता, सम्मान और जिम्मेदारी के गुण खो दिए हैं। वास्तव में हमारे सांस्कृतिक लोकाचार के पतन के कारण शिक्षा और कार्रवाई की सार्वजनिक मांग हो रही है। शिक्षाविदों और जनता ने समान रूप से नैतिक पतन, अपराध, सड़कों और मीडिया में हिंसा, स्कूलों में अनुशासन की कमी के बारे में चिंता व्यक्त की है। बच्चों और युवाओं को स्वयं और दूसरों के साथ सद्भाव और शांति के सामान्य मूल्यों का अभ्यास करने के लिए शिक्षित करने की आवश्यकता है। बच्चे भविष्य के दूत हैं। जनसंख्या अनुमान के अनुसार, भारत 2020 तक दुनिया की सबसे युवा आबादी में से एक होगा। यह विशाल मानव संसाधन देश और दुनिया को आकार देगा। पारिस्थितिक दृष्टिकोण से, बच्चा उस संपूर्ण वातावरण से शिक्षित होता है जिसमें वह बड़ा होता है और वह वातावरण माता-पिता, शिक्षकों और आसपास के समाज द्वारा समान रूप से निर्धारित होता है। हम जिस प्रकार के व्यक्ति का निर्माण करते हैं, वह यह निर्धारित करता है कि हम किस प्रकार के समाज में रहते हैं। यदि हम ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करते हैं जो आत्म-केंद्रित, आक्रामक, प्रतिस्पर्धी और लालची हैं, तो हम एक ऐसा समाज नहीं बना सकते जो अहिंसक, शांतिपूर्ण, सहकारी और सामंजस्यपूर्ण हो।

शिक्षा व्यक्तिगत परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन की मुख्य एजेंसी है। जब तक व्यक्ति का परिवर्तन नहीं होगा तब तक समाज में मूलभूत परिवर्तन लाना संभव नहीं है। हम उन्हें जिस प्रकार की शिक्षा प्रदान करेंगे, उसका समाज के मूल्यों की नींव पर असर पड़ेगा। प्रत्येक स्कूल अपने अधीन बच्चों को जो पढ़ा रहा है उसकी सामग्री और प्रक्रिया की दोबारा जांच की तत्काल आवश्यकता है। हालाँकि मूल्य शिक्षा माता-पिता और सार्वजनिक दोनों की जिम्मेदारी है, लेकिन स्कूल को, अपनी संस्थागत प्रकृति के कारण, प्रमुख जिम्मेदारी लेनी चाहिए। मूल्योन्मुख शिक्षा प्रदान करना स्कूल कर्मियों का दायित्व है। इसे तदर्थ और अव्यवस्थित तरीके से नहीं किया जा सकता है, बल्कि ज्ञान और दूरदर्शिता के साथ एक सचेत और जानबूझकर सुनियोजित उद्यम होना चाहिए।

निष्कर्ष:

भारत एक बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहुधार्मिक देश है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि आने वाले दशकों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का और अधिक विस्फोट देखने को मिलने वाला है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी का अधिक मानवीय और तर्कसंगत तरीके से अनुप्रयोग नैतिक और नैतिकता से संबंधित है। जिम्मेदारी प्रसारित होने वाले मूल्य अक्सर परिवार, समाज या स्कूल द्वारा वांछित मूल्यों के विपरीत होते हैं। मूल्य शिक्षा व्यापक क्षमताओं, दृष्टिकोण और कौशल को बढ़ावा देती है जो न केवल स्कूलों में बल्कि स्कूलों से परे जीवन में भी मायने रखती है, जिससे दुनिया न केवल उनके लिए बल्कि उनके परिवार, दोस्तों, सहकर्मियों और अन्य लोगों के लिए भी एक बेहतर जगह बन जाती है। मूल्य शिक्षा छात्रों को काम की दुनिया के लिए भी तैयार करती है। कड़ी मेहनत, अनुशासन, सहयोग, संचार कौशल आदि के दृष्टिकोण और मूल्य उन्हें घर और स्कूल में स्वस्थ पारस्परिक संबंध विकसित करने में सक्षम बनाते हैं, जो बदले में व्यावहारिक रूप से उनके जीवन में बेहतर समायोजन की सुविधा प्रदान करते हैं। शिक्षा के स्तर में आती गिरावट के लिए अनेक जिम्मेदार तत्व हैं जिनके कारण आज वैश्विक स्तर राष्ट्रीय छवि धूमिल होती दृष्टिगत हो रही है। उन कारणों पर पर्याप्त चर्चा हो चुकी है अब उनके निवारण का समय आ गया है। प्रत्येक भारतवासी को उस पर चिंतन और मनन करना चाहिए ताकि प्रत्येक व्यक्ति इसमें अपना योगदान दे सके। नल नील हनुमान अंगद के साथ रेत ढोती गिलहरी को अनदेखा करने का समय बीत गया। दीपावली के रात में जब चांद चमकने से इनकार कर देता है तो नन्हें-नन्हें दीपक मिलकर रात के अंधेरे को मिटा देते हैं। आने वाला समय ऐसी शिक्षा प्रणाली की मांग कर रहा है, जो कि अतीत से प्रेरित होकर वर्तमान से प्रतिबद्ध तथा भविष्य के लिए नवोन्मेलष से परिपूर्ण हो, जो कि उदघोष करते हुए कहेगी-

शक्ति है अपनी अपरिमित, फिर थकन की बात क्या है।
सूर्य के हम सुत, हमारे समक्ष ये रात्रि का अंधकार क्या है।

कोई व्यक्ति जिस समुदाय से संबंध रखता है वह तीसरा ब्लॉक है। व्यक्ति और समुदाय के बीच संबंध घनिष्ठ है। यह किसी व्यक्ति की पहचान के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, और यह निर्धारित करता है कि बच्चे को किस स्तर की सुरक्षा प्राप्त है। मूल्यों की शिक्षा समुदायों की असुरक्षा को कम करने और अपनेपन की भावना को बढ़ावा देने में बहुत मदद करती है।

श्रीराम मन्दिर आन्दोलन

संक्षिप्त परिचय

■ कौशल जसवानी
केशव मंडल दर्शन

एक ऐसा नाम जो सिर्फ नाम को परिभाषित नहीं करता अपितु पूरा एक युग अपने नाम में समाये हुए हैं। प्रभु श्री राम अपने आप में एक पावन नाम ही नहीं एक युग, एक सदी हैं। राम जी का जन्म त्रेता युग में अर्थात् द्वापर युग से पहले हुआ था। चूँकि कलियुग का अभी प्रारंभ ही हुआ है (लगभग 5,500 वर्ष ही बीते हैं) और राम जी का जन्म त्रेता के अंत में हुआ था तथा अवतार लेकर धरती पर उनके वर्तमान रहने का समय परंपरागत रूप से 11,000 वर्ष माना गया है।

पुराणों में श्री राम के जन्म के बारे में स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं कि श्री राम का जन्म वर्तमान भारत के अयोध्या नामक नगर में एक क्षत्रिय (राजपूत) कुल में हुआ था। अयोध्या, जो कि भगवान राम के पूर्वजों की ही राजधानी थी। रामचन्द्र के पूर्वज रघु थे।

भगवान राम बचपन से ही शान्त स्वभाव के वीर पुरूष थे। उन्होंने मर्यादाओं को हमेशा सर्वोच्च स्थान दिया था। इसी कारण उन्हें मर्यादा पुरूषोत्तम राम के नाम से जाना जाता है। उनका राज्य न्यायप्रिय और खुशहाल माना जाता था। इसलिए भारत में जब भी अच्छे राज की बात होती है तो रामराज्य का उदाहरण दिया जाता है। धर्म के मार्ग पर चलने वाले राम ने अपने तीनों भाइयों के साथ गुरू वशिष्ठ से शिक्षा प्राप्त की। किशोरावस्था में गुरु विश्वामित्र उन्हें वन में राक्षसों द्वारा मचाए जा रहे उत्पात को समाप्त करने के लिए साथ ले गये। राम के साथ उनके छोटे भाई लक्ष्मण भी इस कार्य में उनके साथ थे। ब्रह्म ऋषि विश्वामित्र, जो ब्रह्म ऋषि बनने से पहले राजा विश्वरथ थे, उनकी तपोभूमि बिहार का बक्सर जिला है। ब्रह्म ऋषि विश्वामित्र वेदमाता गायत्री के प्रथम उपासक हैं, वेदों का महान गायत्री मंत्र सबसे पहले ब्रह्म ऋषि विश्वामित्र के ही श्रीमुख से निकला था। कालांतर में विश्वामित्र जी की तपोभूमि राक्षसों से आक्रांत हो गई। ताड़का नामक राक्षसी विश्वामित्र जी की तपोभूमि में निवास करने लगी थी तथा अपनी राक्षसी सेना के साथ बक्सर के लोगों को कष्ट दिया करती थी। समय आने पर विश्वामित्र जी के निर्देशन प्रभु श्री राम के द्वारा वहीं पर उसका वध हुआ। राम ने उस समय ताड़का नामक राक्षसी को मारा तथा मारीच को पलायन के लिए मजबूर किया। इस दौरान ही गुरुविश्वामित्र उन्हें ले गये। वहां के विदेह राजा जनक ने अपनी पुत्री सीता के विवाह के लिए एक स्वयंवर समारोह आयोजित किया था। जहां भगवान शिव का एक धनुष था जिसकी प्रत्यंचा चढ़ाने वाले शूरवीर से सीता जी का विवाह किया जाना था। बहुत सारे राजा महाराजा उस समारोह में पधारे थे। जब बहुत से राजा प्रयत्न करने के बाद भी धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाना तो दूर उसे उठा तक नहीं सके, तब विश्वामित्र जी की आज्ञा पाकर श्री राम ने धनुष उठा कर प्रत्यंचा चढ़ाने का प्रयत्न किया। उनकी प्रत्यंचा चढ़ाने के प्रयत्न में वह महान धनुष घोर ध्वनि करते हुए टूट गया। महर्षि परशुराम ने जब इस घोर ध्वनि को सुना तो वे वहां आ गये और अपने गुरू (शिव) का धनुष टूटने पर रोष व्यक्त करने लगे। लक्ष्मण जी उग्र सव्भाव के थे। उनका विवाद परशुराम जी से हुआ तब श्री राम ने बीच-बचाव किया। इस प्रकार सीता का विवाह राम से हुआ और परशुराम सहित समस्त लोगों ने आशीर्वाद दिया।

अयोध्या में राम सीता सुख पूर्वक रहने लगे। लोग राम को बहुत चाहते थे। उनकी मृदुल, जनसेवा युक्त भावना और न्यायप्रियता के कारण उनकी विशेष लोकप्रियता थी। राजा दशरथ वानप्रस्थ की ओर अग्रसर हो रहे थे। अतः उन्होंने राज्यभार राम को सौंपने का सोचा। जनता में भी सुखद लहर दौड़ गई की उनके प्रिय राजा, उनके प्रिय राजकुमार को राजा नियकुत करने वाले हैं। उस समय राम के अन्य दो भाई भरत और शत्रुघ्न अपने ननिहाल कैकेय गए हुए थे। कैकेयी की दासी मन्थरा ने कैकेयी को बहकाया कि राजा तुम्हारे साथ गलत कर रहे हैं। तुम राजा की प्रिय रानी हो तो तुम्हारी संतान को राजा बनना चाहिए पर राजा दशरथ राम को राजा बनाना चाहते हैं। श्री राम के पिता दशरथ ने उनकी सौतेली माता कैकेयी को उनकी किन्हीं दो इच्छाओं को पूरा करने का वचन (वर) दिया था। कैकेयी ने दासी मन्थरा के बहकावे में आकर इन वरों के रूप में राजा दशरथ से अपने पुत्र भरत के लिए अयोध्या का राजसिंहासन और राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास मांगा। पिता के वचन की रक्षा के लिए राम ने खुशी से चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार किया। पत्नी सीता ने आदर्श पत्नी का उदाहरण देते हुए पति के साथ वन (वनवास) जाना उचित समझा। भाई लक्ष्मण ने भी राम के साथ चौदह वर्ष वन में बिताए। भरत ने न्याय के लिए माता का आदेश ठुकराया और बड़े भाई राम के पास वन जाकर उनकी चरण पादुका (खड़ाऊँ) ले आए। फिर इसे ही राज गद्दी पर रख कर राजकाज किया। इसी प्रकरण में अन्य घटनायें भी घटित हुई। रावण नमक राक्षस ने माता सीता का अपहरण भी किया। उसके बाद भगवान राम भक्त हनुमान जी ने अपने समूह के माध्यम से माता-सीता को राम जी के साथ मिलकर रावण की कैद से मक्त करवाया। उसके बाद जब भगवान वापस अयोध्या लौटे तो सभी अयोध्या वासियों ने घी के दिए जलाकर उनका स्वागत किया उसी दिन को हम आज भी दीपावली के रूप में मनाते आ रहे हैं।

भारत जैसी पावन धरती उन्हें आज भी नमन करती आ रही है जो उन्होंने इस पावन धरती पर जन्म लिया। किन्तु धरती पर यदि भगवान राम जी जैसे अवतार हुए हैं तो राक्षसों की भी कमी नहीं रही। इसी तथ्य में आक्रांताओं के दिल्ली को जीतने के बाद बाबर के आदेश पर अयोध्या में

स्थित राम मंदिर को 1528 में तोड़ दिया गया था। बाबर के सेनापति मीर बाकी ने राम मंदिर के स्थान पर एक मस्जिद का निर्माण कराया जिसका नाम बाबरी मस्जिद रखा।

1838 इस साल पहली बार अयोध्या में सर्वे किया गया। सर्वे करने वाला अधिकारी ब्रिटिश था, जिसका नाम था मॉन्टगोमेरी मार्टिन । मार्टिन ने सर्वे के बाद बताया कि मस्जिद में जो पिलर मिले हैं, वो हिंदू मंदिर से लिए गए हैं। बता दें कि 1838 से पहले के तीन सौ वर्षो का कुछ खास इतिहास मौजूद नहीं है। लेकिन ब्रिटिश अधिकारी के सर्वे के बाद अयोध्या में पहली बार साल 1838 में ही बवाल होता है। हिन्दू कहते हैं कि जिस स्थान पर बाबरी मस्जिद है, वहां पहले भगवान राम का मंदिर हुआ करता था, जिसे बाबर ने तुड़वा दिया और उस पर मस्जिद का निर्माण करवाया।

1853 पहली बार अयोध्या में दंगा होता है। इसके बाद 1857 में हनुमानगढ़ी के महंत ने मस्जिद के आंगन के पूर्वी हिस्से में एक चबूतरा बनाया। इसी चबूतरे को राम चबूतरा कहा गया। इसी स्थान को रामजन्मभूमि भी कहा गया। विवाद बढ़ा तो इसके विरोध में मौलवी मोहम्मद असगर ने जिला मिजिस्ट्रेट के सामने अर्जी लगाई।

पहली बार साल 1859 में मिजिस्ट्रेट के आदेश के बाद मस्जिद में एक दीवार खड़ी कर दी जाती है। इस तरह भीतरी हिस्से में मुसलमानों को इबादत और बाहरी हिस्से में हिंदूओं को पूजा करने की अनमुति मिली। अब साल आता है 1885। निर्मोही अखाड़ा के महंत रघुवार दास ने राम चबूतरे की कानून हक लेने के लिए कोर्ट में अर्जी डाली। इस जगह उन्होंने मंदिर बनाने को लेकर कोर्ट से मांग की। इस याचिका में चबूतरे वाले स्थान को ही राम जन्मभूमि बताया गया था। ये अर्जी साल 1886 में खारिज कर दी जाती है। अब कहानी सीधा पहुंचती है साल 1934 में। अब सवाल ये उठता है कि 1886-1934 तक क्या हुआ। इस दौरान कई दस्तावेजों ने ये दावा किया कि अयोध्या में कई मंदिरों को तोड़ा गया और उस पर मस्जिदों का निर्माण हुआ, उनमें से एक राम मंदिर भी था। साल 1934 में अयोध्या में सांप्रदायिक दंगे हुए। लोगों ने बाबरी मस्जिद के कुछ हिस्से को ढहा दिया। मस्जिद के टूटे हुए हिस्से को अग्रेजों ने ठीक कराया। साल 1944 में वक्फ बोर्ड की तरफ मस्जिद को सुन्नी प्रॉपर्टी घोषित कर दी जाती है। सुन्नी प्रॉपर्टी इसलिए क्योंकि बाबर सुन्नी मुसलमान था।

30 अक्टूबर 1990 की तारीख बड़ी खास और दुखद है। इस दिन अयोध्या में कर्फ्यू लागू था। इससे एक दिन पहले उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव का एक बयान आता है। अपने बयान में वो कहते हैं कि अयोध्या में परिंदा भी पर नहीं मार सकता। बावजदू इसके भारी संख्या में लोग अयोध्या पहुंचते हैं। पुलिस ने एक खास रास्ते पर डेढ़ किलोमीटर तक बैरिकेडिगं कर रखी थी। सुबह 10 बजे तक हनुमानगढ़ी इलाके में भीड़ पहुंच जाती है। बैरिकेडिंग को भी तोड़ दिया जाता है। भीड़ एक मस्जिद की ओर बढ़ने लगती है। तभी अयोध्या में तैनात पुलिस अधिकारियों को लखनऊ से एक आदेश आता है। आदेश था गोली दागने का। पुलिस ने गोलियां चलाई। कहीं गोली लगने से तो कहीं भगदड़ मचने से कई लोगों की मौत हुई। मामला यहीं नहीं रुका। 1 नवंबर को मौतों का अंतिम संस्कार होता है।

2 नवंबर को लोगों की भीड़ फिर से हनुमानगढ़ी के पास मौजूद संकरी गली से होते हुए मस्जिद की तरफ बढ़ती है। सामने पुलिस थी। एक बार फिर आदेश लखनऊ से आया। आदेश था फायर करने का। 2 नवंबर 1990 को फिर पुलिस ने गोलीबारी की। फिर कई लोगों की मौत हुई। ये कहानी कोई आम कहानी नहीं, बल्कि इतिहास में दर्ज वो कहानी है, जिसने सबसे ज्यादा समय तक विवादों का सामना किया।

6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में लगभग 2 लाख कार सेवक पहुंच चुक थे। ये कारसेवक मस्जिद की तरफ बढ़ते हैं। भीड़ ने मस्जिद को गिरा दिया। पहला गुंबद दो बजे तक, दूसरा गुंबद साढ़े तीन बजे तक और तीसरा गुंबद 5 बजे तक गिरा दिया जाता है। वहां रामलला के लिए एक छोटे मंदिर को तैयार किया जाता है। राम लाल उसमें विराजमान होते हैं। मुलायम सिहं की तरह तत्कालीन मुख्यमंत्री कल्याण सिहं ने कोई सख्त एक्शन नहीं लिया। बल का भी प्रयोग नहीं किया, जब मस्जिद गिरी तो वीएचपी और भाजपा के कई नेता वहां मंच पर मौजदू थे। वो कार्यकर्ताओं और कारसेवकों से संयम बरतने की अपील करते हैं।

इन नेताओं पर अब भी केस चल रहा है, जो कोर्ट में लंबित है।

6 दिसंबर की शाम 6 बजे तक यूपी में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया जाता है। कल्याण सिंह का इस्तीफा पहले से तैयार था, वो इस्तीफा दे देते हैं।

7 दिसंबर को पीवी नरसिम्हा राव संसद में बयान देते हैं और कहते है ंमस्जिद को गिराना बर्बर कार्य था।

अब जब पूरे देश में ही नहीं विश्व में पुन: एक बार राम जी के नाम का डंका बज रहा है तो आपको बताना चाहेंगे अपने रामलला के घर अवधपुरी जो की अयोध्या भी है उनके नये घर के बारे में कुछ रोचक तथ्य-

- 18 सेकण्ड की प्राण प्रतिष्ठा (84 सेकण्ड का (महूर्त 12:29:08 -12:30:32)
- बाल स्वरूप विराजमान
- श्याम वर्ण की मूर्ति
- उपस्थित:, आनंदीबेन पटेल (राज्यपाल (यू.पी.), डॉ. मोहन भागवत (सरसंघचालक, योगी आदित्यनाथ मुख्यमंत्री, (यूपी), महंत नृत्य गोपाल दास (अध्यक्ष, जन्म स्थली तीर्थ) ,(नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री)
- 5 सदी (500 वर्ष बाद विराजे) (495 वर्ष)
- 121 आचार्यो द्वारा अनुठान
- 10 लाख दीपों से सजी अयोध्या
- काशी के लेडोम राजा समेत विभिन्न वर्गो मे 15 यजमान सपत्नी शामिल होंगे
- सोने की सलाई से रामलला को लगायेगें काजल (मोदी जी)
- 1528 में बाबर की राह पर मीर बाकी ने मंदिर तोड़ मस्जिद बनाई
- 134 वर्ष में फैसला हुआ
- 1895, 19 जनवरी को निर्मोही अखाड़े के महंत रघुबर दास ने राम चबूतरे पर मंदिर निर्माण के लिए दर्ज कराया पहला केस

- 9 नवंबर 2019 सुप्रीम कोर्ट ने पूर्ण विवादित क्षेत्र को रामलला की जन्मभमि माना
- 2.77 एकड जमीन हिन्दु ट्रस्ट को सौंपी
- 5 अगस्त 2020 को मंदिर निर्माण हेतु भूमि पूजन मोदी जी द्वारा हुआ
- 27 वर्ष कैद में रहे।
- प्राचीनतम नगर शैली में बना अष्टकोणीय मंदिर
- मंदिर को चारों ओर आयताकार पर कोटे का निर्माण जिसकी कुल लंबाई 762 मीटर है।
- लोहे का उपयोग नहीं किया गया है, विशेष तकनीक से जमीन के ऊपर इसका निर्माण कँक्रीट का प्रयोग किए बिना किया गया है।
- मंदिर के स्तंभ व भित्तियों पर देवी-देवताओं तथा देवांगनाओं की भावपूर्ण प्रतिमा एंव कलाकृतियां दर्शायी गयी हैं।
- सुदृढ़ व मजबूत संरचना, रिक्टर स्केल 8 की तीव्रता के भूकंप को भी 2500 वर्ष तक किसी भी प्रकार की क्षति संभव नहीं
- नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
- लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत्काम
  अर्थात भगवान के नीलकमल, नीलमणि और पीले (जलयक्त) मेघ के समान (कोमल, प्रकाशमय और सरस) श्यामवर्ण शरीर की शोभा देखकर करोड़ों नामदेव भी लजा जाते हैं।
- 1800 करोड़ की लागत आने का अनुमान अभी तक 11 सौ करोड़ खर्च।
- 3200 करोड़ रूपये का दान अभी तक प्राप्त हुआ (भक्तों से)
- 3500 के लगभग श्रमिक लगे हैं मंदिर निर्माण में, 100 इंजीनियर, 50 राजगीर, 3.5 साल से तीन शिफ्ट में काम कर रहे।
- 25000 की क्षमता वाले दर्शनार्थी सुविधा केंद्र का निर्माण किया जा रहा है, जहाँ दर्शनार्थियों का सामान रखने के लिए लॉकर व चिकित्सा की सुविधा
- चारों दिशाओं में इसकी कुल लंबाई 732 मीटर तथा चौड़ाई 14 फीट होगी।
- परकोटा के चोरों कोनों पर सूर्य देव, माँ भगवती, गणपति व भगवान शिव को समर्पित चार मंदिरों का निर्माण होगा। उत्तरी भुजा में माँ अन्नपूर्णा व दक्षिणी भुजा में हनुमान जी का मंदिर रहेगा।
- मंदिर के समीप पौराणिक काल का सीता कूप विद्यमान रहेगा।
- मंदिर परिसर में प्रस्तावित अन्य मंदिर, महर्षि वाल्मीकि, महर्षि वशिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र, महर्षि अगस्त्य, निषादराज, माता शबरी, व ऋषि पत्नी देवी अहिल्या को समर्पित होंगे।
- दक्षिणी पश्चिमी भाग में नवरत्न कुबेर टोला पर भगवान शिव के प्राचीन मंदिर का जीर्णोद्वार किया गया है तथा वहाँ जटायु प्रतिमा की स्थापना की गई है।
- मंदिर परिसर में स्वतंत्र रूप से सीवर ट्रीटमेंट प्लांट, वाटर ट्रीटमेंट प्लांट, अग्निशमन के लिए जल व्यवस्था तथा स्वतंत्र पावर स्टेशन का निर्माण किया गया है, ताकि बाहरी संसाधनों पर न्यूनतम निर्भरता रहे।
- मंदिर परिसर में स्नानागार, शौचालय, वॉश बेसिन, ओपन टैप्स, आदि की सुविधा भी रहेगी।
- स्वदेशी तकनीक द्वारा मंदिर का निर्माण पूर्णतया भारतीय परम्परानुसार से किया जा रहा है।
- पर्यावरण - जल संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।
- नृपेन्द्र मिश्र निर्माण समिति को चेयरमैन है। (14) मैनेजिंग कमेटी के चेयरमैन तीर्थ क्षेत्र के महासचिव चंपतराम हैं।
- 161 फीट मंदिर को शिखर की ऊँचाई।
- 250 फीट चौडाई, 380 फीट लंबाई (पूर्व में पश्चिम)।
- 8 कोणीय होगा गर्भगृह, यह भगवान विष्णु के आठ अवतारों का प्रतीक है।
- सीढ़ियों की चौड़ाई 16 फीट की है।
- 32 सीढ़ियाँ चढ़कर सिहं द्वार से होगा मंदिर में प्रवेश।
- 70 प्रतिशत क्षेत्र सदा हरा-भरा रहेगा परिसर का।
- 70 एकड़ कुल क्षेत्रफल परिसर का होगा।
- 14 दरवाजे स्वर्ण जड़ित है, भूतल के 18 दरवाजों में से।
- 44 दरवाजे लगाए जाएंगे राममंदिर में।
- 5 मंडप होंगे नवनिर्मित मंदिर में, (कीर्तन मंडप, नृत्य मंडप, रंग मंडप, गुढ़ी मंडप, प्रार्थना मंडप)।
- 392 खंभे।
- 3 मंजिला होगा मंदिर, 20 फीट हर तल की ऊँचाई।
- 21 फीट ऊंची ग्रेनाइट की प्लिंथ, इसके ऊपर बना तीन फीट का राफ्ट नमी से बचाएगा।
- 11 दिनों का व्रत पूर्ण किया गर्भग्रह से बाहर आकर पीएम ने।
- गिट्टी - M.P. से।
- राख रायबरेली से।
- सफेद मार्बल मकराना से।
- ग्रेनाइट - तेलंगाना और कर्नाटक।
- लकड़ी महाराष्ट्र के बल्लारशाह से।
- मुंबई के व्यापारी ने दरवाजे पर चढ़ाए गए सोने को भेंट किया।
- रामलला की मूर्ति हेतु कर्नाटक से पत्थर लाया गया (बनाया योगीराज कारीगर)
- आभूषण - लखनऊ की एक फर्म ने जयपुर से बनवाए।
- मंदिर के द्वार पर लगे हाथी राजस्थान के सत्यनारायण पाण्डेय ने बनाए
- लकड़ी का काम हैदराबाद के अनुराधा टिंबर ने किया। इनके कारीगर तमिलनाडु व केरल के थे।
- रामलला के विशेष वस्त्र दिल्ली के व्यवसाई मनीष त्रिपाठी ने यहीं बैठकर तैयार किए।
- भगवान को आभूषण लखनऊ की एक फर्म ने जयपुर से तैयार कराए।
- जटायु का निर्माण भी परंपरागत मूर्ति कलाकारों ने तैयार किया
  150 देशों के मतावलंबी पहुँचे।

श्रीराम का
जीवन दर्शन तथा रामत्व

■ सार्थक अग्रवाल
केशव दर्शन मंडल

श्री राम का जीवन, जैसा कि पवित्र महाकाव्य रामायण में वर्णित है, एक गहन यात्रा है जो धार्मिकता, कर्तव्य और भक्ति के आदर्शों को समाहित करती है। अयोध्या के प्रतिष्ठित राज्य में राजा दशरथ और रानी कौशल्या के घर जन्मे, श्री राम ने अपने प्रारंभिक वर्षो से ही ऐसे गुणों का प्रदर्शन किया जो उन्हें धर्म (धार्मिकता) के प्रतीक के रूप में अलग करते हैं।

उनके स्वयंवर का भव्य दृश्य, जहां उन्होंने सहजता से भगवान शिव के दिव्य धनुष को उठाया, न केवल उनकी शारीरिक शक्ति बल्कि गुणों के संरक्षक के रूप में उनके भाग्य का भी प्रदर्शन किया। सिंहासन के असली उत्तराधिकारी होने के बावजूद, अपने पिता के वचन का सम्मान करने और जंगल में वनवास पर जाने की श्री राम की प्रतिबद्धता, कर्तव्य और बलिदान के प्रति उनके अटूट समर्पण का उदाहरण है।

उनके स्वयंवर का भव्य दृश्य, जहां उन्होंने सहजता से भगवान शिव के दिव्य धनुष को उठाया, न केवल उनकी शारीरिक शक्ति बल्कि गुणों के संरक्षक के रूप में उनके भाग्य का भी प्रदर्शन किया। सिंहासन के असली उत्तराधिकारी होने के बावजूद, अपने पिता के वचन का सम्मान करने और जंगल में वनवास पर जाने की श्री राम की प्रतिबद्धता, कर्तव्य और बलिदान के प्रति उनके अटूट समर्पण का उदाहरण है।

राक्षस राजा रावण द्वारा उनकी प्रिय पत्नी सीता के अपहरण सहित बाद की घटनाओं ने लंका में महान युद्ध के लिए मंच तैयार किया। श्री राम का नेतृत्व, हनुमान जैसे उनके समर्पित सहयोगियों और वानर सेना के समर्थन के साथ, अच्छाई और बुराई के बीच शाश्वत युद्ध को दर्शाता है। दिवाली के दौरान दीपों की रोशनी से चिह्नित अयोध्या में विजयी वापसी, अंधेरे पर प्रकाश की जीत, दुष्टता पर धार्मिकता की जीत का प्रतीक है।

आइए, अब रामत्व की अवधारणा पर गौर करें। रामत्व केवल एक ऐतिहासिक या पौराणिक धारणा नहीं है, यह एक कालातीत और सार्वभौमिक दर्शन है जो सांस्कृतिक और लौकिक सीमाओं से परे है। अपने मूल में, रामत्व उन सिद्धांतों और मूल्यों का प्रतीक है जिन्हें श्री राम सत्य, धार्मिकता, करुणा और भक्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

श्री राम का जीवन धार्मिक जीवन जीने के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करता है। विपरीत परिस्थितियों में भी सत्य के प्रति उनका समर्पण, ईमानदारी और सत्यनिष्ठा के महत्व को रेखांकित करता है। मर्यादा पुरूषोत्तमष् की अवधारणा, जिसका अर्थ है आदर्श पुरुष जो परिभाषित सीमाओं के भीतर धार्मिकता के मार्ग पर चलता है, एक अनुशासित और सदाचारी जीवन जीने के लिए श्री राम की प्रतिबद्धता पर प्रकाश डालता है।

रामत्व धर्म के विचार से भी जटिल रूप से जुड़ा हुआ है, वह लौकिक व्यवस्था जो धार्मिकता और नैतिक कर्तव्य को कायम रखती है। एक राजा के रूप में अपनी भूमिका को श्री राम द्वारा स्वीकार करना, अपनी प्रजा की रक्षा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और धर्म के प्रति उनकी अटूट निष्ठा ब्रह्मांडीय सद्भाव की गहन समझ को दर्शाती है।

इसके अलावा, रामत्व में श्री राम और उनके भक्तों के बीच गहरा प्रेम और भक्ति समाहित है। रामायण की शिक्षाएँ और भक्ति के भजन परमात्मा और भक्त के बीच के गहरे संबंध को व्यक्त करते हैं। 'राम नाम' (राम का नाम) का जप एक परिवर्तनकारी अभ्यास बन जाता है, जो दिव्य उपस्थिति का आह्वान करता है और आध्यात्मिक संबंध की भावना को बढ़ावा देता है।

समकालीन विश्व में रामत्व की प्रासंगिकता धार्मिक सीमाओं से परे तक फैली हुई है। यह एक नैतिक दिशासूचक के रूप में कार्य करता है। जो नैतिक आचरण, न्याय और करुणा पर मार्गदर्शन प्रदान करता है। श्री राम के आदर्श व्यक्तियों को समाज के प्रति कर्तव्य की भावना और सत्य और धार्मिकता को बनाए रखने की प्रतिबद्धता के साथ उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित करते हैं।

श्री राम की विरासत प्राचीन धर्मग्रंथों के पन्नों से भी आगे तक फैली हुई है, यह समाज के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक ताने-बाने में व्याप्त है। उनकी शिक्षाओं ने अनगिनत व्यक्तियों को अनुग्रह, विनम्रता और अटूट

भक्ति के साथ जीवन की जटिलताओं से निपटने के लिए प्रेरित किया है।

रामत्व का एक प्रमुख पहलू करुणा और सहानुभूति पर जोर देना है। रामायण में गुणी हनुमान से लेकर पश्चाताप करने वाली अहिल्या तक विभिन्न पात्रों के साथ श्री राम की बातचीत, दूसरों के संघर्षों के प्रति सहानुभूति रखने और मुक्ति प्रदान करने की उनकी क्षमता को दर्शाती है। यह गुण सार्वभौमिक भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने, साथी प्राणियों के सामने आने वाली चुनौतियों को समझने और स्वीकार करने के महत्व को रेखांकित करता है।

रामत्व की अवधारणा नैतिक साहस के महत्व पर भी प्रकाश डालती है। अपने पिता के वचन का सम्मान करने के लिए स्वयं को वनवास देने और बाद में लंका में शक्तिशाली रावण का सामना करने का श्री राम का निर्णय धार्मिकता के प्रति निडर प्रतिबद्धता का उदाहरण है। यह साहस व्यक्तियों को प्रतिकूल परिस्थितियों में दृढ़ता से खड़े रहने, कठिन चुनौतियों का सामना करने पर भी नैतिक सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए प्रोत्साहित करता है।

इसके अलावा, रामत्व नि:स्वार्थ सेवा के विचार का प्रतीक है। लंका तक पुल के निर्माण के दौरान श्री राम का नेतृत्व और अपनी प्रजा की भलाई के लिए उनकी वास्तविक चिंता एक ऐसे नेता को दर्शाती है जो अपने लोगों के कल्याण के लिए समर्पित है। रामत्व का यह पहलू व्यक्तियों को समुदाय के प्रति जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देते हुए, अधिक से अधिक भलाई के लिए निस्वार्थ रूप से योगदान करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

रामत्व की प्रथा किसी विशेष धार्मिक समूह तक ही सीमित नहीं है, यह सांप्रदायिक सीमाओं को पार करता है, सार्वभौमिक मूल्यों की तलाश करने वाले व्यक्तियों के साथ प्रतिध्वनित होता है। श्री राम की शिक्षाओं की सार्वभौमिक अपील आधुनिक जीवन की जटिलताओं से निपटने, उद्देश्य की भावना को बढ़ावा देने और धार्मिक जीवन की ओर व्यक्तियों का मार्गदर्शन करने के लिए एक नैतिक दिशा-निर्देश प्रदान करने की उनकी क्षमता में निहित है।

आज की तेज-तर्रार और अक्सर अशांत दुनिया में, रामत्व के सिद्धांत एक सहारा के रूप में काम करते हैं, सांत्वना और दिशा प्रदान करते हैं। सत्य, करुणा साहस और निस्वार्थ सेवा पर जोर नैतिक जीवन के लिए एक खाका प्रदान करता है, जो स्वयं और समाज के भीतर सद्भाव को बढ़ावा देता है।

समकालीन विश्व में रामत्व की प्रासंगिकता धार्मिक सीमाओं से परे तक फैली हुई है। यह एक नैतिक दिशासूचक के रूप में कार्य करता है। जो नैतिक आचरण, न्याय और करुणा पर मार्गदर्शन प्रदान करता है।

श्री राम का जीवन और रामत्व का दर्शन व्यक्तियों को अपने कार्यों, प्रेरणाओं और दुनिया पर उनके प्रभाव पर विचार करने के लिए आमंत्रित करता है। यह जीवन के अधिक कर्तव्यनिष्ठ और दयालु तरीके की ओर बदलाव को प्रोत्साहित करता है, सभी जीवित प्राणियों के परस्पर जुड़ाव और सामूहिक कल्याण में सकारात्मक योगदान देने की जिम्मेदारी पर जोर देता है।

संक्षेप में, श्री राम के जीवन की कथा और रामत्व का स्थायी दर्शन मानवता को प्रेरित और मार्गदर्शन करता रहता है। चाहे खुशी का समय हो या विपत्ति का, व्यक्तियों को रामायण में निहित कालातीत ज्ञान में सांत्वना और प्रेरणा मिलती है। श्री राम की शिक्षाएँ शक्ति के एक बारहमासी स्त्रोत के रूप में काम करती है, जो व्यक्तियों को आत्म-खोज, धार्मिकता और अंततः दिव्य मिलन की यात्रा पर जाने के लिए आमंत्रित करती हैं।

अंत में, श्री राम का जीवन और रामत्व का दर्शन कालातीत ज्ञान प्रदान करता है जो पीढ़ियों तक गूंजता रहता है। चाहे उनके जीवन की कथा के माध्यम से या उनके द्वारा अपनाए गए सिद्धांतों के माध्यम से, श्री राम प्रकाश की किरण बने हुए हैं, जो मानवता को धार्मिकता, प्रेम और भक्ति के मार्ग पर ले जा रहे हैं।

आज की तेज-तर्रार और अक्सर अशांत दुनिया में, रामत्व के सिद्धांत एक सहारा के रूप में काम करते हैं, सांत्वना और दिशा प्रदान करते हैं। सत्य, करुणा साहस और निस्वार्थ सेवा पर जोर नैतिक जीवन के लिए एक खाका प्रदान करता है, जो स्वयं और समाज के भीतर सद्भाव को बढ़ावा देता है।

वर्तमान समय में श्रीराम जी की शिक्षाओं के सामाजिक निहितार्थ

■ प्रो. उषा यादव

अनंत शक्ति, अनंत शील और अनंत सौंदर्य से समन्वित श्रीराम युग-युग से धरा पर वंदनीय रहे हैं। उनका मर्यादापुरुषोत्तम रूप जीवन-यापन हेतु मानव-समाज का पथ-प्रदर्शन करता रहा है। श्री मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' में लिखा है-

''राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है,
कोई छवि बन जाये, सहज-संभाव्य है।''

यदि श्रीराम के उच्चादर्शों से युक्त, गौरवशाली चरित्र ने कविश्रेष्ठ गुप्तजी को राष्ट्रीय कवि बनाया, तो आज भी वह पावन चरित्र जन-जन के जीवन में प्रकाश स्तम्भ, की भाँति आलोक-रश्मियां विकीर्ण कर रहा है। संतों, धर्माचार्यों एवं साहित्य-साधकों ने अपने सृजन में श्रीराम के दिव्य तथा मानवीय गुणों की प्रेरक झाँकी उत्कीर्ण करके समाज को संवारने का बहुविध प्रयास किया है।

पौराणिक काल में परब्रह्म के अवतार के रूप में ग्रहीत श्रीराम की वाल्मीकि रामायण में दशरथपुत्र राम के साथ अभिन्नता प्रतिपादित की गई। हिंदी साहित्य में श्रीराम की अधिकांशत: इसी रूप में प्रतिष्ठा हुई है। वाल्मीकि के 'रामायण' महाकाव्य में प्रारम्भ मे ही राम विष्णु के समान वीर्यवान, पीनबाहु, उरू क्रम, उदार, धीर, गंभीर और ओजस्वी हैं। वे असुर-संहारक और प्रजा-रक्षक हैं। उनके चरित्र में तितिक्षा का गुण विशेष रूप से मिलता है। इन गुणों के आधार पर महर्षि वाल्मीकि ने श्रीराम की एक महामानव के रूप में सृष्टि की है, जिनकी दिव्यता और अलौकिकता उन्हें नर में नारायणत्व प्रदान करती है।

कालांतर में गोस्वामी तुलसी दास ने 'रामचरितमानस' में श्रीराम को परमब्रह्म के रूप में प्रस्तुत किया, जो विष्णु के अवतार होकर भी मर्यादापुरुषोत्तम रूप में अपनी अभिनव सत्ता रखते हैं। इसी महामानव रूप में वे मर्यादा के रक्षक और धर्म के प्रतिष्ठापक हैं। उनके प्रति अनन्य भक्ति रखने के कारण ही तुलसी कह सके हैं

''जाके प्रिय न राम वैदेही।
सो नर तजिउ कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही।''

मध्यकालीन भक्तिकाव्य की ज्ञानमार्गी शाखा के कवि कबीरदास ने निर्गुण और सगुण से परे एक ईश्वर की सत्ता में विश्वास किया, जो निर्विकार और अरूप है। इस निराकार ईश्वर की उपासना योग और भक्ति से की जा सकती है। इनमें भी भक्ति श्रेष्ठ है। भक्ति के लिए किसी व्यक्तित्व की अपेक्षा है, जिसे कबीर ने प्रतीकों के रूप में देखा। उन्होंने ब्रह्म से मानसिक संबंध जोड़कर उसे गुरु, राजा, पिता, माता, मित्र, स्वामी और पति रूप में देखा। पति के रूप में मानने पर जीवात्मा प्रेयसी बन जाती है। इस प्रियतम-प्रिया के संबंध में जिस दाम्पत्य-भाव की व्यंजना हुई है, उसके लिए कबीर ने अवतारवादी नाम प्रयुक्त किये हैं। इसी क्रम में हरि श्रीराम आदि नाम आते हैं-

''हरि मोर पीव मैं राम की बहुरिया।''

रीतिकालीन कवि केशवदास ने अपनी 'रामचंद्रिका' में चमत्कार-पक्ष का विशेष ध्यान रखा है, जिसके फलस्वरूप कथातत्व और भावपक्ष गौण हो गया है। आधुनिक काल के कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिओध' ने 'वैदेही वनवास' में श्रीराम के मानवीय रूप पर ज्यादा जोर दिया है। मैथिलीशरण गुप्त ने अपनी अनन्य रामभक्ति के कारण 'साकेत' में राम के अवतारी रूप का संकेत करते हुए भी उन्हें मानवीय सहजता से संयुक्त चित्रित किया है। छायावादी कवि निराला ने 'राम की शक्तिपूजा, में श्रीराम के चरित्र को एक नया ही मोड़ दिया है, जो अत्यंत सराहनीय रहा है। कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि श्रीराम के अप्रतिम चरित्र के गौरव-गान में कविगणों की पुरातन काल से ही आस्था रही है और आज भी है।

श्रीराम की शिक्षाएँ अपने कालजयी महत्व के कारण हर युग में उपादेय रही हैं और वर्तमान समय में भी उनकी प्रासंगिकता अवलोकनीय है। आज हम जिस युग में जी रहे हैं, वह भूमंडलीयकरण का युग है। किंतु विश्वग्राम (ग्लोबल विलेज) की बात कही जा रही है, वह किसी दृष्टि से हमारी भारतीय संस्कृति का 'वसुधैव कुटुम्बकम' नहीं है। यह तो प्रत्यक्षत: बाजारवाद है, जो हमारा इतिहास बोध, विलुप्त करके पाँच हजार साल पुरानी सांस्कृतिक परम्परा से हमें काटने की दुरभिसंधि है। इसका सम्मोहन बच्चों एवं बड़ों के सिर पर समान रूप से चढ़ा है। इसने हमारे सामाजिक जीवन में भौतिकता को बढ़ावा दिया है, हमें अहंकारी बनाया है और ममता, आत्मीयता, सौहार्द, दया, क्षमा, सहिष्णुता व भाईचारे का यहाँ कोई स्थान नहीं है। 'अहं' का भावना इतनी अधिक है कि सब कुछ 'मैं' में सिमटकर रह गया है। जहाँ इतना अहंकार है, वहाँ पददु:खकातरता का भाव कैसे रह सकता है?व्यक्ति में स्वार्थपरता का अतिरेक हो जाने से समाज में विश्व-वंधुता का भाव खोजना निरर्थक है। अस्मिता का हनन करके मात्र शरीर की चिंता करना इस भूमंडलीकरण की सबसे बड़ी देन है। हम व्यक्ति से मात्र वस्तु में तब्दील होकर रह गए हैं। यहाँ सुख एक ही है- क्रेता का सुख। क्रय करने की क्षमता का सुख। हम भौतिक सुखों के पीछे भाग रहे हैं और आत्मिक सुखों को भूल चुके हैं। संपूर्ण सुख-सुविधाएँ होते हुए भी विपन्नता के दंश से आज का समाज दंशित है और मानसिक शांति का तिरोभाव हो चुका है।

वर्तमान समय में समाज का किंकर्तव्यविमूढ़ अवस्था में है। लोग नहीं जानते, उन्हें किस पथ पर बढ़ना है। उन्हें यह भी विदित नहीं कि क्या करना है। ऐसी विषम स्थिति से परित्राण पाने के लिए श्रीराम जी की शिक्षाएँ आज परमोपयोगी हैं।

प्रात:कालीन अभिवादन में 'गुड मार्निंग' जानने वाली आज की नौनिहाल पीढ़ी को विदित नहीं है कि प्रभात बेला में शैय्या त्यागने के बाद क्या करना चाहिए ? ऐसे में गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस' की ये पंक्तियाँ निश्चय ही श्रीराम के आदर्श चरित्र का अनुकरण सिखायेंगी–

''प्रात:काल उठि के रघुनाथा।
मात, पिता, गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मांगि करहिं उर काजा।
देखि चरित हरषई मन राजा।।''

माता, पिता और गुरु को मस्तक नवाकर प्रणाम करना और पिता से आज्ञा लेकर विधि कार्यो में संलग्न होना ऐसा गुण है, जिसे सीखने की आज के बच्चों को आवश्यकता है। आज की बाल–पीढ़ी ही देश की भावी कर्णधार है, इसलिए उन्हें गढ़ने के लिए आरंभ से ही श्रीराम के चारित्रिक गुणों का सन्निवेश आवश्यक है।

दूसरी बात, आज बच्चों में प्रतिस्पर्द्धा का भाव इतना प्रबल है कि वे मेहनत करके दूसरों से आगे बढ़ने की जगह उन्हें धक्का देकर और नीचे गिराकर आगे बढ़ने में दुविधाग्रस्त नहीं होते। यदि आगे नहीं बढ़ पाते हैं तो उनमें ईर्ष्या, द्वेष और कटुता जैसे भाव आ जाते हैं। वैर–वैमनस्य उपज जाता है। यही नहीं, आज प्राय: माता–पिता बच्चों की उद्‍ण्डता की चर्चा करते और उनमें विनयशीलता की कमी का अनुभव करते दिखाई दे जाते हैं। बच्चों में सहिष्णुता का अभाव होने से माता–पिता दुखी–चिंतित रहते हैं। ऐसे में मानस का 'धनुर्भंग प्रसंग' दृष्टव्य है, जो श्रीराम के चरित्र की सहिष्णुता का चित्र है। क्रोधोन्मत्त परशुराम के समक्ष श्रीराम का विनयी निवेदन है–

''राम मात्र लघु नाम हमारा।
परसु सहित बड़ नाम तोहारा ।।
देव एक गुन धनुष हमारे।
नवगुन परम पुनीत तुम्हारे ।।
सब प्रकार हम तुम सन हारे।
छमहु बिप्न अपराध हमारे।।''

श्रीराम की इस मृदु वाणी को सुनकर परशुराम गद्‌गद हो उठते हैं। आज के उद्धत किशोरों के लिए क्या सहिष्णुता का यह पाठ अनुकरणीय नहीं है ?

सामाजिक समरसता भी एक ऐसा भाव, है जो समाज में ऊँच–नीच की भावना को समूल नष्ट करके एक समतामूलक भावभूमि की सृष्टि करता है। श्रीराम के चरित्र में मानवता का वह उत्तुंग गिरि–श्रृंग परिलक्षित होता है, जो मानव–मात्र की समानता का उद्‌घोषक है। इसी भाव के चलते श्रीराम गृद्धराज जटायु को न केवल 'तात'कहकर संबोधित करते हैं, अपितु मृत्यु के उपरांत अपने हाथों उनका प्रतिम संस्कार भी करते हैं। योगियों के लिए जो अप्राप्य है, वह दुर्लभ गति जटायु को प्रदान करके अपनी दीनवत्सलता प्रकट करते हैं .

''कोमल चित अति दीनदयाला।
कारन बिनु रघुनाथ पाला ।।
गीध अधम खग आमिष भोगी।
गति दीन्ही जो जाचत जोगी ।।

ऐसा ही एक अन्य प्रसंग शबरी का है, जब श्रीराम अपने अनुज लक्ष्मण सहित उसके आश्रम पहुँचते हैं और उसके दिये रसीले और स्वादिष्ट फलों को अत्यत प्रेमपूर्वक खाते हैं–

यूनिकोड यहां कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि ।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारम्बार बखानि ।।

केवट के प्रसंग में ही देखें, श्रीराम ने सामाजिक समता का अनूठा प्रदर्शन है, जहाँ ऊँच–नीच के भाव का समूल उच्छेदन हो गया है। राम, लक्ष्मण और सीता को गंगातट पर पहुँचाकर सुमंत्र जब वापिस लौट जाते हैं, तो गंगा पार करने के लिए श्रीराम ने केवट से नाव माँगी। उत्तर मिला, जिनके स्पर्श मात्र से पत्थर की शिला सुंदर स्त्री हो गई, उनके बैठने से मेरी काठ की नाव की क्या गति होगी। यदि नाव भी स्त्री बन गई तो मैं अपने परिवार का पालन–पोषण कैसे करूंगा। इसलिए चरण पखारे बिना मैं आपको अपनी नाव में नहीं बैठा सकता। केवट के इन प्रेमसिक्त वचनों को सुनकर श्रीराम ने मुस्कराकर कहा–

कृपासिंधु बोले मुसुकाई।
सोइ कर जेहिं तब नाव न जाई।।
बेगि आनु जल पाव पखारू।
होत बिलंब उतारहि पारू।।''

श्रीराम ने यहाँ समाज को कितना सुंदर संदेश दिया है। ऐसा मधुर सभ्य भाव यदि हमारे समाज में छोटे–बड़े के मध्य स्थापित हो जाये, तो सामाजिक समानता की उच्च भावभूमि की निर्मिति में देर न लगेगी।

मन के छोटेपन के चलते ही आज समाज में भाई–भाई के मध्य तलवारें खिंच जाती हैं। जमीन के छोटे से टुकड़े पर आधिपत्य के लिए उनमें जानलेवा प्रति हिंसा उतर आती है। ऐसे में श्रीराम के चरित्र का वह पक्ष समाज को सौहार्द भरे सातृभाव की शिक्षा देता है, जब वे भरत जी के प्रति अपना प्रेम–निवेदन करते हैं। तुलसी के मानस में ऐसे तीन अवसर प्रदर्शित हुए हैं। प्रथम, चित्रकूट में वास करते हुए जब श्रीराम अवधपुरी की याद करते हैं, तो भरत के गुण से स्मरण से अभिभूत हो उठते हैं–

''सुमिरि मातु–पितु, परिजन भाई।
भरत सनेह सील सेवकाई ।।
कृपा सिधु प्रभु होहि दुखारी।
धीरज धरहिं कुसमय बिचारी।।''

भरत के स्नेह, शील और सेवकभाव की याद से श्रीराम का विचलित हो उतना एक ऐसा दृश्य है, जो भावुक हृदयों में भ्रातृ-प्रेम का भाव जगाये बिना नहीं रहता। ऐसा ही दूसरा अवसर तब है जब भरत के आगमन की सूचना पाकर, राम के अनिष्ट की आशंका से लक्ष्मण परेशान हो उठते हैं, तो श्रीराम उन्हें समझाते हैं

''लखन तुम्हार सपथ पितु आना।
सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।।''

भरत के शील, स्वभाव और गुणों पर श्रीराम को ऐसा अटूट विश्वास है, जिसे देवगण भी सराहे बिना नहीं रहते –

''सुनि रघुबर बानी बिबुध देखि भरत पर हेत।
सकल सराहत राम सो प्रभु को पानिकेत ।।''

तृतीय अवसर तब है, जब चित्रकूट में भरत की विनय सुनने के लिए किये नये वशिष्ठ के प्रयत्न पर श्रीराम स्वीकारते हैं कि भरत का भ्रातृप्रेम विश्व में अन्यतम है –

''नाथ सपथ पितु चरन दोहाई।
भए न भुवन भरत सन भाई।।

श्रीराम की शिक्षाएँ वर्तमान समाज में विश्वबंधुता का भाव उपजाने में समर्थ है। वहाँ शील पर जितना बल दिया गया है, उसे अपनाकर कोई भी मानव समाज सुख-सागर में निमग्न हो सकता है।

तुलसी का स्पष्ट कथन है-

''सुनि सीतापति सील सभाउ।
मोद न मन तन पुलकि नैन जल, सो नर गेहर खाउ।।''

सीधी-सी बात है, श्रीराम के शील स्वभाव के बारे में सुनकर भी जिस अभागे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वह दर-दर की ठोकरें खाता हुआ, धूल फाँकता ही रह जायेगा।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के नाते अपना जीवन दो प्रकार से जीता है निजी और समाज-सापेक्षिक। तुलसीदास के श्रीराम का चरित्र दोनों रूपों में अनुकरणीय है। उनका मर्यादा पुरुषोत्तम रूप, शील-शक्ति सौंदर्य समन्वित रूप व्यक्तिगत और समष्टिगत जीवन को साधने में समान रूप से उपयोगी है। परहित सरिस धर्म नहीं भाई' कहकर तुलसी ने यह सिद्ध किया है कि यह 'परहित' केवल श्रीराम की उपासना से ही सहज-संभाव्य है। यहाँ जीवन से पलायन की बात नहीं है, दायित्वों से मुँह छिपाने की बात भी नहीं है, समाज में रहते हुए समाज का कल्याण करने की शिक्षा दी गई है। कैसा था उस समय का समाज?कलिकाल का अकाल, महामारी का तांडव और युगीन-दुर्दशा का दंश झेल रहा था। वर्तमान समय में भी हमने विगत वर्षो में वैश्विक महामारी कोरोना का विध्वंसक रूप देखा है। ऐसे में तुलसी की कवितावली की ये पंक्तियाँ हमारा मार्गदर्शन करने में निश्चय ही सफल सिद्ध होगी-

''खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि
बनिक को बनिज, न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहैं एक एकन सों 'कहाँ जाई, का करी?'
बेदहूँ पुरान कही, लोकहूँ बिलोकियत,
साँवरे सबै पै, राम! रावरें कृपा करी।
दारिद-दहन देखि तुलसी हहा करी।।''

यहाँ संकट के समय तुलसी ने श्रीराम से सहायता की गुहार लगाई है। समाज में जब आम जन किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति में होता है, उस समय श्रीराम की कृपा से ही सुव्यवस्था स्थापित होती है।

'कवितावली' में ही अन्यत्र भी तुलसीदास ने यह सिद्ध किया है कि संकटकाल में राम की कृपा ही अनमोल रहती है-

''किसबी, किसान- कुल, बनिक, भिखारी, भाट,
चाकर, चपल नट, चोर, चाट, चेटकी।
पेट को पढ़त, गुन गढ़त, चढ़त गिरि,
अटल गहन-गन अहन अखेटकी।
ऊँच-नीचे करम, धरम-अधरम करि,
पेट को ही पचत, बेचत बेटा-बेटकी।
'तुलसी बुझाई एक राम घनस्याम ही हों,
आगि बडबागितें बड़ी है आगि पेट की।।''

श्रीराम आज भी समाज को जर्जर अवस्था से बाहर निकालने में कितने समर्थ है, इसे उपर्युक्ता कवित्त में देखा जा सकता है। सच है, पेट की आग बड़वागिन से भी भयंकर होती है। इसे बुझाने के लिए व्यक्ति नाना पाप-कर्मो में संलिप्त होता है। श्रीराम ही ऐसे श्यामल मेघ हैं, जिनकी जल-वृष्टि से भौतिक सुखों के पीछे भागते आज के मानव को शांति मिल सकती है।

आज कलिकाल में केवल श्रीराम के नाम का संबल लेकर ही व्यक्ति को सच्चा और वास्तविक सुख प्राप्त हो सकेगा। दिग्भ्रमित समाज के लिए राम नाम का जाप एक ऐसी औषधि है, जो उसके सभी रोगों का निदान कर सकेगी। आज समाज में सर्वत्र भौतिक सुखों के पीछे भागने की प्रवृत्ति परिलक्षित हो रही है। हर आदमी पैसे के पीछे भाग रहा है। टके पर सबकी टकटकी लगी है। पर सांसारिक सुख-सुविधाएँ केवल देह को क्षणिक तुष्टि देती है, वास्तविक सुख श्रीराम के चरणों में नमन करने से ही है। 'मति रामहि सों, रति रामहिं सों, रामहि को बल है' की शिक्षा को आत्मसात करने वाला सांसारिक प्राणी ही विषम-भोग से असम्पृक होकर जगत में जीवन का फल पा सकता है। इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने कलिकाल में केवल राम-नाम का ही भरोसा किया है और समाज के सामने उसी को हृदयम करने का संदेश दिया है।

जहाँ तक मैथिलीशरण गुप्त के 'साकेत' की बात है, वहाँ राम आर्य-संस्कृति के प्रतिष्ठापक है। मानवता के आदर्शो के प्रतीक है। वे स्पष्ट घोषणा करते हैं-

''संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया,

इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।''

धरती पर स्वर्ग तभी बन सकता है, जब समाज में परस्पर प्रेम-भाव और एक दूसरे के प्रति कटुता का अभाव हो। परिवार में किसी के प्रति वैमनस्य न हो और छोटी-मोटी बातों की उपेक्षा करने की सबकी प्रवृत्ति हो। 'साकेत' के श्रीराम में ये सभी गुण उपस्थित है। चित्रकूट की सभा में पश्चाताप और ग्लानि की भावना से भरी हुई कैकेयी के प्रति भी वे प्यार और करुणा का भाव रखते हुए कहते है-

''हा मात! मुझको करो न यों अपराधी,
मै सुन न सकूँगा बात और बत आधी।
कहती हो तुम क्यों अन्य तुल्य यह वाणी,
क्या राम तुम्हारा पुत्र नीं वह मानी?'

यहाँ राम के उदात्त चरित्र का वह वैभव है, जो माता कैकेयी के प्रति सदय भाव रखता है। स्वयं को कृकृत्य के लिए धिक्कारती कैकेयी के प्रति भी सम्मान भाव रखता है। निश्चय ही समाज के सुंदर समायोजन हेतु यह शिक्षा अतीव मूल्यवान है।

'साकेत' के राम में करुणा और परदु:खकारता होने के साथ-साथ शौर्य भाव भी है, जो आज हमारे लिए अत्यंत अनुकरणीय है। श्रीराम का धीर, गंभीर, प्रशांत चरित्र करुणा और शौर्य के युगल कगारों का संस्पर्श करता हुआ प्रवहमान है। रणभूमि में लक्ष्मण जब मेघनाद की शक्ति से आहत हो जाते हैं, तो राम शौर्य से भरकर कुम्भकर्ण पर टूट पड़ते हैं और 'भाई का बदला भाई ही' कहकर उसकी इहलीला समाप्त कर देते हैं। इसे समाज को यह शिक्षा मिलती है कि किसी के गलत आचरण को चुपचाप सहन कर लेना मानवोचित कर्म नहीं है। अपने मान-सम्मान की रक्षा के लिए यदि अस्त्र भी उठाना पड़े, तो गलत नहीं है।

'साकेत' के राम का चरित्र- इस अर्थ में भी समाजोपयोगी है, क्योंकि वह हमें सुख-दुख में सामरस्य की शिक्षा देता है। बहुजन हिताय बहुजन सुखाय के समर्थक श्रीराम कहते हैं-

''सुख देने आया, दुख झेलने आया।
मैं राज्य भोगने नहीं, भुगाने आया।
भव में नव वैभव व्याप्त कराने आया।''

स्वयं दुख उठाकर भी दूसरों को सुखी करने का भाव यदि समाज में आ जाये, तो उसे स्वर्ग में परिणत देर न लगेगी।

इसी क्रम में जब हम छायावाद के आधारस्तम्भों में से एक- सूर्यकांत त्रिपाठी निराला- के राम को देखते हैं, तो कुछ अलग ही वैशिष्ट्य दृष्टिगत होता है। राम की शक्तिपूजा के श्रीराम का चरित्र यह जतलाता है कि समाज में रहने वाले सामान्य सांसारिक प्राणी के जीवन में सुख-दुख आता रहता है। गहन निराशा के क्षण भी आते हैं, जो निराला के राम के जीवन में राम-रावण युद्ध के समय निरंतर पराजय देखते हुए आये-

''जानकी! हाय उद्धार प्रिया का हो न सका।''

श्रीराम के जीवन का यह क्षण वह है जब शक्ति पूजा करते हुए वे अंतिम कमल पुष्प को जगह पर नहीं पाते हैं। पर निराशा के इन क्षणों में भी उनके भीतर एक और सबल मन है-

''वह एक और मन रहा राम का जो न थका,
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय।'

और इसी मन ने संकट की घड़ी में राम को यह उपाय सुझाया कि बचपन में माँ तुम्हें राजीव-नयन कहा करती थी, अत: एक कमल पुष्प की कमी तुम देवी भगवती के चरणों में अपना एक नेत्र चढ़ाकर पूरी कर दो। इस प्रकार निराला के राम विपरित परिस्थितियों में भी हर सामाजिक प्राणी को आशावादिता का संदेश देते हैं। राम की शक्तिपूजा की यह पंक्ति, 'धिक जीवन जो पाता कि आया विरोध' केवल राम की ही नहीं, निराला के जीवन की भी विडम्बना का सूचक है, हर सांसारिक प्राणी के जीवन की विडम्बना का सूचक है, जिसे संघर्षो से निरंतर जूझना पड़ता है। ऐसे में उसका मन हार न माने, यह आवश्यक है और यही सबाल भाव विजय भी दिलाता है। महाशक्ति का श्रीराम में लीन होना अन्याय और अधर्म के विनाश का सूचक है। यह सत्-असत् के मध्य उपजाने वाला संघर्ष समाज के हर युग में सामने आया है। ऐसे में मन में द्वन्द्व उठना स्वाभाविक है कि अब क्या होगा? पर मन की इस आशंका को समाप्त करते हुए व्यक्ति को सदैव धर्म की विजय के प्रति आश्वस्त रहना चाहिए। यही निराला के श्रीराम का समाज को संदेश है, जो अत्यंत मूल्यवान है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में श्रीराम जी की शिक्षाओं के सामाजिक निहितार्थ विपुल है। श्रीराम का चरित्र आज भी प्रासंगिक है और समाज को बतलाता है कि धर्म की उच्चता उसके लक्ष्य की व्यापकता के अनुसार निर्धारित की जाती है। धर्म की अनेक ऊँची-नीची भावभूमियों-देहधर्म, गृहधर्म, कुलधर्म, समाजधर्म और मानवधर्म में यदि कहीं विरोध दिखाई दे तो गृहधर्म के लिए देहधर्म को, कुलधर्म के लिए गृहधर्म को और इसी क्रम में मानवधर्म के लिए किसी परिमित वर्ग के धर्म का त्याग ही श्रेयस्कर है। भगवान श्रीराम का मर्यादा पुरुषोत्तम रूप पूर्ण धर्मस्वरुप है, जिसे अपने जीवन में उतारना प्रत्येक सामाजिक प्राणी का दायित्व है।

यदि श्रीराम के उच्चादर्शो से युक्त, गौरवशाली चरित्र ने कविश्रेष्ठ गुप्तजी को राष्ट्रीय कवि बनाया, तो आज भी वह पावन चरित्र जन-जन के जीवन में प्रकाश स्तम्भ, की भाँति आलोक-रश्मियां विकीर्ण कर रहा है। संतों, धर्माचार्यो एवं साहित्य-साधकों ने अपने सृजन में श्रीराम के दिव्य तथा मानवीय गुणों की प्रेरक झाँकी उत्कीर्ण करके समाज को संवारने का बहुविध प्रयास किया है।

भारतीय कला, साहित्य और विज्ञान
समृद्धि का संगम

■ डॉ. कविता गुप्ता
असि. प्रो. महालक्ष्मी कॉलेज फॉर गर्ल्स दुहाई, गाजियाबाद

कला समकालीन समाज के परिदृश्य को प्रस्तुत करने का एक अद्‌भुत माध्यम है। प्राचीन इतिहास के क्षेत्र में कला साक्ष्यों का योगदान अविस्मरणीय है। भारतीय कला भारतीय संस्कृति की एक अनमोल धरोहर के रूप में आज भी हमारे समक्ष विद्यमान है। भारतीय संस्कृति में सौंदर्य, साहित्य की आत्मा में बसता है वहीं सौंदर्य, कला के रूप में व्यक्त होता है। कला का साहित्य से वही संबंध है जो शरीर का मन से। संस्कृति एक व्यापक शब्द है, जिसमें मानव समाज के विभिन्न पहलुओं जैसे-समृद्धि, साहित्य, विज्ञान कला, धर्म, रूढ़िवाद और सामाजिक संबंधों का समृद्धि शील के रूप में विवेचन किया जाता है। भारतीय कला साहित्य और विज्ञान ने भारतीय सांस्कृतिक विरासत को अद्वितीय बनाकर विभिन्न युगों में अपनी साहित्य कला के माध्यम से विविधता और विचारशीलता का परिचय दिया है। भारतीय कला ने रंगमंच, संगीत, नृत्य, चित्रकला और मूर्ति कला के माध्यम से भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं, धार्मिक तत्वों और जीवन दृष्टिकोण को समर्थन देकर एक सांस्कृतिक समृद्धि का माहौल प्रदान किया है। भारतीय सांस्कृतिक विरासत में कला, साहित्य और विज्ञान की इस अनूठे संगम ने न केवल हमारी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परम्पराओं को प्रतिष्ठापित किया है, अपितु आधुनिक युग में विकसित होकर समृद्धि का मार्ग प्रशस्त किया है। धन्य है हम सब जिन्होंने देवी देवाताओं और महापुरुषों की इस पावन भूमि पर जन्म लिया।

भारतीय संस्कृति में सौंदर्य, साहित्य की आत्मा में बसता है वहीं सौंदर्य, कला के रूप में व्यक्त होता है। कला का साहित्य से वही संबंध है जो शरीर का मन से। संस्कृति एक व्यापक शब्द है, जिसमें मानव समाज के विभिन्न पहलुओं जैसे-समृद्धि, साहित्य, विज्ञान कला, धर्म, रूढ़िवाद और सामाजिक संबंधों का समृद्धि शील के रूप में विवेचन किया जाता है।

''वंदे जननी भारत धरणी
शस्य श्यामला प्यारी।
नमो नमो सब जग की जननी
कोटि-कोटि सुतवारी।''

भारतीय कला, साहित्य और विज्ञान का यह अदभुत संगम आज भी हमारी संस्कृति को अपनी खुशबू से महका रहा है और आधुनिक काल में भी हम सबके लिए लाभप्रद सिद्ध हो रहा है। जहाँ भारतीय कला ने प्राचीन शैलियों को नए और आधुनिक रूप में प्रस्तुत करके युवा पीढ़ियों को इन कलाओं की ओर आकर्षित किया है वहीं भारतीय साहित्य की विविधता और गहराइयों ने आधुनिक समस्याओं के साथ जुड़कर विभिन्न रचनाओं के माध्यम से समाज में जागरूकता बढ़ाई है। विज्ञान के क्षेत्र में हुए नए-नए आविष्कार नए मील के पथ के रूप में समाज को समृद्धि और प्रगति के मार्ग की ओर प्रशस्त करते हैं।

भारतीय कला: भारतीय कला आनंद पर आधारित कला का सृजन किसी भी व्यक्ति के आंतरिक अस्तित्व से जुड़ी हुई एक ऐसी उद्देश्य पूर्ण प्रक्रिया है जिसे एक तरल कलाकार के बाहरी प्रयासों से ही प्राप्त किया जा सकता है। कला का मूल उद्देश्य, आत्मबोध आत्मविश्वास और आत्मा अभिव्यक्ति है। कला में एकाग्रता और तत्काल जैसे गुण पाए जाते हैं। इन गुणों के कारण ही कला अन्य शास्त्रों और विज्ञानों से पृथक मानी जाती है। मधुरता और सौंदर्य कला भारतीय कला के महत्वपूर्ण व आवश्यक तत्वों के रूप में अपनी विशेष महत्ता रखते हैं।

कला का विशेष मूल्य इस बात में निहित है कि यह मानसिक दुनियाँ और आध्यात्मिक दुनिया के बीच एक सेतु का निर्माण करते हैं। वास्तु कला, मूर्ति कला और चित्रकला ये सभी कलाएं भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण सौंदर्य हिस्सा है जिन्हें संस्कृति का निर्माण करने वाले तत्वों के रूप में जाना जाता है। किसी भी देश की संस्कृति प्रगति को मापने के लिए उसकी कलाओं और कलात्मक कौशल की स्थिति भी एक आधार होती है। अत: भारतीय संस्कृति का संपूर्ण स्वरूप जानने के लिए भारतीय कला का अध्ययन करना आवश्यक है। कला के ज्ञान के बिना संस्कृति का संपूर्ण मूल्यांकन संभव नहीं है। भारतीय कला की परंपरा विश्व की प्राचीन जीवित परंपराओं में भी अद्वितीय है। इतिहास के अबाधित प्रवाह में भारतीय कला का क्रम निरंतर बना रहा है और उसका विशाल कला कोष भी उत्कृष्ट एवं महत्वपूर्ण बना रहा। समय की अनवरत गति में प्रकृति की मार और मनुष्य की क्रूरता के कारण भारतीय कला का अधिकांश भाग नष्ट हो जाने के बावजूद भी भारतीय कला का शेष भंडार आज भी दुनियां को अपनी रोशनी से चकाचौंध किए हुए हैं। इस चमत्कार के मूल में भारतीय कला की कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्न हैं-

1. भावनाओं की अभिव्यक्ति- भारतीय कला में भावनाओं की

अभिव्यक्ति को प्राथमिकता दी है। इन भावनाओं की अभिव्यक्ति के कारण यह कला विकसित हुई है। किसी भी कला के तीन मुख्य रूप होते हैं–

अलंकारित कला: इस कला का मुख्य उद्देश्य सुंदर आकृतियों का निर्माण करना होता है।

प्रतिकृति कला: प्रतिकृति कला में सुंदर प्राकृतिक घटनाओं, जानवरों, पक्षियों या लोगों की हूबहू प्रतिक्रिया बनाकर उन्हें सुंदर बनाया जाता है।

अभिव्यंचक कला: अमूर्त भावनाओं को व्यक्त करने वाली अभिव्यंजक कला को कला का सबसे कठिन रूप माना जाता है। भारतीय कलाकारों के द्वारा सदैव से ही बाहरी सौंदर्य की अपेक्षा आंतरिक भावनाओं को चित्रित करने में रुचि रही है। जिसका प्रमाण बुद्ध प्रतिमाओं के मुख्य की दिव्य शांति द्वारा मिलता है।

2. धार्मिकता: भारतीय कला में धर्म का सिद्धांत प्रबल है। यहां कला केवल, कला के लिए नहीं बल्कि अपने वास्तविक स्वरूप की प्राप्ति के लिए है। जिसके माध्यम से मनुष्य स्वत: ही ईश्वर की ओर उन्मुख हो जाता है। भारत की मौलिक, धार्मिक, मान्यताओं विचारों और गुणों की गहरी छाप भारतीय स्थानीय कला, मूर्ति कला और चित्रकला में दृष्टिगोचर होती है।

3. दार्शनिकता: यह सर्वविदित है कि भारतीय कला के विकास के मूल में अध्यात्मवाद चेतना को प्रेरणा मिली। आध्यात्मिक अनुभवों को व्यक्त करने और दार्शनिक सत्य का उपदेश देने के लिए भारतीय कलाकारों ने कलाकृतियों का निर्माण किया। परम सत्य का ज्ञान अलौकिक है, लेकिन सर्वश्रेष्ठ कलाकार अपने काम की मुद्रा भाव-भाव भंगिमा और प्रतीकों के माध्यम से परम सत्य को आंशिक रूप से ठोस रूप देने की शक्ति रखता है। चोल कालीन नटराज शिव की कांस्य प्रतिमा इसका सुंदर उदाहरण है।

4. प्रतीकवाद: भारतीय कला प्रतीक वाद से परिपूर्ण है। प्रतीक वाद का मूल उद्देश्य कहना नहीं अपितु अभिव्यक्ति करना होता है। भारतीय कला उन सभी तत्वों को अभिव्यक्त करती है जो भारतीय दर्शन के मूल सिद्धांत हैं। भारतीय कला मूर्तता की अपेक्षा प्रतीकवाद को दर्शाती है। हंस, कमल, चक्र, स्वास्तिक आदि सभी प्रसिद्ध कला प्रतीक हैं। जिस प्रकार हंस भगवान का प्रतीक है उसी प्रकार चक्र-धर्म, कर्म, द्वंद व समय की गतिशीलता को व्यक्त करता है।

5. पारंपारिकता: भारतीय कला की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसकी पारंपारिकता है। पारंपारिकता पर आधारित होने का अर्थ है एक प्रकार का अनुशासन या नियमों का पालन परंतु इस पारंपारिकता का मतलब यह नहीं है कि यह कला जड़, अविकसित एकरूप या केवल रूपात्मक हो गई है।

भारतीय कला, साहित्य और विज्ञान का यह अदभुत संगम आज भी हमारी संस्कृति को अपनी खुशबू से महका रहा है और आधुनिक काल में भी हम सबके लिए लाभप्रद सिद्ध हो रहा है। जहाँ भारतीय कला ने प्राचीन शैलियों को नए और आधुनिक रूप में प्रस्तुत करके युवा पीढ़ियों को इन कलाओं की ओर आकर्षित किया है

भारतीय कला और साहित्य का मिलन साहित्य को एक सुदृढ और अद्वितीय स्थान प्रदान करता है। साहित्य भाषा, विचार और भावनाओं का एक सुंदर संगम है जो कला के माध्यम से अभिव्यक्ति प्राप्त करता है। साहित्य भारतीय कला के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है जो संगीत नृत्य और विभिन्न शैलियों के माध्यम से व्यक्त होता है। साहित्य के माध्यम से कला का अनुभव करने से विचारों का सार्थक संबंध बनता है। कला के रूप, रंग, बिरंगे भाषाई और सांस्कृतिक तत्वों का उपयोग करके साहित्य रचना को समझना सरल हो जाता है। इसी प्रकार साहित्य रूप कला का हस्त शिल्प है जो भाषा के माध्यम से रंग बिरंगे चित्रण करता है। कला साहित्य के दृश्य भावनाएं और रूपों के सामंजस्य का अध्ययन करके लेखक और कलाकार एक अद्वितीय अभिव्यक्ति का संदर्भ बनाते हैं।

इस प्रकार कला और साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं जो मानवता के विभिन्न रूपों को सुंदरता और रुचि के साथ प्रस्तुत करते हैं।

भारतीय साहित्य का इतिहास: भारतीय साहित्य का इतिहास एक अद्वितीय संस्कृति सफलता का परिचायक है। जिसने विभिन्न कालों और समय में विकसित होकर अपनी अद्वितीयता को साबित किया है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक इस इतिहास ने साहित्य के विविध रूपों की उत्पत्ति और विकास की कहानी सुनाई है। भारतीय इतिहास की शुरुआत वेदों से हुई है जो आध्यात्मिक ज्ञान और यज्ञों की विधियों का संग्रह माना जाता है। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अर्थवेद इन चारों वेदों ने भारतीय साहित्य को उच्च स्तर पर उठाया है। 10वीं से 17वीं सदी तक भारतीय साहित्य में भक्ति आंदोलन का समय था। सूरदास कबीर और मीरा जैसे समाज सुधारक कवियों ने अपनी रचनाओं में दैहिकता के खिलाफ भावनाओं को अभिव्यक्त कर समाज में सामाजिक बदलाव को स्थान दिया। इस समय के साहित्य ने भाषा को सामाजिक और धार्मिक अभिव्यक्ति का साधन बनाया जिसके परिणामस्वरुप भारतीय समाज में गहरा परिवर्तन हुआ।

18वीं सदी के बाद हिंदू और उर्दू साहित्य ने एक नया रूप धारण किया। संस्कृत से अलग जनमानस, सूर्यकांत त्रिपाठी ''निराला'' महादेवी वर्मा, प्रेमचंद, मुंशी प्रेमचंद, फाइज अहमद जैसे महान साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं से सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं का समर्थन किया और साहित्य को व्यक्तिगत और सामाजिक परिवर्तन का एक साधन बनाया।

भारतीय साहित्य का इतिहास एक संवैधानिक और सांस्कृतिक साक्षरता का सफर है, जो न केवल एक क्षेत्र के साथ बल्कि पूरे विश्व के साथ भी बढ़ा है। इस से न शिक्षा को ही साक्षरता से बचा रखा है बल्कि यह समर्थन और समृद्धि के लिए भी एक स्रोत बना है। जिससे हमें अपने साहित्य की गरिमा और शान को समझने का अद्भुत अवसर मिला है।

भारतीय साहित्य और प्रमुख शैलियां: भारतीय साहित्य अपनी अद्वितीय और समृद्धि पूर्ण विरासत के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध हैं। जो विभिन्न युगों और क्षेत्रो में विकसित हुआ। साहित्य का उदभव वेदों से हुआ जो धार्मिक और आध्यात्मिक ज्ञान का संग्रह है। समृद्धि की इस अद्वितीय सफलता का श्रेय भारतीय साहित्य की कुछ प्रमुख शैलियों में निहित है।

काव्य शैली : भारतीय साहित्य में काव्य शैली एक महत्वपूर्ण रूप में विद्यमान है । भक्ति काव्य से लेकर श्रृंगार और भूत काव्य तक विविध शैलियों का गहरा समृद्धान्त करती हैं। इस अलंकार और छंदों का सजीव उपयोग काव्य को अद्वितीय बनता है।

गद्य शैली: भारतीय साहित्य में गद्य शैली ने भाषा के प्रयोग को एक नई दिशा दिखाई है। गद्य रूप में शामिल किस्से, उपन्यास और आत्मकथाओं ने साहित्य को एक नए आयाम तक पहुंचाया है।

नाटक शैली: भारतीय साहित्य में नाटकों ने समाज की समस्याओं और मानव जीवन की अद्वितीयता को व्यक्त किया है। सुधारक नाटकों ने समाज में बदलाव की बात की है और नाटकों ने रंगमंच के माध्यम से जीवन को दर्शनीय बनाया है।

उपन्यास शैली : उपन्यास भारतीय साहित्य का एक और महत्वपूर्ण रूप है जो विभिन्न विषयों पर आधारित है। आत्मकथाएं और कल्पनात्मक उपन्यास साहित्य में एक नयापन प्रदान करते हैं।

आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक इस इतिहास ने साहित्य के विविध रूपों की उत्पत्ति और विकास की कहानी सुनाई है। भारतीय इतिहास की शुरुआत वेदों से हुई है जो आध्यात्मिक ज्ञान और यज्ञों की विधियों का संग्रह माना जाता है। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अर्थवेद इन चारों वेदों ने भारतीय साहित्य को उच्च स्तर पर उठाया है।

भक्ति शैली: भारतीय साहित्य में भक्ति शैली एक महत्वपूर्ण शैली है जो धार्मिक भावनाओं प्रेम और सेवाओं की ऊंचाइयों को छूती है। सूरदास, कबीर और तुलसीदास जैसे कवियों ने इस शैली में अपने रचनात्मक योगदान से समृद्धि को नई दिशा दी है।

यात्रावाद : भारतीय साहित्य में यात्रावाद एक रोमांटिक और दृश्य कवि शैली है जो सौंदर्य और साहित्यिक अनुभवों को व्यक्त करती है। कालिदास की 'कुमार संभव' इस शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है।

भारतीय साहित्य और विज्ञान दोनों की मानव चेतना को समर्थन करते हैं और समाज को समृद्धि और समृद्धि की दिशा में अग्रणी बनाते हैं। विज्ञान ने मानव समृद्धि के क्षेत्र में नए द्वार खोलकर जहां सृष्टि को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है वही आधुनिक विज्ञान में तकनीकी समस्याओं का समाधान निकालकर जीवन को सुविधाजनक बनाने में अपना योगदान दिया है।

भारतीय विज्ञान ने प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक विभिन्न दीर्घ कालिक सीमाओं से विकसित होकर समृद्धि को प्राप्त किया है। आधुनिक काल में विज्ञान के विकास का कारण विभिन्न क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी और अनुसंधान में हो रही उन्नति है जिसने न केवल भारत को वैश्विक मानकों के साथ मेल जोल करने में मदद की अपितु भारतीय विज्ञान को एक वैज्ञानिक ताकत के रूप में भी स्थापित किया है। भारतीय साहित्य और विज्ञान में सामंजस्य को बनाए रखने हेतु विशेष सभ्यता और सृजनात्मक की आवश्यकता होती है। आधुनिक काल में इंटर डिसीप्लिनरी अनुसंधानों के माध्यम से भारतीय साहित्य और विज्ञान को सामंजस्य, समृद्धि और पोषण प्राप्त हुआ है।

भारतीय विज्ञान का इतिहास:

विज्ञान की उत्पत्ति ईसा से 3000 वर्ष को पूर्व भारत में हुई। प्राचीन काल में लोगों के वैज्ञानिक दृष्टिकोण का पता सिंधु घाटी और मोहनजोदड़ो की खुदाई से मिले साक्ष्यों से मिलता है। भारतीय विज्ञान की परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन परंपरा है। भारतीय विज्ञान का प्रारंभ वेदों के साथ हुआ जिनमें गणित, रसायन, खगोल और आयुर्वेद जैसे विषयों से संबंधित ज्ञान का साक्षात्कार हुआ। भारत में विज्ञान की यह परंपरा आर्यो के साथ और भी अधिक विकसित हुई। विज्ञान की यह परंपरा ईसा के जन्म से लगभग 200 वर्ष पूर्व प्रारंभ हो गई थी और लगभग 11वीं सदी तक अत्यंत उन्नत अवस्था में रही।

गुप्त साम्राज्य: गुप्त साम्राज्य के काल में 4 वीं से 6 वीं सदी ईसा पूर्व भौतिक विज्ञान, गणित और आयुर्वेद में विकास हुआ। गुप्त साम्राज्य के दौरान गणित का विकास हुआ और आर्यभट्ट जैसे गणितज्ञ ने अपने कार्यो से भारतीय विज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आर्यभट्ट ने आर्यभटीय, गणितशास्त्र को प्रस्तुत किया। खगोल में भी गुप्त सम्राटों ने अपनी सफलता व कुशलता का प्रदर्शन किया। वृहदारण्यक उपनिषद में खगोल सिद्धांतों का प्रभाव मिलता है। भौतिक विज्ञान में भी गुप्त सम्राटों ने प्रगाढ़ रूप में योगदान किया। उन्होंने रसायन और अद्भुत उपकरणों के विकास में शुभ्रक, विष्णु गुप्त और चंद्रगुप्त द्वितीय के नेतृत्व में सहायता प्रदान की। गुप्त साम्राज्य में आयुर्वेद में भी सुधार हुआ और चरक और सुश्रुत जैसे वैद्यकीय ग्रंथ लिखे गए। आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान ने वृद्धि की और औषधियों के उपयोग के संबंध

में वैज्ञानिक अध्ययनों को प्रोत्साहित किया।

गुप्त साम्राज्य में विज्ञान का यह उच्च स्तर न केवल सांस्कृतिक और तत्कालिक रूप में महत्वपूर्ण था बल्कि इसने भारतीय समाज के विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में एक सशक्त और प्रगतिशील समर्थन का भी प्रदर्शन किया।

भारतीय विज्ञान रीनैसंस युग: मैसूर के राजा टीपू सुल्तान का 18वीं सदी का युग भारतीय विज्ञान में एक प्रकार के रिनैसांस की भूमि थी, जो नए गणराज्य और विदेशी संस्कृतियों के साथ संगत हुआ। टीपू सुल्तान ने विज्ञान, तकनीकी और शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दिए। टीपू सुल्तान ने अपने दरबार में वैज्ञानिकों, गणितज्ञों, और विद्यार्थियों के लिए विशेष अनुसंधान केंद्रों की स्थापना की। यूरोपीय वैज्ञानिकों के साथ बनाए गए संबंधों ने टीपू सुल्तान को विभिन्न विज्ञान और तकनीकी विधियों के लिए नए दृष्टिकोण प्रदान किए। उन्होंने तकनीकी क्षेत्र में अपने योगदान के रूप में विविध उपकरणों का निर्माण किया उनके द्वारा बनाए गए 'मैकेनिक टाइगर' और 'टीपू रॉकेटस' इसके उदाहरण हैं। टीपू सुल्तान के समय में भारतीय विज्ञान में उत्कृष्टता का एक नया दौर शुरू हुआ जिसने उत्तर भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया।

आधुनिक भारतीय विज्ञान: आधुनिक भारतीय विज्ञान युग का समय भारतीय विज्ञान में एक महत्वपूर्ण दौर का प्रतिनिधित्व करता है जिसने विभिन्न क्षेत्रों में अनगिनत विकास को साकार किया। इस युग का प्रारंभ स्वतंत्रता के बाद हुआ जिसने भारतीय वैज्ञानिकों की विश्वस्तर पर एक अलग पहचान बनाई। आधुनिक समय में भारत में विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में नए-नए प्रयोग होते रहे, लेकिन यह कुछ भारतीय वैज्ञानिक उपलब्धियाँ ही थीं, जिन्होंने भारत का नाम पूरी दुनिया में रोशन किया। प्रमुख वैज्ञानिकों में जगदीशचंद्र बोस, सी. वी. रमण, होमी जहांगीर भाभा, शांतिस्वरूप भटनागर प्रफुल्ल चन्द्र राय, हरगोविन्द खुराना आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। उचित साधनों एवं उपकरणों के अभाव में भी जगदीश चन्द्र बोस ने अपना कार्य जारी रखा। उन्होंने छोटी रेडियो तरंगें उत्पन्न कीं। उन्होंने मार्कोनी से पहले विद्युत चुम्बकीय तरंगों पर प्रयोग पूरा कर लिया था। उनकी प्रमुख उपलब्धि पौधों में जीवन के लक्षणों की खोज है। सी. वी. रमण एक प्रतिभावान वैज्ञानिक थे। उन्होंने प्रकाश किरणों की गुणधर्मिता तथा आकाश और समुद्र के रंगों की व्याख्या पर विशेष शोध किया। अपने शोध के लिए उन्हें 1930 में नोबेल पुरस्कार भी मिला। सीवी रमन एक प्रतिभाशाली वैज्ञानिक थे। उन्हें विशेष: प्रकाश किरणों के गुणों और आकाश और समुद्र के रंगों को समझाने में रुचि थी। उनके शोध के लिए उन्हें 1930 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

आधुनिक भारतीय विज्ञान युग का समय भारतीय विज्ञान में एक महत्वपूर्ण दौर का प्रतिनिधित्व करता है जिसने विभिन्न क्षेत्रों में अनगिनत विकास को साकार किया। इस युग का प्रारंभ स्वतंत्रता के बाद हुआ जिसने भारतीय वैज्ञानिकों की विश्वस्तर पर एक अलग पहचान बनाई। आधुनिक समय में भारत में विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में नए-नए प्रयोग होते रहे, लेकिन यह कुछ भारतीय वैज्ञानिक उपलब्धियाँ ही थीं, जिन्होंने भारत का नाम पूरी दुनिया में रोशन किया।

अंतरिक्ष अनुसंधान: अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में विक्रम साराभाई का नाम अविस्मरणीय है। जिन्होंने भारत को अंतरिक्ष में पहुंचने का दृष्टिकोण दिखाया। उनकी अद्भुत योजनाओं में से चंद्रयान 2 इसका उदाहरण है जिसने चंद्रमा पर सफलता के साथ लैंडकर नई जानकारियां प्रदान की।

आधुनिक तकनीक: आधुनिक भारतीय विज्ञान युग में तकनीकी क्षेत्र में बडे-बड़े परिवर्तन और उन्नतियां हुई हैं। इसमें हुई इनफॉरमेशन तकनीकी, कंप्यूटर विज्ञान बायोटेक्नोलॉजी और रोबोटिक्स ने भारतीय वैज्ञानिकों को वैश्विक स्तर पर मान्यता प्राप्त करने में मदद की है।

नैनो तकनीक: नैनो तकनीक में राष्ट्रीय नैनो विज्ञान अनुसंधान केंद्र (एनआनएससी) का एक बड़ा योगदान रहा है। नैनो तकनीकी के माध्यम से भारत में विभिन्न क्षेत्रों में सुरक्षित, तेज और विशेषज्ञ तकनीक विकसित की है। जिसमें औषधियों का विक्रयीकरण, जीवन सहायक उपकरण और ऊर्जा संग्रहण का समाधान शामिल है।

ऊर्जा संग्रहण और नई ऊर्जा ऊर्जा स्तोत्र: आधुनिक भारतीय विज्ञान युग में ऊर्जा संग्रहण तकनीकी तकनीक में भी अद्भुत प्रगति हुई है। नए ऊर्जा स्रोतों जैसे-सौर ऊर्जा, वायु ऊर्जा और जल ऊर्जा का उपयोग पर्यावरण की सुरक्षा की दृष्टि से बहुतायत में किया जा रहा है।

निष्कर्ष: भारतीय कला ने साहित्य और विज्ञान के साथ एक सांस्कृतिक संबंध बनाकर वैज्ञानिक विकास को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया है। भारतीय कला, साहित्य और विज्ञान की यह अद्वितीय दास्तां है। यह संगम न केवल भारत को एक अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर देता है बल्कि उसे आगे बढ़कर वैश्विक समृद्धि में भी महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। जहां साहित्य ने विचारशीलता और भावनात्मकता की ऊंचाइयों को छूने का माध्यम प्रदान किया है वही कला ने सौंदर्य और रस को आत्मगत स्वरूप दिया है और विज्ञान ने तकनीकी और अनुसंधान क्षमताओं में विशेषज्ञता प्रदान की है। इस आदित्य स्वरूप ने भारत को गौरवशाली अनुसंधानों, रचनात्मक अभिवृत्तियों और आधुनिक तकनीकी उत्पादकों में प्रमुख बनाकर विश्व को एक सुशिक्षित, समृद्ध और अद्यतन समाज की ओर प्रवृत्त किया है।

भारतीय शिक्षण मंडल (साहित्य सूची)

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	भाषा	दर
1.	धर्मपाल साहित्य : सार संक्षेप	हिन्दी	200.00
2.	भारत में शिक्षा की राजनीति	हिन्दी	100.00
3.	श्रीमंत शंकर देव	हिन्दी	75.00
4.	संगठन गढे चलो	हिन्दी	25.00
5.	परीक्षा दें हँसते हँसते	हिन्दी	25.00
6.	शोधकर्ता कार्यकर्ता	हिन्दी	25.00
7.	परिवार बनें पाठशाला	हिन्दी	25.00
8.	शिक्षक का गुरुत्व	हिन्दी	20.00
9.	शिक्षा हमारी संकल्पना	हिन्दी	20.00
10.	विश्व कल्याण के लिये भारतीय शिक्षा	हिन्दी	20.00
11.	व्रत संकल्प	हिन्दी	10.00
12.	विद्या धनं सर्व धनं प्रदानं	हिन्दी	20.00
13.	Nurturing The Whole Being For the 21st Century	अंग्रेजी	300.00
14.	Social Work in Ancient Hindu Literature	अंग्रेजी	200.00
15.	EQIP	अंग्रेजी	75.00
16.	Blooming Talent	अंग्रेजी	50.00
17.	Let's Build Organization	अंग्रेजी	50.00
18.	धर्मपाल समग्र साहित्य (खंड)	मराठी	3000.00
19.	मूल्य शिक्षा	मराठी	200.00
20.	शोध व बोध (धर्मपाल साहित्य)	मराठी	150.00
21.	सर्वांसाठी सुलभ गणित	मराठी	130.00
22.	संत, समाज आणि शिक्षण	मराठी	125.00
23.	एक अभिनव शैक्षणिक प्रयोग:सिंहावलोकन	मराठी	120.00
24.	भावनात्मक शिक्षण	मराठी	100.00
25.	परीक्षा देऊया हसत खेलत	मराठी	40.00